रूहानी पुरुष

(सूफी संत हरप्रसाद मिश्रा 'उवैसी' का रूहानी व्यक्तित्व)

शिव शर्मा

प्रकाशक
परा वाणी, 217, प्रगति नगर, कोटड़ा, अजमेर

रूहानी पुरुष –

शिव शर्मा
217,प्रगति नगर, कोटड़ा,अजमेर, राज.
मो. 9252270562, 9588927938

प्रथम संस्करण – 2019

मूल्य – 100 रुपये मात्र

प्रकाशक –
परा वाणी, 217,प्रगति नगर,
कोटड़ा, अजमेर

मुद्रक –
निओ ब्लॉक,
पुरानी मण्डी, अजमेर।

अनुक्रम

अभिमत

क्र.	विवरण	पेज न.
1.	जो खुदी से ऊपर उठ गया वह सूफी.....	8–15
2.	अध्यात्म और रूहानियत क्या है.....	16–19
3.	संक्षिप्त जीवनी.....	20–25
4.	आप के गुरु बाबा बादाम शाह.....	26–33
5.	बाहरी व्यक्तित्व.....	34–38
6.	अयम्, आत्मा, खुदा एवं पीर.....	39–46
7.	रूहानी पुरुष – मुरीदों के अनुभव.....	47–56
8.	रूहानी पुरुष – मेरी अनुभूतियां.....	57–75
9.	सृष्टि का पहला रूहानी पुरुष.....	76–80
10.	अब मेरे पीर साहब की बात.....	81–89
11.	सत्संग कक्ष.....	90–112
12.	उवैसिया रूहानी सत्संग आश्रम.....	113
13.	हजरत रामदत्त मिश्रा उवैसी.....	114–116
14.	यह क्रांति का इतिहास है.....	117–119

समर्पण

मधु शर्मा को, जो मेरी सहधर्मा है, सहचर है और लेखन कार्य में मेरी अद्वैत रही है। चालीस वर्षीय लेखन कर्म में भी अनवरत सहभागी रही है - मैं बोलता था, वह लिखती थीं। मै लिखता या कम्प्यूटर करता तो वह अशुद्धियां ठीक करती थी। वाक्य विन्यास संशोधित करती थी मेरे लेख व पुस्तक की प्रथम पाठक व आलोचक मधु ही रही है। मेरे समय की रक्षा करती और अपना समय भी मेरे लिए बचाती आ रही है।

घर गृहस्थी, नौकरी, बच्चे व मेरे लेखन में सहयोग !... इस शक्ति रूपा, सहधर्म रूपा, सहकर्म रूपा स्वयं साध्या का मैं अंतर्मन से आभारी हूँ। मै स्वयं का सारा लेखन मधु शर्मा को अर्पित कर दूं तो भी यह मन नहीं भरेगा।

मेरा शत् शत् आभार !

- शिव शर्मा

अभिमत

आध्यात्मिक विषय पर शिव शर्मा की सोलह (16) पुस्तकों के प्रकाशन के बाद - ''रूहानी पुरुष'' उनकी सत्रहवीं (17) पुस्तक है जो कि परम पूज्य गुरुदेव श्री हरप्रसाद जी मिश्रा ''उवैसी'' के जीवन-परिचय के साथ उनके आध्यात्मिक परिवेश का चित्रण करती है।

लेखक के विचारानुसार - ''अध्यात्म का मतलब है - ईश्वरीय उद्दीपन को समझना उसे जानना तथा उसकी अनुभूति करना। अध्यात्म आत्मा का विज्ञान है, विज्ञान ब्रह्माण्ड व्यापी ध्वनि को सुनता है तो रूहानी पुरुष स्वयं के भीतर अनहद नाद को सुनता है तथा चेतन उर्जा-जनित अनेक शक्तियों का संवाहक हो जाता है, व्यापक अनुभूति कराता है। जिस तरह विज्ञान का प्रायोगिक ज्ञान, उसके विशेषज्ञ/शिक्षक कराते हैं - ठीक उसी तरह अध्यात्म में भी प्रायोगिक ज्ञान गुरु ही कराता है और गुरु से प्राप्त ज्ञान के अनुसार फिर स्वयं को ही उस अनुभूति तक पहुँचना पड़ता है, यह देह से विदेह तक की यात्रा है।''

स्वयं लेखक के ही अनुसार - ''क्या-क्या लिखूं कि मैंने गुरुदेव में क्या-क्या देखा, धरती देखी, आसमान देखा, रूह देखी, रूह का परवान देखा, उनमें बिन्दु देखा, उनमें ही नाद सुना, ज्योति देखी, ज्योति का विस्तार देखा, उनमें ही खुदी देखी और उनमें ही खुदा को दखा'' - इतनी गहराईयों में एक उच्च कोटि का साधक ही उतर सकता है।

प्रो. शिव शर्मा न केवल लेखक व अध्येता रहे हैं अपितु वे उच्च कोटि के साधक भी हैं। उनका लेखन, उनका अपना निजि अनुभवगत है, सप्रमाण है, बाह्य आड़म्बरों से मुक्त, विशुद्ध अनुभूतिगत - जिसे उन्होंने स्वयं देखा है, भोगा है, महसूसा है, साथ ही उनके कारणों - निवारणों को शोधपरक दृष्टिकोण से परखा है, उसके बाद ही उन्हें शब्दों में पिरोया है - इसीलिये उनका सृजन विशेष महत्व रखता है।

उनके व्यक्तित्व सम्बन्धी कुछ बातें जो सभी को प्रभावित कर देती हैं - वह, यह है कि एक उच्च कोटि के लेखक, विद्वान, पौराणिक एवं वर्तमान सभी संदर्भों/प्रसंगों के ज्ञाता, तर्कशक्ति प्रवीण, कुशल वक्ता, उच्च कोटि के साधक होने के बावजूद, उनका सभी से सद् व्यवहार रहता है। यश-प्राप्ति एवं प्रतिभा-प्रदर्शन की चाह से वे मुक्त रहे है, किसी तरह का अभिमान उन्हें छू तक नहीं गया है, केवल और केवल अपने इष्ट पूज्य गुरुदेव की साधना में ही मस्त, तल्लीन साथ ही उनके द्वारा निर्देशित हर बात/निर्देश का ईमानदारी पूर्वक अक्षरसः पालन को ही जीवन का ध्येय बना लिया।

बहुत परखने के बाद, गुरुदेव को भी ऐसा इच्छित जिज्ञासु पात्र मिल गया जो

अध्यात्म/रूहानियत को सिर्फ पढ़कर, सुनकर, देखकर ही नहीं जानना समझना चाहता था बल्कि वह स्वयं अपनी साधना के द्वारा उसे जानना समझना व पाना चाहता था, अनुभूत करना चाहता था, चाहे इसके लिये उसे कितना ही श्रम क्यों न करना पड़े, कितनी ही बाधाओं को पार करना पड़े, उसे स्वयं के अनुभूत सत्य की खोज थी और उसकी इस खोज को गति दी पूज्य गुरुदेव ने। गुरुदेव की कृपावश वह निरन्तर गतिशील बना रहा, जिज्ञासाओं का समाधान पाता रहा, दिव्य/अलौकिक अनुभूतियों को संचित करता रहा, तभी तो गुरुदेव ने यहां तक कह दिया - ''तुम मेरा जुनून हो''। किसी भी साधक के लिये, उसके गुरुदेव द्वारा कहा गया ऐसा उद्‌गार, उसके जीवन का सर्वोत्तम उपहार है, सर्वश्रेष्ठ दुलार है, अनमोल विरासत है, जिसे प्राप्त करना शिष्यत्व की सार्थकता है तथा दुर्लभ वरदान है।

प्रस्तुत पुस्तक में - अध्यात्म/रूहानियत, अयम्, आत्मा, खुदा, पीर, रूहानी पुरुष आदि को सरल व उदाहरण सहित, विज्ञान की कसौटी पर कस के निष्कर्ष प्रस्तुत किया गया है। लेखक पुस्तक के अंतिम अध्याय में लिखते हैं - ''यह एक क्रान्ति का इतिहास है। रूहानी पुरुष हरप्रसाद मिश्रा यानि अजमेर में एक आध्यात्मिक क्रान्ति..... ''यह सांस्कृतिक वैश्वीकरण की दिशा में चलाया गया रूहानी अभियान है.....'' लगता है ये मात्र शब्द नहीं, वरन् किसी सागर के झिलमिलाते आकाशदीप हैं जो पथिकों को उनकी भटकन से बचाने का प्रयास करते हैं और अंत में जहां शब्दों की सभी सीमाएं समाप्त हो जाती हैं, वहीं से आरम्भ होती है - लेखक के प्रति मेरी श्रद्धापूरित शुभकामनाओं की अन्तहीन अनवरत यात्रा। साथ ही पूज्य गुरुदेव के बारे में तो कुछ भी कह पाना मेरे लिये तो किसी गूंगे के गुड़ जैसा ही है :-

अकथ कथा गुरुदेव की, किणविध कही न जाय।
गूंगे रा सुपना हुयी, सुमर-सुमर पछताय।।

मैं गुरुदेव के लिये सिर्फ इतना ही कह सकती हूं -

दृष्टि तुम्हारी पड़ जाये तो, मावस पूनम में ढ़ल जाये,
चरण-कमल से छू दो गर तुम, सहरा उपवन में खिल जाये,
मुस्कादो तो पथ के दुर्गम, पर्वत गंगा बन लहराये,
कर दो एक इशारा तो ये, जड़ भी सब चेतन हो जाये।।

डॉ. शकुन्तला किरण

1. जो खुदी से ऊपर उठ गया वह सूफी

एकेश्वर वादी इस्लाम धर्म में उदारवादी वर्ग को सूफी कहा गया है। इस्लाम यानी जो अल्लाह को मानता है। अल्लाह यानी अल (एक मात्र) अैर इलाह (ईश्वर) - एक ही उपास्य है, ईश्वर। दूसरा कोई नहीं। इस धर्म की शिक्षाएं कुरान नाम की पुस्तक में लिखी हुई हैं। यह किताब अंतिम नबी, रसूल मुहम्मद के हृदय में खुदा ने उतारी थी। इस्लाम का यही आधार है। सूफयानी साफ, बेदाग दिल। सूफी यानी साफदिल वाला उपासक। सूफी एकेश्वर वाद को तो मानता है लेकिन अपने पीर की भी पूजा करता है। अपना सब कुछ उसी को मानता है। सूफीयत का आधार है - ईश्वर की अद्वितीयता, प्रेम, हृदय की निर्मलता और पीर परस्ती। सूफी कहता है कि - पीर ही खुदा, इस का कलंदरी सिलसिला कहता है- न रोजा न ईद; पीर ही रोजा और मुर्शिद ही ईद। यह उवैसिया कहा जाता है।

गुरुदेव सूफी थे। उवैसिया (कलंदरी) शाखा के सूफी। सूफियों की एक शाखा उवैस करनी साहब के नाम से शुरू हुई। वे अरब देश में करनी या कर्नी गांव के थे। उवैस उनका नाम था। हजरत मोहम्मद साहब के समकालीन थे और उनके प्रिय भी। उन्होंने अपना एक कुर्ता उवैस करनी के लिए भेजा, ऐसा कहा जाता है। इस से सिद्ध होता है कि वे ऊंचे दर्जे के फकीर थे।

इस उवैसिया सिलसिले को भारत में आरम्भ करने का श्रेय सुहाब खां साहब को है। वे लाहोर से रामपुर आए थे। रामपुर में इस सिलसिले की पांच दरगाह हैं। दो झांसी में हैं। आठवीं बाबा बादाम शाह की सोमलपुर में ...और नौवीं दरगाह ब्यावर रोड़ पर हजरत हर प्रसाद मिश्रा उवैसी की है। तो मिश्रा जी उवैसिया सूफी थे।

हम यह समझ रहे हैं कि सूफी कौन ? यहां मैं पुस्तकों में लिखी हुई बात नहीं दोहराऊंगा। गुरुदेव को साक्षात देख कर मैने सूफी का अर्थ समझा है। सूफी वह जो खुद की खुदी से ऊपर उठ गया हो। जो मैं से मुक्त हो गया हो। गीता के अनुसार जिस में कर्तापन का अभिमान नहीं बचा है तथा भोक्ता भाव की आसक्ति से भी जो मुक्त हो गया है। गुरुदेव ऐसे ही थे। लोग समस्या ले कर आते और आप कहते कि हुजूर बादामशाह, से प्रार्थना करेंगे। यह कभी नहीं कहा कि जाओ, मै ठीक कर दूंगा। अहंकार था ही नहीं। सूफी तो नत शिर रहता है। अकिंचन भाव से रहता है। सर्व समर्थ होते हुए भी स्वयं को निरीह दिखाता है। सूफी खुद को छिपाए रहता है।

एक वाकया पढ़ने में आता है कि कोई श्रद्धालु सूफी संत की तलाश में घूम रहा था। शहर में भटक रहा था। बहुत दिन बीत गए लेकिन कोई सूफी संत नहीं मिला। एक दिन रिक्शे में बैठ कर जा रहा था। उस रिक्शे वाले से पूछा कि ऐसे संत को जानते हो क्या? उसने कोई पता बता दिया और कह दिया कि इतने बजे वहां चले जाना। एक झोपड़ी में वह संत मिलेगा। जब उक्त आदमी गंतव्य स्थल पर गया तो वहां वही रिक्शावाला बैठा था। उस वक्त उस का रूप बिल्कुल बदला हुआ था। आंखों में नूर और चेहरे पर तेज। वाणी में माधुर्य। सूफी ऐसा होता है। दान नहीं लेता। खुद के भरोसे रहता है।

ऐसा एक और दृष्टांत है - किसी होटल में बर्तन धोने का काम करने वाला ऊंचे दर्जे का सूफी निकला। किसी जमाने में ऐसे फकीर सफेद या काला कम्बल लपेटे रहते थे। कोई कुछ दे देता तो खा लेते अन्यथा भूखे ही रह लेते। अपनी शख्सियत जाहिर नहीं होने देते थे। ....नक्शबंदिया शाखा के मुंशी राम चंद्र जी परमहंस उच्च कोटि के सूफी थे लेकिन उनके पड़ौसी भी लम्बे समय तक असलियत नहीं जान सके।

बात यह है कि जिसका अहंकार मिट गया वह स्वयं की शख्सियत का ढोल कैसे पीटेगा ? भक्त हो या ज्ञानी अथवा योगी ! ये खुद को दिखाते नहीं हैं। इनके व्यक्तित्व की गंध तो अपने आप फैलती है।

हमारे गुरु जी अपने कक्ष में प्रायः बनियान और नीले रंग की लम्बी अण्डरवियर पहिने रहते थे। गर्मी के मौसम में तो बनियान भी उतार देते थे। एकदम सामान्य आदमी की तरह रहते थे। टी.वी. देखते रहते या फिर कहानी किस्से सुनाते रहते थे। किसी से राजनीति की बात करते तो अन्य से शायरी सुनते। कोई कल्पना भी नहीं कर सकता था कि वे ओलिया हैं। ओलिया वह होता है जिसे उसके सिलसिले के गुप्त मंत्र बख्शे जाते हैं। उस का रूहानी सम्पर्क उस शाखा के बुजुर्गों से बना रहता है। वह उनकी शक्ति से काम करता है। जाहिर कुछ नहीं होने देता है।

सूफी खुदा का ख्याल नहीं करता। उसके लिए उसका मुर्शिद ही खुदा होता है। वह अपने गुरु के ध्यान में फना हो जाता है।

तुझ में फना हूं , सबूत आने लगे हैं।
मेरे खत तेरे पते पर जाने लगे हैं।

गुरुदेव स्वयं के पीर बाबा बादामशाह का ही तसव्वुर करते थे। एक दृष्टांत - नक्शबंदिया सिलसिले के हजरत राम चंद्र के मुरीद चतुर्भुज सहाय जी ऐसे ही थे।

उनकी शक्ल उनके मुर्शिद जैसी हो गई। मुंशी जी के घर निर्माण कार्य चल रहा था। ठेकेदार को पैसों की जरूरत थी। चतुर्भुज सहाय बाहर दालान में बैठे थे। ठेकेदार ने उन से पैसे मांगे। तब सहाय साहब ने असलियत का खुलासा किया। .. ऐसे ही मजनू का एक किस्सा है - वह कब्र में था। कोई बुजुर्ग उधर से गुजरे। नजर वाले थे। कब्र पर पाँव पड़ते ही पहचान गए। बोले - मजनू ! मै खुदा का बंदा हूं। कब्र से आवाज आई - आप से मुझे कोई मतलब नहीं। खुदा भी लैला की शक्ल में आए तभी मैं सजदा करूंगा। भले ही यह किस्सा हो लेकिन रूहानी इश्क की सच्चाई को उजागर करता है। ...यूसुफ जुलेखा की बात भी ऐसी ही है। जुलेखा राजकुमारी थी। सूफी थी। यूसुफ से बेइंतहा प्यार करती थी। दोनो बिछुड़ गए। यूसुफ की तलाश में जुलेखा दर दर भटकती रही। सारी दौलत लुटा दी। फिर यूसुफ मिल गया। कहते हैं कि उसने निकाह की बात की। जुलेखा ने इनकार कर दिया - मेरा इश्क रूहानी है, जिस्मानी नहीं।

किसी के ख्याल में फना हो जाना ही रूहानी इश्क है। सूफी ऐसा ही करता है। रूह से रूह का इश्क ही सूफियत है। एकदम चुप। पर्दे में। कोई जान नहीं पाए कि मामला क्या है। एक बार की बात है - सर्दी के दिन थे। बाबा हुजूर की मजार शरीफ को ठण्डे पानी से गुसल करा दिया। उधर आश्रम में हजरत हर प्रसाद को जुकाम लग गया। ऐसी एकरूपता।

मुरीद वह जो अपनी शख्सियत को मार कर यानी भूल कर पीर में मिल जाए अर्थात मानसिक स्तर पर उस से ऐकमेक हो जाए। फिर एक ऐसी अवस्था आती है जब वह पीर को स्वयं में मिला लेता है। उसके अंदर से पीर बोलने लगता है। गीता में कृष्ण अपने भक्त के लिए कहते हैं कि - मेरे भक्त मेरे में और मै उनमें प्रत्यक्ष हूं (नौवां अध्याय, 22 वां श्लोक)। सूफी जिसे इश्क कहते हैं, वैष्णव उसे भक्ति बोलते हैं। दोनो की चरम सीमा एकरूपता है। अभेद है। अद्वय है। द्वैत का मिट जाना ही वैष्णव भक्ति या सूफी प्रेम है।

एक अन्य दृष्टांत - कश्मीर की लल्लेश्वरी या लालदे शिव भक्त थी। उसे शिव तत्व सिद्ध हो गया। कपड़े नहीं पहनती थी। एक स्त्री ने टोका - तू नंगी क्यों रहती है ? वह बोली - ये सारे वृक्ष, पहाड़, नदी तालाब भी तो नंगे ही हैं। क्या तुम्हारा भगवान वस्त्र पहनता है ? जो सारे ब्रह्माण्ड में व्याप्त है उसे कौन सा वस्त्र धारण कराओगी। फिर कहा - मै स्त्री कहां हूं ? मै तो शिव हूं, आत्मा हूं। इसे कहते हैं अद्वय की अवस्था। सूफियत में मुरीद और मुर्शिद अद्वय हो जाते हैं।

ये सब पर्दे में रहते हैं। आजीवन देह के पर्दे में और मृत्यु के बाद समाधि या मजार के पर्दे में। शरीर दिखता है किंतु रुहानियत नहीं दिखती। भक्त नरसीं मेहता, सुदामा, नाम देव, लालदे, मीरा, शम्स तबरेज, मंसूर, आदि की लोग हँसी उड़ाते थे, उन्हें कष्ट देते थे। जब कि ये सब परम सत्ता के साथ एकरूप हो गए थे। सूफी राबिया बसरी को एक अमीर ने बतौर गुलाम खरीद लिया। घर में खूब काम कराता और भोजन भी पूरा नहीं देता। एक रात वह किसी कारण से उठा। देखा कि राबिया की कोठरी में प्रकाश है। मन में शंका हुई कि इतनी रात गए यह औरत क्या कर रही है ? झांक कर देखा तो दंग रह गया। जो देखा उस पर यकीन नहीं हुआ। आंखें फाड़कर पुनः देखा - राबिया जमीन से ऊपर अधर में बैठी है। एकदम स्थिर। इबादत में लीन है। उसके चारों तरफ प्रकाश फैला हुआ है। उस आदमी की रूह कांप गई। अंदर से डर गया। उसने ऐसी इबादत वाली स्त्री के साथ जुल्म किया। अपनी ही नजर में गिर गया। सुबह उसने क्षमा याचना करते हुए राबिया को आजाद कर दिया।..

ऐसा ही मीराबाई के साथ हुआ। उसकी ननद ऊदा तेज स्वभाव की थी। मीरा से द्वेष रखती थी। कहती थी कि भाभी तो रात में किसी मर्द से बातें करती है। उसे रंगे हाथ पकड़ने की नीयत से एक रात जागती रही। मीरा के कक्ष से आवाज आने लगी। ऊदा को आश्चर्य हुआ कि वह जाग रही है फिर भी कोई पुरुष मीरा के कक्ष में कैसे चला गया ? उसने खिड़की की झिर्री से अंदर झांका तो हतप्रभ रह गई। होश उड़ गए। सुधबुध भूल गई। उसने देखा कि साक्षात श्रीकृष्ण भगवान बैठे हुए मीरा से बातें कर रहे हैं। ...अब वह मीरा की अनुचर बन गई। उसकी दुनिया ही बदल गई। सास जिस मीरा को कुल नाशी कहती थी वही ऊदा के लिए श्रद्धेय हो गई। लेकिन मीरा ने कभी नहीं जताया कि वह ऐसी है।

सूफी शम्सतब्रेज, मंसूर एवं सरमद खुदा से एकरूप थे। उन्हें जिस ने देखा वह दीवाना हो गया। नरसीं जी को पागल कहने वालों ने जब सवा करोड़ का मायरा देखा तो समझे कि नरसीं तो प्रभु का अनन्य भक्त है। सूफी राबिया को दर्शन देने के लिए काबा शरीफ खुद चल कर उसके पास पहुंच गया। तब इब्राहिम अद्दहम को यकीन हुआ कि उस से बढ़ कर भी इबादत करने वाले हैं। राबिया प्रति पल अपने अंदर खुदा का नूर देखती थी। एक बार हसन बसरी नाम का सूफी उसके घर गया। बाहर मौसम व वातावरण बहुत सुहावना था। उस ने आवाज लगाई - अरे राबिया ! अंदर क्या कर रही है? बाहर आ; देख कितना खूबसूरत मंजर है। तब वह बोली कि

बाहर कब तक देखते रहोगे ? अंदर देखो ! खुदा का नूर तो वहीं दिखेगा। ऐसा होता है सूफी। वह उसकी, मालिक की रजा में राजी रहता है। जो कुछ है वह उसी का दिया हुआ है - कम है अथवा ज्यादा, यह तो सोच का मुद्दा ही नहीं।

अलमस्त फकीर सरमद नंगा रहता था और कलंदर निजामुल हक रईसी लिबास में नजर आते थे। ...एक फकीर की बात है। बरसों बाद उसे बचपन का साथी मिला। वह कहीं का राजा हो गया था। अपने फकीर मित्र को साथ ले गया। खूब आवभगत की। मखमल के गद्दे पर सुलाया। छप्पन भोग खिलाए। मन में सोचता था कि यह ढोंगी फकीर है - यहां विलासिता का जीवन बिता रहा है। फिर विदा का दिन आया। राजा उसे नगर द्वार तक छोड़ने गया। जब राजा लौटने के लिए पलटा तो फकीर ने हाथ पकड़ लिया ओर बोला - कहां जाते हो ? मेरे साथ ही चलो। अब कुटिया में एक साथ रहेंगे। राजा सकपका गया - ऐसा कैसे हो सकता है? मै यहां का राजा हूं। फकीर बोला - हम दोनों में यही अंतर है। तुम इतने दिन से यही सोच रहे हो कि यहां इतने भोग भोगने वाला यह आदमी (मैं) फकीर कैसे हो गया ? इसी का जवाब है कि मैं यह सब छोड़कर अपनी झोंपड़ी में जा रहा हूं जब कि तुम ऐसा नहीं कर सकते। चलो, थोड़े दिन ही रह लेना। राजा ने सिर झुका लिया- मैं भोग नहीं छोड़ सकता हूं और तुम सब से मुक्त हो। मै समझ गया हूं। ऐसा होता है सूफी, अनासक्त, निर्लिप्त, असंग।

सूफी का दिल, दिमाग, मन आदि सब साफ होता है - कोरे कागज जैसा। चदरिया झीनी रे झीनी...दास कबीर ने ऐसे ओढ़ी, जस की तस धरि दीनि चदरिया- यह सूफीयत है। पानी में मीन पियासी, यह सुण सुण आवै हांसी। घर में वस्तु नजर नहीं आवे, वन वन फिरै उदासी। आतम ग्यान बिना सब झूठा, क्या मथुरा क्या कासी - ऐसी है सूफी की सोच। जिधर देखे, केवल वही है। पीर में भी वही है। खुदा में पीर और पीर में खुदा। गीता में कृष्ण का कथन - मै बर्फ में पानी की तरह सर्व व्याप्त हूं। सूफी खुद के पीर को और भक्त अपने भगवान को सर्वव्यापी देखता है। इसीलिए ये सब से प्रेम करते हैं। सब में वही है तो फिर किसी से भी अलगाव कैसा ? अलगाव है तो फिर वह सूफी या भक्त नहीं है।

सूफी संत मंसूर को ज्ञात था कि वह 'अनहलक' बोलता है, इस कारण कट्टरता वादी मुल्ला मौलवी उसे सूली पर चढ़वा देंगे। फिर उसे आग में जलवा देंगे। उसकी राख को दरिया में बहा देंगे। परिणाम स्वरूप दरिया में बाढ़ आएगी। सारा शहर डूब जाएगा। इसलिए मंसूर ने एक मुरीद को अपनी चादर देते हुए कहा कि

जब मेरी राख दरिया में डालें तब उक्त चादर नदी में फेंक दे। इस से दरिया में जोश नहीं आएगा। सारा शहर तबाह होने से बच जाएगा। शत्रु के प्रति भी मन में मलाल नहीं क्यों कि वह होनी को जानता है। ...और होनी के लिए किसी को भी दोषी नहीं माना जा सकता ।

...गांधारी ने कृष्ण को शाप दिया। कृष्ण मुस्कुराते रहे। उनके धैर्य को देख कर वह रोने लगी। तब कृष्ण ने कहा - माता, यह होनी है जो आपके मुँह से निकली है। इसलिए आप दुखी मत होवो। दशानन महा पंडित था। वह सीता के माध्यम से घटित होनी को जान गया था। इसलिए वैसा सब कुछ होने दिया- होनी को स्वीकार कर लिया। हम लोग होनी के लिए दूसरों को दोष देते हैं और आपस में शत्रु हो जाते हैं। सूफी ऐसा नहीं करता है।

कृष्ण कहते हैं कि तू मेरे भरोसे हो जा, मैं तेरे सारे काम कर दूंगा। सूफी भी अपने पीर के भरोसे रहता है। वह कहता है कि मैंने खुदा को नहीं देखा लेकिन आपको देख रहा हूं। आप में खुदा को देख रहा हूं। ज्ञानी कण-कण में प्रभु की ज्योति को देखता है। योगी सारे कर्म उसी के निमित्त करता है। इस प्रकार ये योगी, ज्ञानी, भक्त और सूफी - सब एक ही हैं। केवल शब्दों का फेर है। इधर ईश्वर, उधर अल्लाह। इधर गुरु उधर पीर। उधर मुरीद, इधर शिष्य। इधर 'अहमंब्रह्मास्मि', उधर 'अनहलक'। ..और दोनो तरफ- प्रेम, निर्मल हृदय, गुरु भक्ति तथा परोपकार। अंतर कहां है ?

सूफी सारे काम खुदा के लिए करता है। उसकी स्वयं की कोई इच्छा नहीं रहती है। इसे स्पष्ट करने के लिए राबिया के जीवन की एक घटना है - वह दिन के समय एक हाथ में लालटेन व दूसरे में पानी की बाल्टी लिये हुए बसरा की सड़क पर चल रही थी। लोगों ने इस का कारण पूछा तो उसने कहा- मै पानी से नर्क की आग को मिटा देना और अग्नि से स्वर्ग की चाहत को जला देना चाहती हूं। लोग नर्क के दुख से बचने के लिए तथा स्वर्ग के सुख हासिल करने की नीयत से इबादत करते हैं। यह गलत है। मै परवर दिगार से कहती हूं कि मेरी नीयत में यदि स्वर्ग का लालच है तो वह कभी मत देना। यदि नर्क से बचने की ख्वाहिश है तो मुझे उस आग में जरूर डालना। गीता में कृष्ण ने इसे निष्काम भक्ति कहा है - अव्यभिचारिणी व अनन्य भक्ति करने वाले मेरे भक्त को मैं प्राप्त हो जाता हूं। उसके लिए योग क्षेम की व्यवस्था करता हूं। निष्काम कर्म तो गीता का शीर्ष श्लोक है। फिर 18 वें अध्याय के 66 वें

श्लोक में कहा कि तू योग, ज्ञान, भक्ति आदि सब कुछ छोड़कर केवल मेरी अनन्य शरण में आ जा। मै तुझे सारे पापों से मुक्त कर दूंगा। शक मत कर। गीता एवं सूफीयत में कहां है अंतर ?

जो कुछ वेद उपनिषद में, वही गीता में। जो गीता में है वही बात सूफी कहता है। जो बात सूफी कहता है वही भारत के सगुण व ज्ञान मार्गी भक्त कहते हैं। परमात्मा बाहर नहीं, हमारे भीतर है - सारे धर्म यही तो समझाते हैं। बाहरी कर्मकाण्ड की अपेक्षा मानस भक्ति ही श्रेष्ठ है - सब ऐसा ही कहते हैं। तब वैष्णव, शैव, सूफी, ज्ञानमार्ग, प्रेम मार्ग आदि की उलझनें क्यों ?

मैने अजमेर के उवैसिया रूहानी आश्रम में देखा- मजार पर फूल माला पेश करते हैं लेकिन शिवरात्रि, जन्माष्टमि, होली, दीवाली की धूम भी मचती है। सूफी होने के कारण सिर पर मुस्लमानी टोपी लगाते हैं और शिवलिंग पर जलधारा चढ़ाते हैं। सिर पर सूफियाना टोपी और कृष्ण के भजन। आस्ताने पर गुम्बद शरीफ तथा परिसर में दीवाली के पटाखे। यह होती है उदारता जो किताबी उदारता से अलग है। आपका परिधान क्या है; कोई मतलब नहीं। आपके सिर पर टोपी है या रुमाल अथवा पगड़ी; कोई मुद्दा नहीं। बस, सिर ढ़का हुआ रहना चाहिये। यह अदब है - सूफी या गैर सूफी की तो बात ही नहीं है। वहां कृष्ण भी काली कमरी वाला तो मुहम्द के भी काली कमरी। जुलेखा, राबिया आदि भी प्रेम दीवानी तो मीरा की दीवानगी के भी कलाम। सफेद हो या केसरिया, हरा हो या लाल - सब में सूफी रंगत।

दसवीं सदी के आरम्भिक सूफी मंसूर अल हल्लाक ध्यानावस्था में अनहलक बोलते थे- मतलब मैं सच हूं। कुछ विद्वानों का कहना है कि यह भारतीय वेद वाक्य अहंब्रह्मास्मि का पर्याय है। जो भी हो, इतना तो स्पष्ट है कि मंसूर पर वेद के दर्शन का असर था। सूफी सरमद अपने अंतिम दौर में वेदांत के प्रभाव में आ गए थे। सूफियों का प्रेम भी भारतीय भक्ति साधना से अलग नहीं है - भाव-श्रद्धा-भक्ति -प्रेम- रति-आनंद। खुद के होश से ऊपर उठ कर भाव में स्थिर होने के बाद भक्ति का आरम्भ होता है। सूफी शब्द की एक व्युत्पत्ति है -सफोस। इसका अर्थ है ज्ञान, सत्य का ज्ञान। परम तत्व की अनुभूति। यह भी वेद उपनिषद की ही बात है। एक शब्द है सफः जिस से सूफी की व्युत्पत्ति मानी जाती है। सफः यानी पवित्र, मन की निर्मलता। कृष्ण ने पांच हजार साल पहले गीता में कह दिया कि तू निर्बैर हो जा;

कुसंग से दूर रह। खुद में दैवीय गुणों का संचय कर यह सारी बात अंदर की पवित्रता ही है। अब सूफियों की पीर परस्ती की बात करें तो गीता के चौथे अध्याय के 33 वें श्लोक में कृष्ण ने अर्जुन से कहा कि तू किसी महात्मा की शरण में जा; उसकी सेवा कर। वह तुझे ब्रह्म विद्या सिखाएगा, आत्म ज्ञान का बोध कराएगा। मतलब यह कि सूफीयत में नया कुछ भी नहीं है। पहले से ही सर्वमान्य आध्यात्मिक अवधारणा को अरबी फारसी भाषा में व्यक्त कर दिया गया है। सारा का सारा वैदिक सत्य है। वेद से पहले का कोई दार्शनिक ग्रंथ अभी अप्राप्य है। यहूदियों का यहोव, इसाईयों का इलोई, मुसलमानों का अल्लाह, पारसियों का अहुरमज्दा और भारतीयों के ईश्वर में क्या अंतर है ? सब के सब इस सर्व शक्तिमान सत्ता के नाम हैं। सब धर्म दर्शन के लोग उसे ज्ञात करने को जीवन की सार्थकता कहते हैं। सब के मार्ग में भक्ति, प्रेम, आत्मज्ञान, मन मस्तिष्क की स्थिरता, संयम आदि पर जोर दिया गया है। असत्य कहीं नहीं है। सत्य हर कहीं है। सौ भाषाओं में पानी के सौ नाम हो सकते हैं लेकिन पानी की तासीर तो एक ही है - प्यास बुझाना। पानी का तत्व तो एक ही है - एचटूओ। यही बात अध्यात्म में भी लागू होती है।

भारत के प्राचीन ऋषियों से ले कर मध्यकालीन सूफियों तक; मध्यकालीन सूफियों व नाथ सिद्धों से ले कर उत्तर मध्यकालीन संतों तक; और उन संतों से ले कर आधुनिक संत महात्माओं तक रूहानियत में कुछ नहीं बदला है। बस, अलग अलग नाम से स्कूलें खुल गई हैं। तालीम सब स्कूलों में एक जैसी है - इंसानियत की, रूहानियत की, खुद में ही खुद को तलाश करने की और स्वयं के मैं से मुक्त होने की। इन चार शब्दों से अलग कहीं कुछ नहीं है। किंतु हजारों ग्रंथ लिखे जा चुके हैं। भेद फिर भी नहीं मिटता। हम ये स्कूलें बंद नहीं करेंगे तो यह भेद, अलगाव, टकराव एवं बिखराव यों ही चलता रहेगा।

विशेष बात - सूफीयत के तीन रूप सामने आये हैं। पहला वह जो रोजे रखता है तथा नमाज पढ़ता है। अस्सी फीसदी सूफी ऐसे ही हैं। दूसरा वह वर्ग जो न रोजे रखता है, न नमाज पढ़ता है। यह कलंदरी शाखा है। तीसरा रूप मैंने यह देखा कि सूफी महफिल में राम कृष्ण के भजन भी गाये जाते हैं । जन्माष्टमी, शिव रात्रि, होली आदि त्यौहार भी मनाये जाते हैं। यह सूफीयत का भारतीय करण है। ऐसा भी कह सकते हैं कि ये लोग वैष्णव सूफी हैं। इस से आगे बढ कर कहें तो - यह मुक्त सूफीवाद है।

2. अध्यात्म या रूहानियत क्या है !

जो तरीका मनुष्य को उसकी देह से ऊपर उठाते हुए रूह तक ले जाए उसे रूहानियत कह सकते हैं। रोजा यानी संयम से इबादत। इबादत से रूहानियत। रूहानियत से अल्लाह अर्थात ईश्वर एक ही है – इस सत्य का बोध। इसकी अनुभूति ही ' मगफिरत ' यानी मोक्ष है। यह बात हमने उर्दू शब्दों का इस्तेमाल करते हुए कही है।

रूहानियत को हिन्दी भाषा में अध्यात्म कहते हैं। जो साधन जीवात्मा से उसका जीव भाव छुड़ा दे उसे अध्यात्म कहते हैं। जिस साधना पद्धति से हमें आत्मानुभूति हो जाए वह अध्यात्म है। जब मनुष्य को यह ज्ञान हो जाता है कि वह देह नहीं, आत्मा है तो वह अध्यात्म में ठहर जाता है। 'निर्वाण अष्टक' में आदि शंकराचार्य ने लिखा है – मै आंख, नाक, कान, मुंह, पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश नहीं हूं; मैं आत्मा हूं। न मैं मुख्य प्राण, पंच प्राण और सप्त धातु (त्वचा, मांस, मेद, रक्त, पेशी, अस्थि, मज्जा) हूं। मै पंच कोश भी नहीं हूं (अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय व आनंदमय)। मैं आनंद रूप हूं। मै पंच विकार (काम, क्रोध, मद, मोह, लोभ) नहीं हूं तथा जीवन के चार प्रयोजन (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) भी नहीं हूं। मैं चैतन्य रूप हूं, शिव हूं। मेरा न पिता है, न माता, न मेरा जन्म है न मेरी मृत्यु होती है। मै आत्मा हूं। मै सब संदेहों से परे, बिना आकार वाला। न मुझ में मुक्ति है न बंधन। मैं चैतन्य हूं, आत्मा हूं, सर्वसमावेशी (सारा संसार मुझ में है) हूं। जो इस सत्य की, इतने व्यापक सत्य की अनुभूति करा दे वही अध्यात्म है। ऐसी बातों को याद कर लेना, फिर दूसरो को सुना देना या किताब में लिख देना – व्यर्थ है यानी ज्ञान नहीं है, अनुभूति नहीं है और न ही अध्यात्म है।

अध्यात्म का बाहरी पूजा पाठ, फूल माला प्रसाद आदि से भी कुछ संबंध नहीं है। यह तो परमात्मा से अंतरंग संबंध जोड़ लेने की विधि है। यह उस चेतन शक्ति की अनुभूति है जो आपकी आत्मा से ले कर समस्त ब्रह्माण्ड में व्याप्त है। इसका मतलब है देह भाव से मुक्त हो जाना, कर्तापन का अभिमान छूट जाना, तेरे मेरे के भेद का मिट जाना।

अब विज्ञान भी इधर ही देख रहा है। भौतिकी के वैज्ञानिक मानने लगे हैं कि संसार का मूल तत्व परमाणु या प्रोटोप्लाज्मा नहीं है; बल्कि मानस द्रव्य है।

वैज्ञानिक दार्शनिक केन विल्बर ने इंटीग्रल थ्योरी ऑफ कांशसनेस दी है। इस में क्वांतम चेतना को सृष्टि का मूल बताया है। परमाणु भौतिकी के विशेषज्ञ अमित गोस्वामी किसी पदार्थ को नहीं अपितु सार्वभोमिक चेतना को सौर अस्तित्व का मूलाधार मानते हैं। ऐसे ही एर्विन लेस्जलो नाम के वैज्ञानिक ने क्वांतम वैक्यूम की अवधारणा प्रस्तुत की है। इसके अनुसार सारे ब्रह्माण्डों (मेटावर्स) को परिभाषित करता है। उधर विज्ञान विद जोंस जींस ने विद्युत तरंग को सृष्टि का मूल माना है। तात्पर्य यह कि अब भौतिकी भी उस चेतन शक्ति की बात कर रही है जो हजारों साल पहले ही हमारे वेद, उपनिषद, पुराण व गीता में लिखी जा चुकी है।

गीता में कृष्ण ने अर्जुन को समझाते हुए कहा कि – तू अर्जुन मत रह, मेरा भक्त हो जा। भक्त होना रूहानियत है। भक्त कैसे होगा? उन्होंनें कहा कि सारी बातें भूल जा। मैं कुंती पुत्र हूं, धनुर्धर हूं, पाण्डव हूं, कौरवों ने हम पर अत्याचार किये हैं, हमें द्रोपदी के अपमान का बदला लेना है आदि आदि। इसका अर्थ यह कि देह से संबंधित सारे रिश्ते नाते, इच्छाएं, वासनाएं, विकार आदि से अलग हट जाने के बाद ही भक्त बना जा सकता है। तब ही अध्यात्म आरम्भ होता है। यह कर्म, ज्ञान एवं भक्ति की चरमावस्था का परिणाम है। अध्यात्म मैं यानी व्यष्टि मैं से शुरू हो कर समष्टि मैं तक पहुंचता है। समष्टि मैं यानी मैं ही ब्रह्माण्ड हूं और ब्रह्माण्ड मुझ में है। अध्यात्म हमें 'अहंब्रह्मास्मि' तक ले जाता है। यह पदार्थ से अपदार्थ तक एवं देह से विदेह तक की यात्रा है। वहां जीव ब्रह्म का भेद नहीं है। न गुरु न शिष्य, न स्त्री न पुरुष, न आकार न निराकार। ऐसी अवस्था तक पहुंच गया मनुष्य ही ' रूहानी पुरुष 'कहा जाता है।

अध्यात्म में अपार्थिव सत्ता का अध्ययन किया जाता है तथा साथ ही उस से जुड़ने की कोशिश की जाती है। विज्ञान तो तंत्रिकाओं की उत्तेजना का विश्लेषण करता है लेकिन अध्यात्म उन उत्तेजनाओं को नाम दे कर उनका बोध कराता है। इसे संज्ञान कहते हैं। मतलब विज्ञान से आगे संज्ञान है। रूहानियत में यही संज्ञान है। अब यों सोचें एक तरफ, विज्ञान में, पदार्थ से परमाणु और उस से आगे ऊर्जाणु तक का ज्ञान है। दूसरी तरफ, अध्यात्म में, जीवाणु, विषाणु, शुक्राणु, अण्डाणु आदि तथा उस से आगे ब्रह्माणु तक ज्ञान की अनुभूति है। विज्ञान तो परमाणु ऊर्जाणु तक अभी पहुंचा है। जब कि ब्रह्माणु की जानकारी हमारे ऋषियों को हजारों वर्ष पहले ही थी।

परमाणु ऊर्जाणु का प्रेक्टीकल विशेषज्ञ प्रोफेसर कराते हैं। ऐसे ही अध्यात्म की ट्रेनिंग आध्यात्मिक गुरु देते हैं। थ्योरी तो ग्रंथों व किताबों में लिखी हुई है किंतु उसका प्रायोगिक ज्ञान तो गुरु ही कराता है। ऐसा प्रायोगिक ज्ञान कराने को ही अध्यात्म कहते हैं। गुरु से प्राप्त ज्ञान के अनुसार फिर स्वयं को उस अनुभूति तक पहुंचना पड़ता है।

यह अध्यात्म में ही बताया गया है कि सर्व प्रथम महा विस्फोट कैसे हुआ ? ..परा एवं अपरा शक्ति अथवा भौतिक एवं चेतन ऊर्जा के संयुक्त महापरमाणु में स्वयंभुव ढंग से विस्फोट हुआ। परिणाम स्वरूप दो ऊर्जा धाराएं निकलीं। परा यानी चेतन धारा और अपरा अर्थात भौतिक ऊर्जा धारा। चूंकि मूल एक ही है, अतः दोनो में एक दूसरे के अंश या ऊर्जाणु विद्यमान हैं। पहली से चौरासी लाख योनियों वाला जीव जगत बना। दूसरी से सम्पूर्ण जड़ प्रकृति या अजीव संसार का सृजन हुआ। यही कारण है कि ब्रह्माण्ड एक तरफ हाईड्रोजन व हीलियम के परमाणुओं सहित न्यूट्रीनों, क्वांतम आदि से भरा हुआ है तो दूसरी ओर जैव ऊर्जा, गुप्त ऊर्जा आदि से भरपूर है।

तीसरी तरफ इन दोनो के बीच का कुछ अवश्य होना चाहिए जो न जड़ है और न ही चेतन अर्थात् अर्द्ध चेतन। वायरस या विषाणु ऐसे ही होते हैं। विषाणु अकोशीय जीव होता है। बाहरी संसार में मृत जैसे रहता है। जब किसी सजीव के सम्पर्क में आ जाता है तो सजीव की तरह व्यवहार करने लगता है। यह नाभिकीय अम्ल एवं प्रोटीन से गठित होता है। जब वायु, भोजन, जल आदि के माध्यम से मनुष्य की कोशिका में चला जाता है तो कमाल करता है। यह कोशिका के डीएनए तथा आरएनए की जेनेटिक संरचना को अपनी जेनेटिक सूचना के द्वारा बदल देता है। फिर वह संक्रमित कोशिका अन्य संक्रमित कोशिकाओं को जनम देती रहती है। फल स्वरूप मनुष्य बीमार हो जाता है। ये विषाणु दो हजार प्रकार के होते हैं। कुछ विषाणु सैकड़ों हजारों साल के जीवित रह लेते हैं। रूस के साईबेरिया क्षेत्र में चार लाख वर्ष का वायरस पाया गया था। वैज्ञानिक ज्ञात करना चाहते हैं कि क्या अत्यधिक शीत से आयु बढती है ? लेकिन प्रश्न यह है कि वायरस में ऐसी शक्ति कहां से आई ? ब्रह्माण्ड व्यापी क्वांतम में गुरुत्व बल किस आधार पर सम्भव है ? परमाणु में नाभिक के चारों ओर चक्कर लगा रहे इलेक्ट्रान को गति किस ने दी ? भौतिकी के वैज्ञानिकों के पास जवाब नहीं है।

ऐसे ही जीवाणु होते हैं। ये एक कोशीय सूक्ष्म जीव होते हैं। कुछ अकेंद्रक भी होते हैं। एक मिलीलीटर पानी में दस लाख जीवाणु होते हैं। पृथ्वी पर पचास प्रतिशत बायोमास (पौधों से मिलने वाली ऊर्जा) या जैव पदार्थ इन जीवाणुओं का ही है। इन में जीव का आधार भी चेतन ऊर्जा ही है। अध्यात्म इतनी व्यापक अनुभूति कराता है।

विज्ञान अब इस चेतन शक्ति को क्वांतम चेतना कहने लगा है। शरीर पदार्थ है। इस में क्वांतम कणों का गुरुत्व बल चेतन ऊर्जा उत्पन्न करते हैं। एक अन्य मत के अनुसार मस्तिष्क में एक जगह कोशिका वर्ग में ट्युबुअल्स यानी नली के आकार वाला रसायन भरा हुआ रहता है। क्वांतम गुरुत्व बल से ये ट्युबुअल्स चेतना उत्पन्न करते हैं। यही आत्मा है। मृत्यु के बाद ये ब्रह्माण्ड में चले जाते हैं। किंतु अभी यह सर्वमान्य नहीं है। यह भी कहा जाता है कि ये कण या लहरों के रूप में सर्व व्यापी हैं लेकिन इनके गुरुत्व बल को चेतना नहीं कहा जा सकता है। प्रोटो प्लाज्मा को जीव द्रव्य मानने वाले विज्ञान के पास इस प्रश्न का जवाब नहीं है कि ऐसे जीव द्रव्यत्व का आधार क्या है ?

अध्यात्म का मतलब है ईश्वरीय उद्दीपन को समझना, उसे जानना और उसकी अनुभूति करना। हमारे अंदर कौन बोलता है ? कृष्ण कहते हैं कि मैं प्रत्येक प्राणी में आत्मा संज्ञा रूप से विद्यमान हूं। तो इस आत्मा रूपी कृष्ण या चेतना की अनुभूति करना। विज्ञान ब्रह्माण्ड व्यापी ध्वनि को सुनता है तो रूहानी पुरुष स्वयं के भीतर अनहद् नाद सुनता है। वह अपने मूलाधार चक्र से ले कर ब्रह्माण्ड तक प्राण ऊर्जा की निरंतरता को समझता है। वह बिग बैंग के एकदम बाद वाली हाईड्रोजन एवं हीलियम गैस से ले कर अरबों खरबों तारों व ग्रहों के पीछे सक्रिय चेतना को देखता है। वह इस चेतन ऊर्जा जनित अनेक शक्तियों का संवाहक हो जाता है। यह आध्यात्मिक अभ्यास से होता है। वह मनुष्य शरीर के सातों स्तर जानता है – स्थूल शरीर, प्राण, सूक्ष्म, मनस, आत्म, कॉस्मिक एवं निर्वाण शरीर। उसे देह के पांच सूक्ष्म कोश भी ज्ञात रहते हैं – अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय और आनंदमय। अध्यात्म हमारी आत्मा का विज्ञान है। अब यह जरूर है कि दोनों का उत्स एक ही है। इसलिए कहीं न कहीं दोनों का संधि स्थल भी अवश्य है। भौतिकता का वह अंतिम बिंदु जहां से अध्यात्म क्षेत्र में छलांग लगाई जा सकती है।

3. संक्षिप्त जीवनी

बात यह है कि अवतार का अवतरण व लीला संवरण होता है। मनुष्य का जन्म और मृत्यु होती है। ऐसे ही संत महात्मा का महा आगमन एवं महाप्रस्थान होता है। मनुष्य को छोड़ कर शेष दोनों रूहानी प्रबंधन के अनुसार दुनिया में आते हैं। अतः जब तक हम उस रूहानी प्रबंधन को नहीं जान लेते तब तक उनसे संबंधित सच को नहीं लिख सकते। इसीलिए सोचता हूं कि गुरुदेव के विषय में क्या क्या लिखूं ? कैसे लिखूं? गिरा अनयन, नयन बिनु बानी। इस से भी आगे – जो रूह ने अनुभव किया उसे शब्दों में कैसे व्यक्त करूं? आकाश को समेटना या दृश्य अदृश्य को बांधना क्या सम्भव है ? लेकिन किताब तो लिखनी ही है।

यहां उनके सांसारिक जीवन का संक्षिप्त परिचय ही दिया जा रहा है क्यों कि संत तो रूहानी होता है। वह कहां जन्मा ? कितना पढ़ा ? क्या काम किया? किस जगह रहता था ? क्या खाता था ? कैसे कपड़े पहिनता था ? ये सब मामूली बातें हैं। सरमद नंगा रहता था। लालदे को पौधों से जो मिल जाता था वही खा लेती थी। कबीर ने स्कूली पढ़ाई नहीं की। मंसूर अल हल्लाज के माता पिता कौन थे, नहीं ज्ञात। फिर भी ये सब रूहानियत की बुलन्दी पर थे। इसलिए हम गुरुदेव का मात्र काम चलाऊ दुनियावी परिचय दे रहे हैं। उनके रूहानी मर्तबे को अवश्य अधिकतम विस्तार देंगे। यह सफाई इस कारण दे रहा हूं कि अनेक लोग केवल रोटी, कपड़ा मकान को ही जीवनी समझते हैं। ऐसे मनुष्य हमें माफ करें। ... अजमेर में एक बस्ती रामगंज है। वहां की अनेक गलियों में एक पत्थर वाली गली है। उसी गली के एक घर में आपका जनम हुआ था।

जन्म दिनांक – 26 अक्टूबर, 1925

पिता – श्री गणेशीलाल, माता – श्रीमती पूनिया देवी।

जाति– मैथिली ब्राह्मण

पत्नी – श्रीमती सुशीला देवी।

परिवार – तीन भाई – श्री पुष्कर नारायण (बड़े), श्री फतहचंद, श्री रजनीकांत। तीन पुत्र व चार पुत्रियां। मंझले पुत्र श्री रामदत्त मिश्रा (पत्नी श्रीमती सुधा मिश्रा) आपके बाद गद्दी नशीन हुए। बड़े पुत्र श्री गुरुदत्त (पत्नी श्रीमती सुमन मिश्रा) व छोटे पुत्र श्री प्रभु दत्त (पत्नी श्रीमती ममता मिश्रा) रेल्वे सेवा से

रिटायर। पुत्रियां- सर्व सुश्री चित्रा, लता, मधु, शशि। पौत्र- श्री मुनेंद्र दत्त (पत्नी श्रीमती बीना मिश्रा) एवं श्री इन्द्र दत्त।

शिक्षा - बारहवीं तक

कार्य - पश्चिमी रेल्वे में क्लर्क; कार्यालय अधीक्षक के पद से सेवा निवृत्त।

अन्य - पहलवानी व क्लासिकल संगीत में वर्चस्व। कर्मचारी नेता।

गुरु - बाबा बादाम शाह कलंदर। दरगाह - दौराई गांव, डूमाड़ा रोड़, अजमेर।

आप बचपन से ही संवेदनशील थे। भक्त प्रह्लाद एवं ध्रुव की कहानियां पढ़ कर रो देते थे। संस्कार में पूजा भक्ति थी। पहलवानी एवं संगीत का शौक था। नेतागिरी का जुनून था। किशोरावस्था में ही अपनी ताई भगवती देवी के गोद चले गए। कर्मठ स्वभाव के थे। अठारह वर्ष की आयु में नौकरी लग गई। विवाह हो गया। गृहस्थी सामान्य ढंग से चलने लगी। लेकिन नसीब में इससे आगे बहुत कुछ था।..

वस्तुतः संत के जन्म से पहले ही उसके वजूद का रूहानी प्रबंधन हो जाता है। झांसी के हजरत निजामुल हक साहब ने ऐसा ही किया। वे आपके पीर बाबा बादाम शाह के गुरु थे। आप उवैसिया ज्योति को अजमेर में रौशन करना चाहते थे। क्यों ? इसलिए कि यह नगर द्वापर युग से ही साधना भूमि रहा है। इस जिले में देवी शक्ति के 52 मंदिर रहे हैं। निकटवर्ती खुंडियास क्षेत्र में कभी 128 झालरें बजती थीं। इसी शहर में विश्व विख्यात सूफी संत ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती की दरगाह है। जैन संत जिनदत्त सूरी ने यहां दादा बाड़ी स्थापित की जो आज तक विद्यमान है। ऐसी अनेक बातें उन्हें ज्ञात थीं। इसीलिए निजामुल हक साहब ने पहले बाबा बादामशाह को अजमेर में ही साधना पूरी कराई तथा यहीं रूहानी मुकाम बनाने के लिए कहा। यह 1920 -34 की बात है। उधर 1925 ई. में ही बादामशाह साहब के भावी उत्तराधिकारी हजरत हर प्रसाद मिश्रा का जन्म हुआ। दादा साहब जानते थे कि ऐसा हो चुका है जो भविष्य में साकार होना है। उनके दो परम शिष्य थे - हाफिज इब्राहिम मोहम्मद एवं कलंदर बादाम शाह। हाफिज साहब को झांसी में रखा और दूसरे को अजमेर सुपुर्द किया।

दादा साहब अनेक बार अजमेर आए। वे यहां की आध्यात्मिक तरंगों को पढ़ते थे, समझते थे, विश्लेषण करते थे। यह सब इसलिए कि यहां उवैसिया सूफी

दरगाह स्थापित होनी थी। बाबा हुजूर को उन्होंनें इस लायक बनाया। हरप्रसाद जी की पिछले जन्मों वाली रूहानी यात्रा उन्होंने देख ली। समझ लिया कि वे किस ऊंचाई का स्पर्श करेंगे। मिश्राजी बड़े हो रहे थे और दादा साहब की रूहानी नजर उन्हें लगातार देख रही थी। इस गुपचुप खेल को बाबा हुजूर के अलावा अन्य कोई नहीं जानता था। यही कारण है कि मात्र 27 वर्ष की उम्र में ही बाबा साहब ने मिश्राजी को पकड़ लिया।

तो बात मिश्राजी के जन्म की चल रही है। उनका जन्म यहीं होना था। यह आध्यात्मिक होनी थी जिसे टाला नहीं जा सकता था। एक बार बाबा साहब एवं दादा हुजूर में बात हो रही थी। दादा साहब बोले कि जानते हो ! तुम्हें हमने यहां क्यों बिठाया है ? बेटे, यह पहाड़ी इस शहर का बहुत मजबूत रूहानी सर्किल है। जो यहां बैठेगा, तसव्वुफ का शहंशाह होगा। हुजूर सिर झुकाए चुप रहे। दादा साहब ने उनकी पीठ थपथपाई और हँस दिए।

समय ने करवट बदली। गुरु ने शिष्य को अपनी तरफ खींचा। घटनाओं का अनुकूल संयोजन हुआ। एक मुरीद ओम जी के घर में हुजूर ठहरे हुए थे। वहीं मिश्रा जी की अपने पीर से पहली भेंट हुई। बाहर एक आवाज उठी कि आप भी कुछ मांग लीजिए। मिश्रा जी ने जवाब दिया - मेहनत की दाल रोटी मिल रही है; और कुछ नहीं चाहिए। हुजूर मुस्कराए। मन में परा वाणी गूंजी - यही है अनासक्ति जो बुलंदी तक पहुंचेगी। और बातों का तनिक भी महत्व नहीं है। चुपचाप दृष्टिपात हुआ। अंदर की रूहानी ऊर्जा झनझनाई और मीठा नशा बन कर फैलने लगी। हुजूर तब सोमलपुर वाले स्थान पर पहुंच चुके थे। शहर में आते जाते रहते थे। सूक्ष्माकाश में एक ज्योतिर्मय त्रिकोण बनने लगा - झांसी, रामगंज और सोमलपुर। आकाश में सप्तऋषि मंडल की तरह रूहानियत में आकृति उभरने लगी - सब से ऊपर सुहाब खां साहब एवं नीचे बादामशाह कलंदर के पीछे चलते हुए हमारे पीर साहब। घर में और ऑफिस में हुजूर के ठिकाने वाली पहाड़ी दिखने लगी। कोई मधुर सा नाद सुनाई देता रहता। नाम दीक्षा की घड़ी नजदीक आने लगी। ...और एक दिन बेसुधि में खिंचते हुए उस एनर्जी सर्किल की तरफ चल दिये। अंदर पश्यंती वाणी फूटी; उद्धार करो। बाहर आश्वासन मिला - हम तुम्हें यहां और वहां, दोनों जगह निभाएंगे। अब ऊर्जापात हुआ। चरणबद्ध चली आ रही उवैसिया चेतना मिश्रा जी के हृदय में जुड़ गई। सिलसिले का सिद्ध मंत्र मिला। दादा साहब का रूहानी प्रबंधन एक्टीवेट हो गया।

रूहानी जीवनी आरम्भ हो गई। आपके अंदर मौन बढ़ने लगा। बाहर के काम स्वतः होने लगे। कार्यालय में प्रत्यक्षतः कलम चलती रहती और भीतर आध्यात्मिक चढ़ाई होती रहती थी। दिन कर्तव्य के नाम एवं रात में मालिक का काम। चिदाकाश में पीर - मुरीद साथ साथ रहने लगे। बाहर कुछ खास नहीं हो रहा था लेकिन आज्ञा चक्र में उजाला बढ़ता रहा। इधर बाल बच्चे बड़े होते रहे; उधर नाद के पर्दे खुलते रहे।

आप प्रति शनिवार की रात हुजूर की शरण में रहते। सोते नहीं, जागते रहते। जब भी आवाज आती कि 'नेताजी'- आप बोलते - जी हुजूर ! जो जागा उसने पाया। जो सोया उसने खोया। हुजूर योग निंद्रा में रहते थे और नेताजी पर गुजरान होते रहते थे। सन् 1957 -58 की एक रात आपके जीवन में रूहानी कीर्ति स्तम्भ जैसी बन गई। हुआ यह कि पूनम की रात थी। लगभग दो बजे के बाद अचानक ही आपका ध्यान टूटा। बाहर देखा तो विस्मित रह गये। पहाड़ से स्थान के दालान तक पीताभ श्वेत प्रकाश फैला हुआ था। सफेद पोश अनेक बुजुर्ग दिव्य रूपेण हवा में अधर बैठे हुए थे। हुजूर वहां खड़े थे जहां आज बड़ के पेड़ वाला दालान है। तभी परा वाणी सुनाई दी - ब्राह्मण हो ?' जी जन्म से ; कर्म से उस दशा में पहुंचना अभी बाकी है'। रुहानी रास्ते पर क्यों आए हो ?' मृत्यु की गुलामी से आजाद होने के लिये। शाबाश। ...और तत्काल सब कुछ गायब हो गया। बाहर से हुजूर ने आवाज लगाई नेता जी बेटा ! पानी लाओ। आप जल का लोटा ले कर उनके पास गए। पानी पी कर हुजूर ने बचा हुआ जल आप पर छिड़क दिया ओर बोले लो अब तुम फैलो, हम खुद को समेटेंगे। नाम दान देना शुरु करो।

हुजूर जहां भी जाते, आपको साथ ले जाते थे। यात्रा के दौरान मंत्र दे देते। अध्यात्म की बारीकियां समझाते। झांसी के हाफिज साहब आपको पहले ही स्वीकार कर चुके थे। स्थान पर श्रद्धालुओं की आवक बढ गई। श्रमदान से कार्य चलता रहता। दादा साहब का भण्डारा होता था। हुजूर के सारे दुनियावी काम का जिम्मा गुरुदेव ने ले लिया। इस बीच आपकी पत्नी को भी बाबा साहब ने रूहानी राह पर लगा दिया।

बीच में एक अन्य आध्यात्मिक घटना हुई - आप हुजूर की आज्ञा से झांसी गए थे। वहां हजरत हाफिज इब्राहिम साहब के कदमों में प्रणाम किया। उन्होंनें एक पपीता उठाया। उसकी फांक काट कर आपको दी। आप ने चखी तो लगा कि फल

बहुत खारा है। ...लेकिन चुपचाप उक्त फांक खा गए। हजरत ने पूछा कि कैसा है ? अब परीक्षा की घड़ी थी। वे सिद्ध या कामिल फकीर थे। बाबा साहब ने एक बार उनकी शान में कहा था कि मैंने तो आप में ही अल्लाह को देखा है। इस से अनुमान लगा लीजिए कि वे कितने ऊंचे मर्तबे के संत थे। उन्होंनें पूछा कि पपीता कैसा है! तो जरूर कोई बात होगी। गुरुदेव के अंदर तो बाबा साहब रहते थे। सामान्य आदमी तो सहज भाव से कह देता कि खारा है लेकिन मिश्राजी सामान्य नहीं थे। अत: बोले कि अच्छा (मीठा) है। तब हजरत ने फरमाया, तो पूरा खा लो, हो गया काम। जिनकी नजर से मिठाई प्रसाद बन जाती है उनके हाथ से दिये हुए पपीते में कैसी तासीर होगी! बाबा साहब ने जिस मकसद से 'नेताजी' को झांसी भेजा था वह पूरा हो गया। एक पपीते से रुहानियत उतरी और हुजूर के जांनशीं में रोशन हो गई ।

इसी से संबंधित एक अन्य दृष्टांत है - बाबा साहब अपने नेताजी को ले कर झांसी गए थे। अन्य मुरीद भी थे। सुबह फातिहा लगाने की तैयारी हो चुकी थी। हाफिज साहिब का इंतजार था। वे पधारे। गद्दी पर बैठ गए। अदब इतना कि सब के सब निशब्द। थोड़ा वक्त बीता। बाबा साहब ने नेताजी को कहा कि बेटा, प्रसाद बांटो। नेताजी असमंजस में कि अभी फातिहा तो लगा ही नहीं। हुजूर बोले - अरे ! सरकार ने देख लिया; बस, हो गया फातिहा इनकी नजर में ही प्रसाद का नूर है। ऐसे हाफिज साहब ने उस दिन मिश्रा जी पर करम किया था।

अब घर गृहस्थी, ऑफिस, पीर की सेवा, खुद की साधना एवं आने जाने वालों के 'काम' साथ साथ चलने लगे। हर जगह, हर पल रूहानी शक्तियां साथ रहने लगीं। पीर ने पग पग पर परीक्षाएं लीं और पास भी कराते गए। खुद के ही भविष्य का खुद ही इम्तिहान लेते थे ! होनी के प्रबंधन को 'अंजाम' देते थे। ...और फिर उसी पीर के प्रस्थान का समय आ गया। छब्बीस नवम्बर, 1965 के दिन बाबा हुजूर ने पर्दा फरमाया। मुरीदों के आंसू, सुबकियां, रोदन के साथ स्थान की पहाड़ी ने भी अदृश्य शोक सभा की थी।

बे आवाज सुबकियों में डूबे हुए गुरुदेव को हुजूर के रूहानी दर्शन हुए और हिदायत मिली कि रोना बंद करो। आगे बढ़ो। इबादत के उस मुकाम को हासिल करो जहां यह सिलसिला तुम्हें देखना चाहता है। अब श्रमदान का दौर चला। पहाड़ी पग डण्डियों को रास्ते का रूप दिया जो बाद में सरकार ने पक्का करा दिया। आपने अपने पीर के आस्ताने पर नयनाभिराम दरगाह बनवाई। ब्यावर रोड़ पर

उवैसिया रूहानी सत्संग आश्रम बनवाया। चेरिटेबल अस्पताल आरम्भ किया। यहां रोग निवारण कैंप आयोजित होते रहते थे । आपकी रूहानी नजर से मुरीद तैयार होने लगे। परिवार में सब पुत्र पुत्रियों के विवाह सम्पन्न हो गए। रेल्वे से सेवा निवृत्त हो गए। घर एवं दरगाह, दोनो ही इबादतगाह बन गए। फिर आश्रम स्थापित किया और वहीं रहने लगे। स्थान पर खिदमत का दायित्व छोटे भाई श्री रजनीकांत मिश्रा को सौंपा गया।

आपकी उपस्थिति से आश्रम रूहानी हो गया। प्रतिदिन सत्संग होने लगा। पुस्तकालय खोला। उसी को आगे चल कर शोध संस्थान का रूप दिया- बाबा बादामशाह आध्यात्मिक शोध संस्थान। अध्ययन, इबादत, सत्संग, सेवाधर्म, और 'मिशन' - आश्रम की धड़कन बन गए। लगभग दो सौ परिवार जुड़ गए। शहर में आपकी नजर के कमाल और जलाल के किस्से फैलने लगे। प्रति दूसरे शनिवार की शाम आश्रम में ध्यान शिविर का आयोजन करते थे। आप थे तो आश्रम सजीव था।

4. आपके गुरु बाबा बादाम शाह

एक फकीर जैसे जीवित रूहानी लकीर - ऐसा शेख, जो नजर से करम कर दे। तकदीर को पढ़ ले और पन्ने इधर उधर कर दे। अच्छाई को बुलन्दी तक चढ़ा दे; बुराई को जमींदोज कर दे। पास बैठो तो लगे कि जन्नत की हवा आ रही है। याद करो तो जैसे संदली सदा बुला रही है। वह कलंदर कहता था कि मेरी चौखट को चूमने वाला खाली हाथ नहीं जाएगा। उसके रोजे में आज भी उसका कथन गूंजता है - बा अदब, बा नसीब; बे अदब, बे नसीब।

ऐसे थे गुरुदेव के पीर साहब, बाबा बादाम शाह कलंदर। आप दादा हुजूर निजामुल हक कलंदर के शिष्य थे जिन की दरगाह झाँसी में है। बादाम शाह की दरगाह सोमलपुर, अजमेर में है - छोटे ताजमहल जैसी खूबसूरत। गुरुदेव की अपने गुरु के प्रति श्रद्धा का साकार रूप।

आपका जनम उत्तरप्रदेश में मैनपुरी जिले के गालव गांव में हुआ था। घर में दो भाई व एक बहिन थे। हालात तंग किंतु हौसला बुलंद। शिक्षा सामान्य। अस्पताल में मामूली नौकरी। फिर फौज में चले गए। एक बार लौट कर आए तो बड़ी बहिन ने कहा - प्रेमदास नाम का साधु आया हुआ है। गजब का है। मेरी बच्ची की बीमारी ठीक कर दी। आप वहां गए। प्रणाम किया। अंदर से नियति ने करवट ली। होनी सामने आ गई। बाबा ने दृष्टिपात किया। सुप्त संस्कार उद्‌भुत हुए। बादाम शाह के चारों तरफ एक आलोक वलय बन गया। प्रवृत्ति मुड़ गई - भौतिकता से अध्यात्म की ओर। पत्नी छूटी। घर पीछे रह गया। खुदी ने रूहानी अजान सुन ली। नज्जूशाह और बरफी देवी का बादाम खुदी से बाहर निकल गया।

प्रेमदास बाबा के साथ दस वर्ष तक रहे। योग सीखा। श्वास का प्रबंधन जाना। औषध वनस्पतियों का ज्ञान प्राप्त किया। जादू के करतब आ गए। एक बार की बात है - कुएं पर कोई औरत बैठी रो रही थी। उसका बच्चा कहीं खो गया। प्रेमदास जी ने इशारा किया - इस की मदद करो। साधक बादाम शाह ने बता दिया कि अमुक बगीचे में बैंच पर बैठा रो रहा है। बच्चा वहां मिल गया। ऐसे ही एक रात आप साधना में श्वास का आरोहण कर रहे थे। आज्ञा चक्र चमक रहा था। बाबा ने देखा। उस समय कुछ नहीं बोले। दूसरे दिन कहा - अब तुम अपने पीर के पास जाओ। शाह बोले - मैं तो आपकी ही शरण में रहना चाहता हूं। बाबा का जवाब -

नहीं, हमने हमारे हिस्से का काम कर दिया। अब अजमेर जाओ। वहां ख्वाजा मुईनुद्दीन की दरगाह के आसपास तुम्हारे पीर मिलेंगे। रईसी लिबास में होंगे। वे खुद तुम्हें खींच लेंगे।

फिर अनुनय विनय, आंसू, विदा। साधक बादामशाह अजमेर आ गए। उन दिनों यह शहर बहुत सिमटा हुआ था। भोजन के लिए कर्म, इबादत, पीर के प्रति जिज्ञासा ये सब साथ साथ चलते रहे। एक दिन सुना कि अंदर कोट क्षेत्र में कोई ऊंचे फकीर आये हुए हैं। लोगों से बात की तो नाम ज्ञात हुआ, हजरत निजामुल हक और हकीम साहब की हवेली में ठहरे हुए हैं। बेखुदी में चलते हुए वहां पहुंच गये। सामने जाते ही दिलो दिमाग में जैसे तड़ितपात हो गया। दादा साहब को बाबा प्रेमदास से जो संदेश मिला था वह कौंध गया - रूह में 'अगन' (तेज) है, देह में दम है और दिल में लगन है। खुद ने भी क्षण भर में सब कुछ जान लिया। पूछा - क्या चाहते हो ? जवाब - जी आप को चाहता हूं। दादा साहब - सोच लो। बादाम शाह - जी, सोच कर ही हाजिर हुआ हूं। ' तपते पहाड़ पर नंगे पांव चलना पड़ेगा !'' इतना नहीं जानता। आप के कदमों में जगह दे दें, बस इतनी सी इल्तजा है'। मतलब कि अब सब कुछ हमारा है; तुम्हारा कुछ नहीं ? 'जी, इस शरीर की सांसें आपकी ही हैं'।.....फिर नाम दान के बाद आदेश हुआ - नाग पहाड़ की गुफा में जाओ। जब तक हम नहीं बुलाएं, मत आना। ..जान ढ़ेरी या माल ढ़ेरी। तब टाट का एक टुकड़ा उठाया, पीर को प्रणाम किया और इस शहर का रूहानी भविष्य वहां से आगे बढ़ गया।

बड़ा कठिन काम था। लगभग 90 साल पहले वाले अजमेर की पहाड़ियों की कल्पना थर्रा देती है - नाग पहाड़ में शेर चीते घूमते थे। कड़ाके की सर्दी। गर्मी में तपती हुई चट्टानें। बारिश में तीन तीन माह तक झड़ी। फिर आपके पास ओढ़ने के लिए रजाई नहीं। बिछाने के लिए केवल फटा हुआ टाट। खाने के लिए प्रतिदिन एक छटांक जौ का दलिया। पीने के लिये काली चाय। लगातार नौ वर्ष ऐसा ही रहा।

पुष्कर जाने वाली नौसर घाटी पूरी चढ़ कर जब ढलान आता है तो बायीं तरफ वाली पहाड़ी पर चढ़ जाएं। वहीं कहीं एक खोह यानी छोटी सी गुफा थी। आप जब प्रथम दिन वहां गये तो दूर से ही गुफा रोशन दिखी। आसपास प्रकाश पुंज हवा में तैरते हुए। जैसे पीर दादा साहब की गुनगुनाहट सुनाई दी - आओ बादाम ! वक्त तुम्हारा इंतजार कर रहा है। आप धन्य हुए। पहले दिन ही याद आया गुरु का कथन - याद रखना ! मुरीद का रूहानी जुनून ही उसे आगे बढाता है । पीर तो सपोर्ट करता है।

दिन बीते, माह बीते। तीन साल बीत गए। अब उनकी इबादत का ओरा फैलने लगा - जंगली जानवर रात होते ही गुफा के आसपास बैठ जाते, मानो पहरा दे रहे हों। सुबह चले जाते। घाटी में भजन और कलाम सुनाई देते। कभी ऐसा लगता जैसे नाग पहाड़ पर श्लोक सरसरा रहे हैं। ब्रह्म मुहूर्त में सिद्धात्माओं के दर्शन हो जाते। ..एक दिन की बात है - कोई स्त्री भूरे रंग का पेय ले कर आई। वह बोली - बाबा यह पी लो; सात दिन भूख नहीं लगेगी। आप समझ गए कि सोमलता का रस है। उसने पुनः कहा - मैं रुक्मी हूं। पहाड़ में साधुओं की सेवा करती हूं।

धीरे धीरे बात फैलने लगी। श्रद्धालुओं का आना जाना आरम्भ हो गया। रात के समय घाटी से गुजरने वालों को ऊंचाई पर रोशनी दिखती थी। दिन में आप पहाड़ से जड़ी बूटियां लाते थे। रोग मिटते थे। रात पूरी की पूरी साधना में व्यतीत होती। मुर्शिद का करम कि वह गुफा वातानुकूलित रहती थी - न ठण्ड, न गर्मी। न बारिश का प्रकोप, न शेर चीतों का आतंक। पीर का व अन्य बुजुर्गों का रूहानी वजूद सारी रात महसूस होता रहता था।

एक बार आप बीमार हो गए। बहुत तेज बुखार। हिम्मत टूटने लगी लेकिन पीर का आदेश याद आ गया कि हम नहीं बुलाएं तब तक नीचे मत उतरना। सोच लिया कि मौत भी उस आदेश के सामने छोटी है। बस, हो गई परीक्षा। रात के वक्त एक धमाका हुआ - रोशनी चमकी, आवाज गूंजी कि घबराओं नहीं; हम हैं। सुबह एकदम ठीक हो गए। .. जब साधना छः बरस की हो गई तो पहाडियां छः हजार साल का इतिहास बताने लगीं - पुष्कर में ऋषियों का आना जाना, तपस्या करना। ऋषिका देवहूति, विश्वामित्र, गालव, मार्कण्डेय आदि के रूहानी दर्शन हुए। इच्छाधारी जोगी भर्तृहरि और अजयपाल बाबा की कृपा हुई। घोड़ों पर सवार सैनिक दिखते रहते थे। घाटी में अनेक तरह की आवाजें गूंजती थीं। पास वाली पहाड़ी पर दूधाहारी बाबा के डेरे पर आध्यात्मिक जलवे दिखते थे। एक बार आप ने खुद को आकाश में ऊपर उठे हुए पाया और महसूस किया कि चारों तरफ के मंदिर, मस्जिद, दरगाह, चर्च, गुरुद्वारे आदि दिख रहे हैं। चूने पत्थर के नहीं, उजाले के जर्रों से बने हुए। सूक्ष्म शरीर से बाहर निकलने का वह पहला अनुभव था। फिर दादा हुजूर की आवाज आई - शाबाश बेटे।

जैसे जैसे इबादत पूर्णता की ओर बढ़ती जा रही थी, वैसे वैसे आसमान में संचित भूत भविष्य की घटनाएं मानस या चिदाकाश में डाउनलोड होने लगीं।

समाधी लगने लगी। पूरी रात मिनटों में बीत जाती। चेहरे पर तेज बढ़ने लगा। आसपास खुशबू फैले रहती। पशु पक्षी बैठे रहते, हटते ही नहीं। गुफा का एरिया गर्मी की धूप में भी शीतल रहता था। मस्ती चढ़ी रहती, उतरती ही नहीं। तब किसी दिन ऐसी ही मस्ती में जागती आँखों से एक आदमी को (गुरुदेव का पूर्व जन्म) आकाश से उतरते हुए देखा। सफेद कमीज - पायजामें के साथ काली टोपी। गोरा वर्ण। हाथ में लकड़ी लेकिन कमर एकदम सीधी। फिर कान में दादा हुजूर की आवाज वाली फुसफुसाहट हुई - यही तुम्हारा जांनशीं होगा। इस जन्म में इसे आखिरी मुकाम तक ले जाना है। आगे तुम्हें इस का अता पता सब दिख जाएगा। यही जनाब अगले जन्म में हजरत हर प्रसाद मिश्रा के रूप में प्रतिष्ठित हुए।

आप उवैसिया सूफी थे। ...हुआ यों कि उजली रात का गुरुवार था। आप ध्यानस्थ थे। तभी जैसे सारे जगत में उजाला भर गया। एक परा वाणी उभरने लगी। साथ ही एक फकीर का वजूद सामने आया - ये उवैस करणी हैं, इस सिलसिले के आक़ा। आपकी नसीहत है - चुप रहो, एक वक्त रोटी खाओ। यहाँ से आगे बढे....ये हजरत सुहाब खां हैं। हिंदोस्तान में उवैसिया सूफियत के बादशाह। आप फरमाते हैं कि पर्दे में रहो, खामोशी को ओढ़े रहो। ..आप हैं हजरत अल्लानूर खाँ; कहते थे कि पीर के कदमों में सारी कायनात देखो। ..इन्हें गौर से देखो ...मौलाना सैयद सुभानशाह हैं; न मान न गुमान, न कोई तेरा , मेरा। अब देखो- रूहानी शहंशाह लक्ष्मण दास और सुनो इनकी बात - फकीर खुद की मौत को भी मार देता है । उसका वापस जन्म नहीं होता और तब मृत्यु कैसी ? ..आप हैं मौलाना सैय्यदना मोहम्मद गुल खां; यह नसीहत दे गये हैं कि पीरोमुर्शिद को उसके जांनशीं में देखो। और यह देखो तुम्हारे पीर साहब का रूहानी रुतबा - जमीन से आसमान तक चमकती ज्योति ! ..आपने फरमाया है कि कहीं भी ठहरो मत। जो पकड़ में आ जाए वह कैसा फकीर ? अब ये जो सिर झुकाए हुए बेखुदी में हैं इनका नाम हजरत हाफिज मोहम्मद इब्राहीम है। आपका अदब बुलन्द है - पीर के सामने सिर उठा कर बात मत करो; जो कुछ कहना है सिर झुकाए हुए कहो। ....जहां तुम बैठे हो वहां का जर्रा जर्रा रौशन है। जितना खींच सकते हो खींच लो। बस, समाधि टूटी और हुजूर सिजदे में झुक गए। आप के लिए हाफिज साहब ने फरमाया कि इस कलंदर को किसी हिदायत की जरूरत नहीं। हमारे पीरोमुर्शिद ने सारी हिदायतें इस के भीतर चस्पा कर दी हैं। सब कुछ इस के अंदर है।

आपका कसरती बदन था। पहलवानी करते थे। आंखों में सरलता। व्यवहार में आत्मीयता। कठोर तप किया। भूख, प्यास और स्वाद पर अंकुश लगाया। शुरुआत में जब सोमलपुर आए तो तपती हुई चट्टान पर एक छाता लगा कर बैठते थे। यह काया का तप था। मन के तप का आलम ऐसा कि पूरी रात इबादत में बीत जाती थी। यहां का पहाड़ी जंगल उनका दोस्त बन गया। शेर चीते पास बैठ जाते थे। वनस्पतियां बात करती थीं। पहाड़ बोलते थे। सामने आने वाले का मन अनुकूल हो जाता था। अधिकारियों के लिए आपकी बात ही आदेश हो जाती थी। एक से बढ़ कर एक उस्ताद आते थे। सबकी असलियत जानते हुए भी उनके साथ मुस्कराते हुए व्यवहार करते थे।

सब कुछ सत्य है, चमत्कार नहीं

अन्य फकीरों की तरह आपने भी अनेक चमत्कार दिखाए। जादू जानते थे। सिद्धियां हाथ में थीं। नौकरी लगा दी, व्यापार चला दिया, बीमारी ठीक कर दी, मुकदमा जिता दिया। सम्भावित होनी को पहले ही देख लेते थे और सावधान कर देते थे। आप बहुत बड़े तांत्रिक थे। प्रेत बाधा का अचूक इलाज कर देते थे। अपने ठिकाने को तांत्रिक तरंगों से बांध रखा था। इसलिए भटकती हुई रूहें वहां प्रवेश नहीं कर पाती थीं। सत्य बात तो यह है कि रूहानियत की बुलंदी पर बैठा हुआ फकीर चमत्कार नहीं दिखाता है। उसकी उपस्थिति से अनेक ऐसे काम स्वत: ही हो जाते हैं जिन्हें लोग चमत्कार मान लेते हैं - सिद्ध स्थान पर जाने से कई बार कुछ काम हो जाते हैं और वहां शांति मिलती है। यह चमत्कार नहीं है। ऐसे स्थानों पर कॉस्मिक एनर्जी का सूक्ष्म जाल रहता है। इसी कारण मन शांत हो जाता है तथा उसके रूहानी प्रभाव से कुछ काम हो जाते हैं। जिस तरह विषाणु आपके अंदर प्रवेश करते ही आपको बीमार कर देते हैं; ऐसे ही ये सूक्ष्म तरंगें आपके अंदर जा कर ऐसे बदलाव लाती हैं कि आपके कर्माणु प्रतिफलित हो जाते हैं।.....किसी के लिए मंत्री ने जिलाधीश को फोन किया तो उसका काम हो गया। ऐसे ही देव स्थान पर जो रूहानी तरंग तुम्हारे भीतर आ गई थी उसने कलॅक्टर (जैसे ही तुम उसके पास गए) के अंदर तुम्हारे लिए सकारात्मक सोच पैदा कर दी। बस, तुम्हारा काम हो गया। कई बार संत के पास जाने से भी ऐसा हो जाता है।

बाबा हुजूर कहते थे कि जो हमारी चौखट को चूम लेगा वह खाली हाथ नहीं लौटेगा। इसके दो कारण हैं - पहला तो यह कि उन्होंनें यहां कठोर तपस्या की

थी। उस तपस्या की रूहानी तरंगें जब तक यहां सक्रिय रहेंगी तब तक यहां आने वाले श्रद्धालुओं को लाभ होता रहेगा। दूसरा कारण यह कि उक्त स्थान पहले से ही जाग्रत है- यहां रूहानी तरंगें सघन हैं। पार्श्व में शंभूनाथ बाबा की टेकरी है। फिर यह जगह चामुण्डा माता, मीरां साहब की दरगाह, गोरी कुण्ड आदि तपोभूमियों के मध्य में है। एक अन्य कारण यह भी कि संत या फकीर अपनी संकल्प शक्ति से अपने स्थान पर एक मियादी सीमा का रूहानी सृजन कर देता है । उस मियाद तक वहां लोगों के काम होते रहते हैं। यही वजह है कि देव स्थानों की लोकप्रियता बदलती रहती है।

हुजूर के पास संकल्प सिद्धि थी- जो कह दिया वह हो जाता था। इसके जरिए अनेकों का भला किया। लघिमा सिद्धि से छोटे हो जाते थे। हमारे पीर साहब ने बताया कि एक बार डा. बाघ की नजर से बचने के लिए वे अजमेर के आगरा गेट चौराहे पर बौने बन गए थे। हवा में उड़ सकते थे - योग में एक उड्डयन आसन होता है। उसके असर से शरीर का धरती के साथ गुरुत्व बल टूट जाता है। इसके परिणाम स्वरूप योगी उड़ सकता है। एक बार गुरुदेव को शेर के रूप में स्वयं को दिखाया। ऐसा माया विद्या से होता है। इसमें जो भी रूप धारण किया जाता है उसी रूप पर संयम या ध्यान रखना जरूरी है। ध्यान हटते ही उक्त रूप भी हट जाता है। अलवर के राजा के महल की बात है। आप वहां गये थे। राजा बोले कि आपकी एक फोटो चाहिए। आपकी सहमति से फोटोग्राफर को बुलाया। उस से मजाक करते हुए बाबा ने कहा कि हमारी कौन सी फोटो खींचोगे; जवानी की या अभी की। हुजूर उस समय वृद्ध थे। छायाकार हँस दिया - यह कैसी बात! फोटो तो वैसी ही खिंचेगी, जैसे अभी आप हो। तभी राजा साहब बोले कि हमें तो जवानी की फोटो चाहिए। बाबा ने कहा कि ठीक है। फोटो खींची गई। रील धुल कर आई तो हुजूर की जवानी की फोटो थी। यह चमत्कार नहीं है। उन्होंनें अपनी जवानी के रूप पर संयम किया। ....यही रूप बाहर प्रत्यक्ष हो गया और फोटो में भी वही आया। परमहंस श्यामाचरण लाहिड़ी तो ऐसे अवसर पर अपने शरीर से प्रकाश के परावर्तन को रोक लेते थे। परिणाम स्वरूप फोटो खिंचती ही नहीं थी। यही कारण है कि पूरे जीवन में उनकी एक ही फोटो, उनकी सहमति से खींची गई। कहने का तात्पर्य इतना सा है कि ये संत महात्मा जो कुछ भी करते हैं या दिखाते हैं उसमें जादू अथवा चमत्कार नहीं, अध्यात्म का विज्ञान होता है। सूक्ष्म शरीर से बाहर निकल जाना भी आध्यात्मिक विज्ञान की ही प्रक्रिया है। आदि शंकराचार्य ने सूक्ष्म शरीर से पर काया प्रवेश किया

था, यह तो विख्यात घटना है। पदार्थ को गैस और गैस को पदार्थ में रूपांतरित कर देने के लिए विज्ञान में प्रविधि है।

संतों के बारे में ऐसी अनेक बातें होती हैं जो सामान्य स्तर के लोगों को चमत्कार लगती हैं। हमारे ऋषियों ने हजारों साल पहले ही मंगल ग्रह को दिव्य दृष्टि से देख लिया था। उन्होंने बता दिया कि इस ग्रह का वर्ण लाल है तथा आकृति बंदर जैसी है। उन्होंने इसके लिए लाल मुंह वाले 'वानर' हनुमान की पूजा आरम्भ करा दी जो बाद में चिरंजीव हनुमान देवता के रूप में मान्य हो गया। इधर अमेरिका की शोध संस्था नासा ने पुष्ट किया है कि मंगल ग्रह लाल रंग का है और उसकी आकृति बंदर जैसी है। तो आश्चर्य की बात यह कि हजारों वर्ष पहले ऋषियों ने ऐसा कैसे देख लिया। ऐसे ही आम आदमी के लिए तो यह भी आश्चर्य है कि प्रत्येक परमाणु, ब्रह्माणु का सूक्ष्मतम रूप है।

मेरी अनुभूतियां

हुजूर के आस्ताने में मुझे कई दिव्य अनुभूतियां होती रही हैं। वहां भजन व कलमे गूंजते हैं। बुजुर्गों का आना जाना लगा रहता है। एक बार कोई दिव्य दरगाह दिखी; विशालतम। गुरुदेव पर्दा फरमा चुके थे। उनकी दरगाह बननी थी। एक दिन इसी आस्ताने में ध्यानावस्था के दौरान कोई आस्ताना व महफिलखाना नजर आया। बात आई गई हो गई। लेकिन जब गुरुदेव की दरगाह बनी तो मैं स्तब्ध रह गया; बिल्कुल वैसी ही थी जो मुझे आस्ताने में दिखी।

आगे बढें - मुझे दीक्षा मंत्र मिल चुका था। दूसरा मंत्र मिलना था। हुजूर के आस्ताने में किसी मंत्र की धुन सुनाई देने लगी। मैं उस मीठी धुन में खो जाता था। एक दिन रामदत्त जी (गुरुदेव के उत्तराधिकारी) ने बुलाया; कहा कि आपके लिए नया मंत्र आया है। वह मंत्र वही था जो आस्ताने में सुनाई देता था। ..... एक दिन रात में वहीं ठहर गया। लेटा नहीं, इबादत के लिए बैठ गया। आधी रात के बाद, अंदर बैठे बैठे ही बाहर की पहाड़ी दिखने लगी। वह सोने की हो गई। इधर उधर सरकने लगी। उस पर्वत से मंत्र की गुंजार जैसी ध्वनि आने लगी। तब किताब में पढ़ा हुआ प्रसंग याद आया कि कैलाश पर्वत में अनेक लोगों ने वेद के मंत्रों का उच्चारण सुना है। बात गुरुजी को बताई तो हंसते हुए बोले - ऐसा होता है। सब बाबा हुजूर की कृपा है।

कई बार ऐसा हुआ कि घर से स्थान के लिए प्रस्थान करते वक्त अंतर वाणी फूटती कि आज अमुक सुगंध तुम्हें मस्त कर देगी। वहां पहुंचने पर पूरी दरगाह उसी सुगंध से महकती हुई मिलती। एक बार बड़ी अजीब बात हुई। मै प्रति गुरुवार गुरुदेव की दरगाह में जाता हूं। हुजूर के पास रविवार के दिन जाना होता है। उस दिन मै गुरुवार को ही सोमलपुर (बाबा बादामशाह की दरगाह) चला गया। आस्ताने में फाहिता के समय रूहानियत मानो नीचे उतर आई। चारों तरफ दिव्य प्रकाश भर गया। मजार शरीफ पर हुजूर दिखने लगे। लोभान का धुंआ आकाश तक जा रहा था। अनजाने कलाम गूंजने लगे। एक अनजानी आवाज सुनाई दी – देखो, फातिहा ऐसे लगता है ! रूहानी फकीर भोग इस तरह कबूल करता है। उस दिन घर पहुंचने के बाद भी शाम तक रूहानी मस्ती छाई रही। कभी कहते हैं कि चलो, आज तुम्हारी मस्ती कर देते हैं। उस दिन भी घनी खुमारी छाई रहती है। ऐसे सैकड़ो वाकये हैं। हर इतवार को कुछ न कुछ अवश्य होता है। मेरी रूहानियत की सब से बड़ी रहमत तो यह किताब है। सब कुछ दृश्य –श्रव्य जैसा हो रहा है। बाबा साहब बहुत कुछ दिखाते हैं और काफी कुछ समझाते हैं। प्रतिपल उनकी उपस्थिति का एहसास होता रहता है।

आपको खुद के पीर निजामुल हक साहब की पूरी कृपा के साथ साथ गुरु भाई हाफिज इब्राहिम साहब की रहमत भी प्राप्त हुई यह सारी दौलत आप ने हजरत हर प्रसाद मिश्रा जी को दे दी। गुरुदेव कृतज्ञ हुए। उन्होंनें अपने सारे मुरीदों को हुजूर के सुपुर्द कर दिया। खुद के नाम से कुछ नहीं किया। जो कुछ किया, पीर के नाम से किया।

5. बाहरी व्यक्तित्व; जैसा मैंने सुना

गुरुदेव मध्यवर्गीय सामान्य मैथिली परिवार के सदस्य थे। रेल्वे में नौकरी थी। पहलवानी एवं संगीत का शौक था। देश की स्वतंत्रता से पहले आजादी के दीवाने थे। फिर यू टर्न ले कर रूहानियत में आए। गुरु कृपा से एकदम आगे बढ़े। एक सौ से अधिक मुरीद बन गए। श्री लक्ष्मी नारायण गर्ग, श्रीमती गीता अग्रवाल, श्री गोपाल धाकड़ आदि रूहानी शिष्य थे। इनमें एलएन गर्ग आपके दाहिने हाथ साबित हुए। आपके सारे घरेलू कार्यों का प्रबंधन गर्ग साहब के जिम्मे था। उधर मुन्ना लाल जी मित्तल, श्री अनूप गुप्ता, श्री निरंजन दोषी, वकील गोपाल अग्रवाल व कुछ अन्य पर समृद्धि का शक्तिपात किया। श्री भगवती अरोड़ा, मुंशीजी, श्री सूरज अग्रवाल आदि आपकी सेवा में जुटे रहते थे। रोटी पानी की कृपा अनेक लोगों पर की। जो लोग समस्या ले कर आते उनको राहत पहुंचाते रहे।

वकील निरंजन दोषी के बारे में भी सुना। कमाल के आदमी हैं। उन दिनों झांसी वाली दरगाह में निर्माण कार्य चल रहा था। वकील साहब प्रति शनिवार को अजमेर से झांसी जाते। रविवार को काम कराते। सोमवार को लौट कर कोर्ट में वकालात करते। गुरु की सेवा फलीभूत हुई। आज शहर में उनका नाम है।

गुरुदेव नियमित सत्संग करते थे। मुरीदों को झांसी ले जाते थे। शनिवार की रात ध्यान शिविर लगाते और शिष्यों पर करम करते थे। खूब अध्ययन किया और बहुत लिखा। आपकी कई किताबें हैं जिनमें प्रमुख हैं - देह से अदेह, कुण्डलिनी शक्ति, बाबा बादामशाह कलंदर आदि। शोध संस्थान में डेढ़ हजार से अधिक किताबें उपलब्ध कराई।

जैसा मैंने देखा -

अध्ययन, अध्यापन और लेखन मेरी प्रवृत्ति रही है। अंध श्रद्धा मुझ में नहीं है। इसीलिए गुरुदेव को अलग ही नजर से देखता रहा। मै उनके मौन को देखता था। उनकी मुस्कान के पीछे झांकता था। सत्संग कक्ष में वे जो किस्से सुनाते थे उनमे छिपे हुए अभिप्राय को समझा करता था। मै जानता था कि वे अकारण न तो बोलते हैं और न कुछ करते हैं। उनकी चुप्पी, किस्सों, कथन, मुस्कान, चाय पिलाने आदि की गहराई में बहुत कुछ होता था। मुरीदों के अंदर बाहर का हाल उन्हें ज्ञात रहता था। सब कुछ सुनते थे, जानते थे लेकिन चुप रहते थे। हर कोई अपनी किसी न

किसी गतिविधि से उन्हें खुश कर देना चाहता था। लोग बढ़िया से बढ़िया उपहार लाते रहते थे एवं खुद के उपचार-उपकार कराते रहते थे। वो पार लगाना चाहते थे किंतु लोग समृद्धि के पर लगवाना पसंद करते थे। बरकत की चाह में डॉक्टर, इंजीनियर, उद्योगपति, अधिकारी, नेता, मंत्री आदि वहां मत्था टेकते थे।

एक दिन बोले कि तुम सब लिख कर लाओ कि यहां क्यों आते हो? मेरे अलावा किसी ने लिख कर नहीं दिया। जिसमें मैने लिखा कि - आपकी फकीरी का अध्ययन करना एवं रूहानियत को खुद कर के देखना चाहता हूं, इसलिए यहां आता हूं। .....रूहानी पुरुष, रूहानी मुरीद की तलाश में रहता है लेकिन उसे भौतिक मनुष्य ही अधिक मिलते हैं। इस दर्द को गुरुदेव ने एक बार गुरु पूनम की सभा में अपने प्रवचन के दौरान व्यक्त भी किया था। आप फरमाते थे कि - दौलत तो फकीर मिश्री की तरह बाँट देता है लेकिन जब कोई रूहानियत मांगता है तो उसे लगता है कि कलेजे की कोर काट कर देनी पड़ रही है। फिर भी एक बार कोई समारोह था। अनेक श्रद्धालुओं के बीच में आप बोले कि - अमृत का घड़ा लिए हुए बैठा हूं; पीने वाला आए तो पिलाऊं। एक दिन बोले - निजामुल हक साहब ने अंतिम खत हाफिज इब्राहिम साहब को लिखा। उसमें यह बात थी- हमने इस दुनिया के लिए बहुत कुछ किया। यहां तक कि मुर्दे को भी जिंदा किया। फिर भी यह दुनिया हमारी नहीं हो सकी। इसलिए याद रखना कि यह दुनिया किसी की सगी नहीं है। इतना सब जानते हुए भी आपने किसी दुखी को निराश नहीं किया। आपका आश्रम ''कष्टमुक्तिधाम'' बना रहा।

कभी बाहर निकलते तो बन ठन के जाते थे। एकदम रईसी अंदाज। फकीरी लिबास में तो भीड़ पकड़ लेती है। मुरीदों ने सारे ठाट बाट का प्रबंध कर दिया था किंतु उनकी फकीरी को छू नहीं सके ..... मैं देखता था कि दस पंद्रह खास लोग उन्हें घेरे रहते थे। उस घेरे को तोड़ना मुश्किल था। लेकिन वे सारे घेरे तोड़ते रहते थे। जिस घेरेदार में अहं आया उसे दूर कर दिया। एक ही चोट में अहंकार को तोड़ देते थे लेकिन अन्य किसी को कुछ भी ज्ञात नहीं होता था। ..... बार बार पैर छूना या प्रणाम करना आपको ठीक नहीं लगता था। एक दिन कहा - तुम जब यहां आने के लिए घर से निकलते हो उसी क्षण हम तुम्हारा प्रणाम स्वीकार कर लेते हैं। इसका अर्थ यह कि ज्यों ही घर पर किसी ने उन्हें याद किया, उन्हें ज्ञात हो जाता था।

थोड़ा दूसरी तरफ चलें। श्री विजय गुप्ता हमारे आश्रम के समर्पित कार्यकर्ता हैं। बिजली व टेन्ट का काम अपने अग्रज अनूप गुप्ता के साथ करते थे। उन दिनो गुरुदेव बाबा साहब की दरगाह के नवीनीकरण का काम करा रहे थे। उन्होंनें विजय को बुलाया और उक्त काम सुपुर्द कर दिया। विजय जी को कंसट्रक्शन वाले काम का तनिक भी अनुभव नहीं था। गुरुदेव ने वह नजर दे दी। काम शानदार हुआ। फिर गुरुदेव की दरगाह का निर्माण किया। उसके बाद रामदत्त जी का आस्ताना बनाया। आज अजमेर में उनका नाम है। ..... मुझे कहा कि रावण के सकारात्मक चरित्र पर किताब लिखो। मेरी पोस्टिंग गवर्नमेंट कालेज, देवली में थी। वहां विषयगत किताबें मिलना बहुत कठिन था। लेकिन कमाल हो गया; ढेरों पुस्तकें मिल गईं। एक-एक रेफरेंस के लिए एक किताब पढ़नी पड़ती थी। फिर एक अलग खेल शुरु हो गया- मै जो किताबें रख कर जाता कि अगले दिन काम करूंगा, उन्हें कोई छिपा देता। तब अंदर आवाज आती कि अर्थशास्त्र की रेक में देखो, भूगोल की शेल्फ में पीछे की तरफ देखो। एक बार तो कॉमर्स की अल्मारी में रावण की किताब मिली। इस तरह काम पूरा कराया। यह दशानन चरित खूब बिकी।

ऐसे ही मैंने गीता कभी नहीं पढ़ी। पर्दा फरमाने के तीन साल बाद आपने मनो संवाद के माध्यम से आदेश किया कि गीता पर काम करो - एक श्लोक पर एक पुस्तक लिखो। आज ऐसी आठ किताबें लिखी जा चुकी हैं। पूरे देश में अपने तरीके का यह अलग काम है। एक बार शिवरात्रि की बात है। मै अपनी पत्नी मधु शर्मा के साथ आश्रम गया। वहां पता चला कि गुरुदेव तो बाबा हुजूर की दरगाह में हैं। वहां जलधारा थी। मै तब नया नया मुरीद था। कोई कुछ नहीं बताता था।

संयोग वश हमें ऑटो रिक्शा मिल गया। हम सोमलपुर पहुंचे, उस वक्त प्रसादी चल रही थी। गुरुदेव अंदर एक कक्ष में भोजन कर रहे थे। वहां तक मेरी पहुंच नहीं थी। हम अनजानों की तरह दालान में बैठ गए। तभी श्री सुनील शर्मा मेरी तरफ आए और बोले कि आपको पिताजी यानी गुरुदेव अंदर बुला रहे हैं। मैं चौंका कि उन्हें क्या पता कि हम यहां आये हैं? चकित भाव से भीतर गए। वहां आपने किसी को कहा कि इनके लिए भोजन लाओ। अपने पास बिठा कर भोजन कराया। अपनी थाली में से एक बाटी हमें दी। इस तरह मैं जिनके लिए अजनबी था उनके सामने मेरी पहचान स्थापित कर दी।

आश्रम में शोध संस्थान की स्थापना हो गई। पुस्तकालय में किताबों का रख रखाव मुझे ठीक नहीं लग रहा था। गुरुदेव ने पुनर्व्यवस्था की अनुमति दे दी और कह दिया कि शिवजी के साथ काम करो। बड़ी धाक वाले मुरीद मेरे साथ हो गए। बार-बार राय ले कर किताबें जमाने लगे। फिर श्री आर सी शर्मा बुजुर्ग साधक को एक पुस्तक लिखवाने का दायित्व भी मुझे सौंप दिया। उन दिनों मैंने इन बातों पर गौर नहीं किया लेकिन आज समझ में आ गया कि उनके हृदय में मेरे लिए जो जगह थी उसे बाहर भी साकार किया। एक निश्चित उद्देश्य के लिए आपने मुझे अपने पास बुलाया था और उसी की भूमिका बनाते गए। ..... मुझे याद आता है 'देह से अदेह' पुस्तक का प्रसंग। गुरुदेव की हस्तलिखित डायरियां सुश्री शकुन्तला मित्तल के पास थीं। वे डायरियां टाइप हो चुकी थीं। उन्हें पुस्तक का रूप देना बाकी था। सम्पादन का कार्य मुझे सौंपा गया। शकुन जी बोलीं कि मैटर में काट छांट मत करना। एक दिन उनके ही सामने गुरुदेव को मैंने कहा कि यादगार पुस्तक तैयार करने के लिए सम्पादन करना है। सम्पादन में काट छांट तो होगी ही। लेकिन शकुन जी मना कर रही हैं। आपने तत्काल कहा-तुम्हें सारे अधिकार देता हूं।

यह होती है संत की महानता। नजर उनकी, मैटर उनका, सम्पादन भी उनकी नजर के अनुसार लेकिन अधिकार मुझे दे दिए। मै खुश हो गया कि इतने कामिल फकीर की किताब के सम्पादन का अधिकार मुझे मिला है। आज उस बात पर हँसी आती है। जिनकी मर्जी के बिना मैं हाथ की अंगुली नहीं हिला सका उनकी किताब का सम्पादन में मनमानी कैसे कर सकता था। .... एक दिन ऐसा ही हुआ मैं, मेरी पत्नी व अन्य साधक ध्यान कक्ष में बैठे थे। अचानक ही गुरुदेव ने मुझ पर नजर टिका दी। मैं जड़ हो गया। अंदर वे बोले कि अपने शरीर को हिलाओ। मै पूरी कोशिश कर लेने के बाद भी हाथ की अंगुली तक नहीं हिला सका। आधा घण्टे तक ऐसा ही चलता रहा।

मैने देखा गुरुदेव को उनके पीर में फना रहते हुए। गुसल पीर को कराया, स्नान इनका हो गया। भोग उनके लगाया, पेट इनका भर गया। साधक गण अपनी समस्या इनके सामने रखते थे, निराकरण पीर साहब कर देते। हुजूर के आस्ताने में मिश्रा जी दिखते एवं गुरुदेव के आस्ताने में बाबा साहब नजर आते। एक बार गुरुदेव ने कह ही दिया कि सुबह साढे नौ बजें तक हम हुजूर के दरबार में रहते हैं; हमारे पास इसी हिसाब से आया करो। मैंने यह हाल भी देखा कि - एक बार

गुरुवार के दिन सत्संग कक्ष में फातिहा लगना था। यह कार्य आप ही करते थे। उस दिन आपने लोभान पात्र सुरेश जी को दे दिया ओर स्वयं तख्त पर लेट गये। मैने अनुभव किया कि वे हुजूर के रूहानी वजूद के साथ एकाकार हो रहे थे। फिर आगे तो ऐसा अनेक बार हुआ।

मैं देखता था कि मौज उठी तो गुरुदेव में रूह गाती थी। हॉल आया तो रूह नाचती थी। महफिल में सब को उनकी देह ही दिखती थी लेकिन कलाम तो उनकी रूह सुनती थी। महफिल अजमेर में हो या झांसी अथवा रामपुर में – गुरुदेव रूहानी पुरुष हो जाते थे। आप कहते थे कि वो कव्वाल ही क्या जिसका कलाम रूह का उठान नहीं करे। जब रूह गाती है, रूह ही सुनती है तब ही महफिल रूहानी होती है। रूहानी महफिल में ही रूहानी बुजुर्गों का आगमन होता है। जो बेखुदी में पहुंच जाता है उसी को यह अनुभूति होती है। जो खुदी में बैठे रहते हैं वे बेकार ही रात जागते हैं। मैने देखा कि उनकी बेहोशी में होश और होश में बेहोशी। बाहर बोलते थे लेकिन अंदर से चुप। जब बाहर चुप तो अंदर बोलते थे। मैं देखता था उन्हें उस पार की दुनिया में। उनके सामने मेरे शब्द झर गये, ज्ञान झर गया। शेष रहा केवल रूहानी सत्य।

क्या क्या लिखूं कि मैंने गुरुदेव में क्या क्या देखा ! धरती देखी, आसमान देखा। रूह देखी, रूह का परवान देखा। उनमें बिंदु देखा, उनमें ही नाद सुना। ज्योति देखी, ज्योति का विस्तार देखा। उनमें ही खुदी देखी और उनमें ही खुदा को देखा।

6. 'अयम्', आत्मा, खुदा और पीर

ऐसे थे गुरुदेव। उनमें मांडूक्य उपनिषद का महावाक्य साकार हुआ- अयम आतमां ब्रह्म; यह आतमा ही ब्रह्म है। फिर सूफीयत साकार हुई - पीर ही खुदा है। आप कहते थे कि मैंने न ब्रह्म को देखा, न ही खुदा को जानता हूं ; लेकिन मैं अपने उस पीर को जानता हूं जिसने खुदा को देखा है। अपने ऐसे पीर के साथ मैं उठता बैठता हूं ; खाता पीता हूं ; बात करता हूं; उसके साथ आता जाता हूं। इसलिए मैं अपने पीर में ही खुदा को देखता हूं। हमने प्रश्न किया कि फिर खुदा क्या है? आपका पीर ही परमात्मा है तो वास्तविक परमात्मा क्या है ? आप मुस्कराते हुए बोले कि मेरे कथन का अर्थ यह है कि पीर ही मुझे या अन्य किसी को भी ईश्वर से मिलाता है। गीता में कृष्ण भी तो यही कहते हैं कि तू मेरे भक्त के पास जा; वह तुझे मेरे तक ले आएगा। भगवान अपने भक्त के हृदय में रहते हैं तो मेरा खुदा भी मेरे पीर के अंदर रहता है। इसीलिए मैं कहता हूं कि पीर ही खुदा है।

सूफी अपने पीर को खुदा मान कर ही उसकी खिदमत करता है, सेवा करता है। गुरुदेव ने बाबा साहब को अपने दिल में बसा लिया था। जैसे हनुमान के हृदय में श्रीराम थे वैसे ही गुरु जी के हृदय में बाबा बादामशाह थे। न नौकरी की चिंता,न बच्चों की फिक्र। आपने यह धारणा बना ली कि - हानि, लाभ, जीवन, मरण, यश, अपयश गुरु हाथ। कृष्ण ने कहा कि तू सब कुछ छोड़ कर मेरे भरोसे हो जा; मै तुझे तार दूंगा। गुरुदेव भी कर्म धर्म की सारी चिंताएं त्याग कर हुजूर के भरोसे हो गए थे। एक बार का वाकया है - आपको दिन भर से दस्त हो रहे थे। शाम को स्थान (पीर के पास) जाना था। प्रति शनिवार वहां जाने का अटल नियम था। लेकिन उस दिन पेचिश के हालात में कैसे जाते? घरवालों ने भी मना किया। तब आपका अंतर्मन बोला- पीर को खुदा मानते हो तो चिंता क्यों ? बस, राह खुल गई। पान खाने का बहाना बना कर घर से निकल गए और जैसे-तैसे स्थान पहुंच गए। पीर की नजर तो थी ही। राह में एक बार भी तबियत नहीं बिगड़ी। हुजूर ने आपको खाट पर लेटा दिया ओर आपकी सेवा करने लगे। दुनिया वालों के लिए यह सेवा थी किंतु आँख वालों के लिए रूहानी उत्सव था - सिर सहलाते और पांव दबाते हुए न जाने कितनी रूहानी ताकत दे दी ! ऐसा ही एक वाकया नक्शबंदिया सिलसिले के फकीर रामचंद्रजी महाराज के साथ हुआ। पीर थे फजल अहमद खलीफा जी। दोनो के बीच मामूली दुआ सलाम थी। किंतु पीर जानता थ कि यही

शख्स उसका शिष्य होगा। एक दिन तेज बारिश में रामचंद्र जी भीगते हुए खलीफा जी के घर के सामने से गुजरे। उन्होंने अंदर से ही आवाज दी, मियां भीग गये हो; भीतर आ जाओ। फिर आपको धुले हुए वस्त्र पहिनने के लिए दिए और कहा - खाट पर लेट जाओ। बस, हो गया शक्तिपात। कर दिया रोशन। चाय पिला कर चुपचाप भेज दिया। अब उस गली में रामचंद्र जी के लिए पीर के घर के सिवाय कुछ नहीं रहा। बात यह है कि जब किसी में रूहानियत का अवतरण होना होता है तो वैसी ही स्थितियां बन जाती हैं। कम्प्यूटर में एक बटन दबाते ही मैटर डाउनलोड हो जाता है। बस, ऐसे ही एक क्षण में पीर अपने मुरीद को रोशन कर देता है। बाद में तो मुरीद के पक्ष पर इबादत चलती रहती है।

गुरुदेव को हुजूर 'नेताजी' कहते थे ओर आश्रम के लोग उन्हें 'पिताजी' बोलते थे। तो अन्य साधकों के सामने नेता जी दूर बैठे रहते थे ओर चुप ही रहते थे। हुजूर के मुंह लगे लोग सोचते कि वे ही उनके नजदीक हैं। बाबा कहीं भी जाते तो नेताजी को साथ ले जाते थे। ऐसे आने-जाने के दौरान ही रूहानियत की बारीकियां समझा देते ओर गुप्त मंत्र भी दे देते। ....एक बार झांसी गये। कई साधक साथ थे। किसी को कुछ नहीं पता कि क्या होने वाला है! वहां हुजूर ने अपने नेताजी को हाफिज साहब के सामने बिठाते हुए कहा कि - ये लड़का है ! (अर्थात मेरे बाद यही अजमेर में हमारे बुजुर्गों की खिदमत करेगा)। हाफिज साहब ने नजर भर कर देखा ओर बोले - ठीक है। सच्चाई तो यह है कि गुरुदेव पीर के पास एवं साथ रहने का अदब जानते थे; उस अदब का पालन भी जी जान से करते थे। इस अदब की मास्टर की चाबी है चुप रहना- सवाल जवाब नहीं, अपनी परेशानियों का रोना धोना नहीं, गुरु भाईयों की शिकायतें नहीं ओर कुछ मांगना नहीं। सीधी सी बात है - यदि आपने अपने गुरु को भगवान ही मान लिया तो फिर कुछ भी कहने की कहां जरूरत है? उसे सब कुछ ज्ञात है। जब जो या जितना देना होगा, अपने आप दे देगा। किंतु ज्यादातर मुरीद उतावले होते हैं। सब्र नहीं रखते। अपनी कामना की पूर्ति फटाफट चाहते हैं। हाथों हाथ चाहते हैं। इसी जल्दबाजी में उनसे अदब सम्बन्धी चूक होती रहती है। गुरुदेव ने ऐसी चूक कभी नहीं की- न अंदर, न बाहर। उन्होंने पीर साहब के इस कथन को सजीव कर दिया कि बा अदब, बा नसीब; बे अदब, बे नसीब। अपने खुदी को हटा दिया और वहां पीर को ठहरा दिया। इसीलिए 'मै' का प्रयोग कभी नहीं किया।

कोई भी पीर कम या ज्यादा नहीं होता है। बस, कोई स्वयं की कुव्वत का उपयोग कर लेता है और अन्य कोई चुप बैठा रहता है। इबादत के अंतिम स्तर पर अहमब्रह्मास्मि या अनलहक सिद्ध हो जाता है किंतु इसे मुंह से नहीं बोला जाता है। मंसूर के मुंह से बेखुदी की चरम सीमा पर ऐसा निकल गया ओर गैर रूहानी लोगों को यही सच्चाई बर्दाश्त नहीं हुई। हमने गुरुदेव का ऐसा ही रूप देखा है। अपनी अनुभूतियों वाले अध्याय में पूरा जिक्र करेंगे। एक बार मौज में थे। बोले - मुरीद कौन? फिर खुद ही जवाब दिया कि आईना मै देखूं और शक्ल पीर की नजर आए। पानी मैं पीता रहूं ओर प्यास पीर की बुझती जाए। दवा मैं खाऊं, बुखार उसका उतर जाए। सांस उसकी टूटे तो प्राण मेरे निकल जाएं। फिर सूझाया कि अमीर खुसरो को जब ज्ञात हुआ कि उसके पीर निजामुद्दीन ओलिया ने पर्दा फरमा लिया है तो दौड़ कर उनकी मजार पर गए; सिजदे की मुद्रा में यह शेर पढा -गोरी सूती सेज पे, मुख पर डारे केस। चल खुसरो घर आपने, रैन भई चहुं देस।। .....और वहीं निष्प्राण लुढ़क गए। कुछ विद्वान कहते हैं कि तीन दिन बाद देह त्याग हुआ। वे अमीर खुसरो की पीर परस्ती के प्रसंग भाव विभोर अवस्था में सुनाते थे मानो खुद भी वैसे ही होना चाहते हों। एक बार बताया कि निजामुद्दीन ओलिया खुसरो को अपने साथ ही खुदा के पास ले जाना चाहते थे। वे कहते थे कि तब खुदा ने अगर पूछ लिया कि निजामुद्दीन, मेरे लिए धरती से क्या लाए हो तो मै कहूंगा - आपके लिए खुसरो लाया हूं। उस पीर की नजर में खुदा के लिए धरती का सब से नायब तोहफा उसका मुरीद खुसरो था। पूरे इतिहास में किसी मुरीद के लिए इस से बढ़ कर यादगार टिप्पणी नहीं मिलती है।

एक दिन मैने प्रश्न किया कि गुरु को भगवान से भी बढ़ कर क्यों माना जाता है? आपने शानदार जवाब दिया - भगवान तो मनुष्य को उसके संचित कर्मों का भुगतान कराने के लिए जन्म देता है। उधर गुरु तो अपनी सारी रूहानी कमाई अपने चहेते मुरीद को हंसते हंसते दे देता है। खुद के पास कुछ नहीं रखता है। इसके उदाहरण स्वरूप रामकृष्ण परमहंस का दृष्टांत सुनाया। अपने शिष्य नरेन्द्र (विवेकानंद) के ललाट पर हथेली रखी। संकल्प किया और सारी आध्यात्मिक शक्ति उसे दे दी। फिर रो पड़े- अरे! तूने तो मुझे खाली कर दिया। बात को आगे बढ़ाते हुए बोले कि हमारे हुजूर को ही देख लो ! दादा साहब और हाफिज इब्राहिम मोहम्मद सरकार ने अपनी सारी दौलत इन्हें दे कर मालामाल कर दिया। इसीलिए सूफी हो या वैष्णव; गुरु का स्थान सब से ऊपर माना जाता है।

जिस तरह माता पिता की जनन कोशिकाओं के निषेचन से संतान का दैहिक जन्म होता है वैसे ही मनुष्य में गुरु उसका आध्यात्मिक जन्म सम्भव करता है। गुरु अपनी रूहानी कोशिका (बोध रूपी प्रकाश) का एक अंश, आध्यात्मिक फोटोन (प्रकाश कणिका) दीक्षा वाली प्रक्रिया से दीक्षार्थी में प्रविष्ट कराता है। परिणाम स्वरूप उसका रूहानी जन्म होता है। मनुष्य को आत्मज्ञान कराने के लिए गुरु ऐसा करता है। उसे रूहानी राह पर चला देता है। लेकिन गुरु के कलेजे पर चोट तब लगती है जब ये मुरीद उससे धन दौलत मांगने लगते हैं। धन दौलत तो भाग्य विधान के अनुसार जन्म देने वाला ईश्वर पहले ही नसीब में लिख चुका है। परमात्मा तुम्हारे उसी भाग्य को गुरु के माध्यम से तुम्हें उपलब्ध करा देता है। गुरु इस सत्य को जानता है। उसे यह विचार कर ठेस लगती है कि जिस ने प्रभु पर यकीन नहीं किया वह पीर पर कैसे विश्वास करेगा ! तो पीर ने तुम्हें जो रूहानी जन्म दिया उसे तुम ने बेकार कर दिया। इसीलिए गुरुदेव कहते थे कि हम भी अकेले में रोते हैं; हमारा रोदन कोई नहीं देखता है। जो तुम्हारा रूहानी पिता बना उस से तुम ने दुनियावी दौलत मांग ली। ....रूहानी पिता होने के नाते ही गुरु को भगवान से ज्यादा महत्व दिया गया है। वही रूहानी पिता रोया; यह देख कर कि तुम रूहानी सीढ़ी से लुढ़क कर वापस देह पर आ गए।

आपकी पीर परस्ती का ही यह परिणाम रहा कि तीनों भाई एवं पत्नी को भी हुजूर ने मगफिरत यानी मुक्ति की राह पर लगा दिया। आज आपका पूरा वंश सूफीयत के रंग से सराबोर है।..... तो पीर ही खुद, पीर ही खुदी, पीर ही खुदा। न तू जुदा, न मै जुदा, बस खुदा ही खुदा।

दिल्ली, झांसी और रामपुर में –

आपके रुहानी व्यक्तित्व से जुड़े हुए कुछ यादगार प्रसंग इस अध्याय में दिये जा रहे हैं। झांसी एवं रामपुर तो आप जाते ही रहते थे। उवैसिया शाखा की पांच दरगाह रामपुर में और दो झांसी में हैं। इसलिए गुरुदेव अपने मुरीदों के साथ यहां की जियारत करते रहते थे। दिल्ली में उनके कुछ गुरु भाई तथा मुरीद रहते थे।

दिल्ली में विराट रूप –

पिता जी एक बार दिल्ली में अपने मुरीद बंसल साहब के घर ठहरे हुए थे। शाम के समय वहां श्री महेंद्र मिश्रा व अन्य कुछ साधक भी पहुंच गए। महेंद्र जी ने

पिता जी से कहा कि भैया ! आज तो विराट रूप दिखादो। (महेंद्र मिश्रा आपके बचपन के साथी और गुरु भाई थे। दिल्ली में आई ए एस ऑफिसर थे। कुण्डलिनी शक्ति के विशेषज्ञ थे।) उनके साथ अन्य साधकों ने भी निवेदन किया। तब पिताजी बोले कि ठीक है। कमरे का दरवाजा बंद करलो और बत्ती भी बुझा दो। फिर थोड़ी देर बाद ही महेंद्र जी को जमीन से आसमान तक रौशन विराट रूप के दर्शन हुए। जब कि अन्य साधकों को केवल आनंद की अनुभूति हुई बाद में पता चला कि दिल्ली में ही एक साधक श्री कम्पानी को ओर अजमेर में आस्ताने पर श्री फ्तेहचंद मिश्रा को भी ज्योति रूप के दर्शन हुए थे। वस्तुत: देह के पांचवें ओर छठे स्तर पर पहुंचे हुए साधु संत अपने सूक्ष्म शरीर को करोड़ों अरबों परमाणुओं में संघनित कर के उसे चाहे जितना विराट रूप दे सकते हैं। आप इसे यों समझिये - माँ के गर्भ में एक निषेचित युग्मनज या युग्मज कोशिका से गर्भ काल में सवा अरब कोशिकाओं वाला शिशु बन जाता है। मनुष्य के वयस्क होने तक इनकी संख्या पांच खरब तक हो जाती है। उधर एक भ्रूणीय कोशिका (न्यूरांस) तंत्रिका कोशिका में विभाजित होते हाते 11-39 करोड़ तक पहुंच जाती है। ऐसे ही संत अपने औरा के प्रकाश कणों को संकल्प शक्ति से बढ़ा कर स्वयं के आकार वाला विराट प्रकाश शरीर दिखा देता है। ऐसे ही महत् तत्व से बना सूक्ष्म शरीर अणु रूपेण होता है। उसे बाहर प्रेषित करना एवं बड़ा रूप देना एक आध्यात्मिक प्रविधि है। यह अध्यात्म विज्ञान का सत्य है। स्वप्न में आपकी सूक्ष्म देह ही सक्रिय रहती है।

चतरसिंह को दर्शन - दिल्ली निवासी चतरसिंह ने गुरुदेव को एक बार दिल्ली प्रवास के दौरान कहा कि आप जब अजमेर में हों तब मुझे दिल्ली में दर्शन कराएं। आप अजमेर आ गये। फिर यहीं से अपने सूक्ष्म शरीर को दिल्ली में चतरसिंह के सामने प्रत्यक्ष करते हुए उसे दर्शन कराए। वे श्रीमान अजमेर आए तथा गुरुदेव के चरणों में गिर पड़े।

रामपुर में -उत्तर प्रदेश में रामपुर जिला, फकीरों की मण्डी कहा जाता है। यहां जामा मस्जिद का निर्माण सन् 1780 के लगभग वहां के नवाब ने तीन लाख रुपये की लागत से कराया था। ऐसे ही वहां हाफिज सैयद शाह की दरगाह भी प्रसिद्ध है। यहां के अरबी पुस्तकालय में 12000 हस्तलिखित ग्रंथ हैं। इसी रामपुर में उवैसिया सिलसिले की पांच दरगाह हैं। इनमें पहली दरगाह सोहाब खां साहब की है। आस्ताना बहुत छोटा है। गुरुदेव ने वहां फूल पेश किये। शेष श्रद्धालु बाहर खड़े

थे। आप अंदर बैठ गये। ध्यान चढ़ा। चिदाकाश में आस्ताना फैल कर बड़ा हो गया। बाहर जो साधक पीर साहब के ध्यान में लीन थे उन सब को गुरुजी ने अंदर आस्ताने में समेट लिया। ध्यान उतरा। आप बाहर आ गए। पता चला कि जो उस दिन चूके वह चूक गए। मुझे याद आया मार्केंडेय ऋषि वाला प्रसंग। वे अपनी कुटिया में ध्यान मग्न बैठे थे। अचानक प्रलय काल आ गया। पहाड़ के नीचे सारी धरती डूब गई। अब पानी उनकी कुटिया में भी भरने लगा। तब उन्हें बड़ का पेड़ दिखा। पेड़ के एक पत्ते पर भगवान विष्णु का बाल रूप नजर आया। दर्शन से धन्य हुए। ध्यान टूट गया। देखा तो कहीं कुछ नहीं था। वे अपनी कुटिया में सुरक्षित थे।

– एक बार मैं भी राम जी के साथ रामपुर गया। अल्लानूर खां साहब की दरगाह में जियारत हो रही थी। रामजी के साथ कुछ साधक अंदर चले गए। अन्य के साथ मै भी बाहर रह गया। अंत: प्रेरणा से मै दरगाह के पीछे चला गया। मन उदास तो था ही कि मै भीतर नहीं जा सका। बूंदा बांदी शुरू हो गई। मेरा ध्यान लग गया। मालिक की आवाज आई – जियारत कबूल; जितने भी साधक बाहर खड़े हैं उन सब की भी कबूल। चुपचाप ऐसा हो गया। किसी अन्य जियारत का प्रसंग है। गुरुदेव बाबा लक्ष्मणदास जी की दरगाह में थे। सुबह फूल पेश करने की सारी तेयारी हो गई। तभी तेज खुशबू का झौंका बरामदे में फैल गया। पिताजी बुदबुदाए कि फूल तो पेश हो गए। बाद में बाहरी रस्म पूरी करते समय गुरुदेव की रुहानी आंखों को शायद ही किसी ने देखा।

झांसी में– सन् 1985, 90 के बीच की बात है। झांसी में महफिल चल रही थी। गुरुदेव में जोश आया। आपने रामदत्त जी की तरफ दृष्टिपात किया। वास्तव में वह शक्तिपात था। राम जी उठ कर बेखुदी में झूमने लगे। वे ऐसे झूमे कि रुहानी लोक में पहुंच गए। पीर ने उसी वक्त उन्हें पेश किया। रुहानी दुनिया में रुहानी दृष्टिपात हुआ। राम जी हाल की ऊंची अवस्था में चले गए। रुहानी अदब सम्पन्न हुआ। गुरुदेव का उत्तराधिकारी निश्चि हो गया जिसकी घोषणा बाद में की गई।

एक अन्य दृष्टांत सर्वेश प्रजापत ने बताया। वे तथा अन्य साधक गुरुदेव के साथ झांसी जा रहे थे। गुरुदेव ओर पिताजी आगे वाली कार में थे। उनके पीछे सर्वेश व अन्य साथी थे। अचानक ही पिताजी की तबियत बिगड़ी। गाड़ियां रुक गईं। उनका शरीर ठंड़ा पड़ गया। ये सब उनके हाथ पाँव सहलाने लगे। तभी रामदत्त जी ने कहा कि घबराओ मत; ये थोड़ी देर में ठीक हो जाएंगे। वास्तव में हुआ यह कि

आप सूक्ष्म रूपेण देह से निकल गए। जिस काम के लिए जहां जाना था वहां चले गए। उक्त काम किया और वापस शरीर में आ गए। यह रहस्य राम जी ने उजागर किया था।

एक बार हुजूर के साथ झांसी गये हुए थे। बाबा बाहर ही बैठ गए ओर गुरुदेव को निजामुल हक साहब के आस्ताने में बैठने के लिए कहा। वहां आप रुहानी सभा में शामिल हुए। श्वेत लोक, श्वेत आसन, श्वेत वजूद और परा वाणी में वार्तालाप। बाहर तो खाना पीना, पानी भरना व कुछ निर्माण कार्य चलते रहे तथा भीतर हुजूर की ऐसी रहमत हो गई। ..... यहीं का एक अन्य दृष्टांत है - गुरु जी, निजामुल हक साहब वाले आस्ताने के बाहर पिलर के सहारे बैठे थे। एक साधक भूपी भाई ने बाहर अपनी कार पार्क की। उनकी गाड़ी में कोई कव्वाली बज रही थी। गुरु साहब को अच्छी लगी। उन्होंने इशारा करवाया कि आवाज तेज कर दे। अब वे मौज में झूमने लगे। वर्तमान गद्दी नशीन मुनींद्र दत्त मिश्रा के अनुसार वे काले रंग की शॉल ओढ़े हुए थे। उनकी शक्ल हू ब हू सुभानशाह साहब जैसी लग रही थी। सब साधक नाच रहे थे। उधर मालिक रुहानी महफिल में उतर गए। वहां सुभानशाह साहब का जलाल दमक रहा था। आप उसी नूर में डूब गए। इसीलिए आपकी सूरत उनके जैसी दिखने लगी थी। गुरुदेव ने मुझे समझाया था कि संगीत के प्रभाव से रूह उठ जाती है; सूक्ष्म चक्र सक्रिय हो जाते हैं। देह का बोध थोड़ी देर के लिए मिट जाता है। संत फकीर इसीलिए महफिल के दौरान बेखुदी में रहते हैं।

विज्ञान के अनुसार लौकिक स्नायु तंत्रिकाएं सुस्त पड़ लाती हैं। कॉस्मिक एनर्जी के गुरुत्व बल के असर से वे न्यूरांस उत्तेजित हो जाते हैं जो हमें अंतर्लोक में प्रवृत्त करते हैं। इनकी सघनता का बढ़ जाना ही समाधि की अवस्था कही जाती है। हमारे गुरु भाई सर्वेश के साथ एक और शानदार गुजरान घटित हुआ। एक दिन गुरुदेव का दाहिना पांव बाहर की तरफ खुला हुआ था। ठीक सामने सर्वेश बैठा हुआ था। वह पगतली पर ध्यान टिकाए हुए था। अचानक ही वहां रोशनी चमकने लगी। फिर उस प्रकाश में न जाने क्या-क्या दिखने लगा। पूरी बात नहीं बताई जा सकी। हम इसका खुलासा करते हैं। उनके दाहिने तलुए में त्रिशूल था। जब संत या फकीर अपनी मौज में होता है तब इस त्रिशूल एवं अंगूठे से रुहानी ऊर्जा निकलने लगती है। कभी कभी उक्त ऊर्जा आलोकित हो जाती है। उस वक्त वहां ललाट का स्पर्श निहाल कर देता है। संत बहुत कम मुरीदों को ऐसा अवसर देते हैं। इसका

एक कारण यह भी है कि उक्त अंगूठे का संबंध आज्ञा चक्र से रहता है। यदि कोई बाहरी मनुष्य (रजो या तमोगुणी) उसे छू लेता है तो ऊर्जा सम्पर्क टूट जाने की सम्भावना रहती है।

आगे चढ़ाई कराओ – बात झांसी की ही है। फतहचंद जी मिश्रा भी वहां थे। रात में उनकी नींद टूटी तो देखा कि बाबा हुजूर अपने बिस्तर पर नहीं हैं। इधर उधर नजर दौड़ाई; कहीं नहीं दिखे। तभी नजर पड़ी कि दादा हुजूर के आस्ताने का दरवाजा थोड़ा सा खुला हुआ है। जिज्ञासा वश वहां गये। झिर्री में से झांक कर देखा तो स्तब्ध रह गए। दादा साहब अपनी समाधी पर बैठे थे और बाबा हुजूर उनके पैताने खड़े थे। कुछ बात हो रही थी। तत्काल लौट कर लेट गए। हुजूर को तो सब ज्ञात था। दूसरे दिन गुरुदेव को कहा कि फत्ते को आगे रुहानी चढ़ाई के लिए कोई चीज दे दो। उधर फतहचंद मिश्रा को आगाह कर दिया कि ऐसी भूल दोबारा नहीं करे।

7. रुहानी पुरुष - मुरीदों के अनुभव

इस अध्याय के दो भाग हैं। पहले भाग में गुरुदेव के वे रुहानी प्रसंग लिए गए हैं जो साधकों के अनुभव हैं। दूसरे भाग में मेरे अपने अनुभव हैं। तो पहले साधकों की अनुभूतियां लेते हैं। अरविंद गर्ग ने ऐसे तीन प्रसंग बताए -कोई नया चेहरा आएगा; सन् 2003 की बात है। कांग्रेस के गठबंधन को केंद्र में बहुमत मिला था। सोनिया गांधी के प्रधानमंत्री बनने की शत प्रतिशत सम्भावना थी। आप ने कहा कि कोई नया आदमी आएगा। वहां बैठे हुए सब लोगों को आश्चर्य हुआ। दूसरे दिन मनमोहन सिंह प्रधान मंत्री बने।

पाकिस्तान के पीएम यहां नहीं आएंगे- पाकिस्तान के सदर परवेज मुशर्रफ आगरा आये थे। उनकी अजमेर यात्रा भी प्रस्तावित थी। सत्संग कक्ष में बात चल रही थी। आप बोले कि सदर साहब अजमेर नहीं आएंगे। ऐसा ही हुआ। अज्ञात कारण से उक्त यात्रा रद्द हो गई।

मोस्ट वांटेड आ कर चला गया - पत्रकार अरविंद के आप मजे लेते थे। एक दिन पूछा कि आज की क्या खास खबर है? अरविंद ने कहा कि कुछ नहीं। गुरुदेव हंसते हुए बोले कि तुम कैसे पत्रकार हो ? आज एक मोस्ट वांटेड (नाम हम नहीं लिख रहे हैं) अजमेर आया। बुर्के में था। जियारत कर के लौट गया। उसकी एक मन्नत पूरी हो गई थी।

दमदार नेता मिलेगा - ऐसे ही एक बार बोले कि आगे चल कर भारत को दमदार नेता मिलेगा। वह विश्व में हमारे देश की धाक जमाएगा। देश भी प्रगति करेगा। ये चारों भविष्य वाणियां सत्य हुई।

जान वापस आ गई - श्री आर सी शर्मा आश्रम के वयोवृद्ध साधक हैं। बाबा साहब के मुरीद रहे हैं। हुजूर तब पर्दा ले चुके थे। शर्मा जी की पोस्टिंग फुलेरा में थी। उनकी पत्नी चीनी देवी अकस्मात ही बीमार हो गईं। सांस उखड़ने लगी। आपने पीर साहब को तार द्वारा सूचित किया। दूसरे दिन सुबह की ट्रेन से पिता जी वहां गए। हालत बहुत खराब थी। आपने चाय बनवाई। दो घूंट पी ओर बोले कि चीनी, उठ चाय पीले। वे उठ गईं। चाय पी ली। फिर नहा कर खाना बनाया। स्पष्टीकरण - होता यह है कि संत की आंतरिक इबादत से शरीर की प्रत्येक कोशिका चैतन्य हो जाती है। प्रत्येक कोशिका से प्राण ऊर्जा मुक्त होती रहती है।

वही ऊर्जा जीभ के माध्यम से उसके उच्छिष्ट पेय पदार्थ में आ जाती है। उसे जब कोई अन्य व्यक्ति पी लेता है तो वह ठीक हो जाता है। एक स्वस्थ मनुष्य के शरीर में लगभग पांच खरब कोशिकाएं जैव ऊर्जा जेनरेट करती रहती हैं। संत के तप से ये सारी की सारी चेतन हो जाती हैं। इसी से संकल्प सिद्धि होती है ओर उसके थूक या लार में प्राणदायिनी क्षमता आ जाती है।

घर पर कह कर आये हो ? -एक गुरु भाई योगेश शर्मा हैं। किसी दिन स्थान से आश्रम जा रहे थे। शाम के छः बज रहे थे। गुरुदेव इसके बाद किसी से नहीं मिलते थे। अतः उसने फोन किया और अनुमति मांगी। बाबा ने हाँ कर दी। योगेश के साथ उनकी पत्नी निशा भी थी। रास्ते में योगेश के अंदर विचार आया कि यह दुनियादारी बेकार है। सब कुछ छोड़ देना चाहिए। जब आश्रम पहुंच कर पीर साहब को प्रणाम किया तो वे बोले कि - घर पर कह कर आया है क्या कि 'बाबा जी' बनूंगा? मतलब कि उन्होंने योगेश के मन की बात इतनी दूर से पकड़ ली। ..... विज्ञान में ऐसी मशीन बना ली गई है जो मन की बात स्क्रीन पर लिख देती है। इसे 'आई ब्रेन ' कहते हैं। दरअसल हमारी सोच का संबंध मस्तिष्क के न्यूरांस से है। सोच के साथ ही ये उत्तेजित होते हैं। सूक्ष्म तरंगें बनती हैं। कार्डियोग्राम जैसी लकीरें स्क्रीन पर उभरती हैं। फिर तत्काल उनका रूपांतरण भाषा में हो जाता है।

सुप्रीम पॉवर - पिताजी बीमार थे। उन दिनों रामगंज वाले घर में रह रहे थे। एक मुरीद योगेश उनके पास रेकी मास्टर के के गुप्ता को ले गया। गुप्ता जी ने आपके बदन पर हाथ लगाया। फिर चुप हो गए। योगेश ने पूछा कि कब ठीक होंगे ? आप बोले कि जब ये चाहेंगे तब ही ठीक हो जाएंगे। बाद में उन्होंने बताया कि गुरु जी में सुप्रीम पॉवर है। रोग इनके वश में रहता है; ये बीमारी के अधीन नहीं होते। संत के चारों तरफ रुहानी तरंगों का घेरा रहता है। उन पर रेकी तब तक असर नहीं करती जब तक वे उस तरंग जाल को खुद ही नहीं हटा देते।

उस्मान सेठ चकित रह गए - बम्बई से कोई उस्मान सेठ ख्वाजा साहब के दरबार में आते थे। वे आपके दर्शन भी करते थे। इत्र के व्यापारी थे। एक बार हज के लिए जाना था। आपसे भी आग्रह किया। आप नहीं जा सके। जब वे उस्मान भाई यात्रा से लौटे तो आश्रम में आए। गुरु जी ने उन्हें उनकी जियारत का जैसे आंखों देखा हाल सुना दिया। वे अचम्भित रह गए। सच तो यह है कि संत का आज्ञाचक्र यानी तीसरी आँख खुल जाती है। वह आध्यात्मिक दूरदर्शन का कार्य करती है। ....

हमारी स्थूल आँखों के न्यूरांस मस्तिष्क में होते हैं। ऐसे ही वहां सूक्ष्म आँख के न्यूरांस भी होते हैं। वे अपेक्षाकृत बहुत सूक्ष्म होते हैं और गुप्त ऊर्जा के रूहानी गुरुत्व बल से ही सक्रिय होते हैं। इसी को तीसरी आँख कहते हैं। .... अजमेर से भी एक इत्र वाले हज गये थे। उन्हें तो बाबा ने कह दिया कि हम तुम्हें वहीं मिलेंगे। लौट कर वे बोले कि आप मेरे आगे आगे चल रहे थे।

हंगामा शांत हो गया - आपके दामाद सुरेश शर्मा की चुनाव में ड्यूटी लगी थी। कड़ैल के पास किसी गांव में चुनाव कराना था। शाम को पांच बजे के बाद भी कई मतदाता मतदान से वंचित रह गये। वे टाईम बार हो गए थें किंतु समझे नहीं। हंगामा करने लगे - तुम्हें जाने नहीं देंगे; पेटियां छीन लेंगे। इनके पास कण्ट्रोल रूम के फोन नम्बर भी नहीं थे। तब आप ने गुरुदेव का ध्यान किया। थोड़ी देर बाद जब प्रस्थान के लिए बाहर निकले तो देखा कि वहां एक भी आदमी नहीं है। अजमेर आ गए। आश्रम पहुंचें। आगे फिर पंचायती इलेक्शन थे। गुरुदेव ने कहा कि इस बार कण्ट्रोल रूम के नम्बर ले जाना।

रुहानी इलाज - राजस्थान सरकार में राज्य मंत्री किशन मोटवानी आपके मुरीद थे। अजमेर की जल समस्या दूर करने के लिए उन्होंने बीसलपुर में बांध बनवाया। बांध दिखाने के लिए गुरुदेव एवं अन्य मुरीदों को वहां ले गये। वापसी में तेज बरसात हो गई। सब के साथ गुरु जी भी बुरी तरह भीग गए। बीमार पड़ गए। तब रात के वक्त आपने देखा कि उनका रुहानी इलाज किया जा रहा है। दादा साहब एवं बाबा हुजूर आपके भीतर ट्यूब लाइट लगा रहे हैं। सुबह आप ठीक हो गए। ऐसा भी होता है। महर्षि रमण ने देह त्याग के बाद भी सूक्ष्म शरीर से कई रोगियों की चिकित्सा की थी। परमहंस युक्तिगिरि जी देह त्याग के पश्चात अपने शिष्य योगानंद के पास आये। शिष्य को यकीन नहीं हुआ तो गुरु बोले कि मुझे बाहों में भींच कर देखो। योगाानंद ने ऐसा ही किया। वे दंग रह गए कि शरीर एकदम ठोस था। परमहंस श्यामा चरण लाहिड़ी के गुरु बाबा जी महाराज दो हजार वर्ष के हो चुके हैं; अभी भी रुहानी तौर पर जीवित हैं। तो गुरुदेव का रूहानी इलाज अवश्य हुआ होगा।

श्रीमती गीती अग्रवाल की अनुभूतियां - आप गुरुदेव की चहेती शिष्या थीं। उन्होंने आपको बहुत आगे बढ़ा दिया था। एक बार आप उनके साथ पानीपत गईं। अन्य साधक भी थे। सुबह स्नानादि के पश्चात आप पिताजी के कक्ष में पहुंचीं

तो देखा कि वे अकेले हैं लेकिन किसी से बात कर रहे हैं - जी साहब मै तो नहीं आ पाऊंगा किंतु बच्चों को भेज रहा हूं। रामदत्त जी व अन्य साधक बू अली कलंदर साहब की दरगाह में जियारत करने गये। वापस लौटने पर मालिक ने गीता बहिन से पूछा कि क्या देखा ? उन्होंने जो बात बताई उस से लगा कि उनको बू अली कलंदर के दर्शन हुए । यह गुरुदेव का करम था। दूसरा, आपके घर गुरु जी आये हुए थे। उस दिन झांसी वाले हाफिज साहब के भोग लगाया। पानी का गिलास रखना भूल गए। उधर से आवाज आई- खाना तो खा लिया; पानी कहां पियें? वह घर धन्य हो गया। यह आश्चर्य की बात नहीं है। अनेक संत, देह छोड़ने के बाद भी अपने शिष्यों के पास आते रहे हैं । यह प्रकाश तरंगों एवं परमाणुओं के त्वरित संयोजन का परिणाम है। अब विज्ञान मानता है कि न्यूट्रानो कण प्रकाश की गति से थोड़ा तेज भागते हैं। ऐसे ही दिव्य प्रकाश कणों से संयोजित देह का तत्काल कहीं उपस्थित हो जाना असम्भव नहीं। इनका आगमन दृश्य अदृश्य, दो रूप में होता है । अदृश्य उपस्थिति में भी आवाज तो सुन सकते हैं। एक दिन गीता बहिन इबादत में बैठी थीं। तभी गुरुदेव साक्षात हो गए। साधना की एक अवस्था के बाद जैसे ही साधक इबादत में बैठता है, उसका सम्पर्क पीर से जुड़ जाता है। आगे की दशा में पीर के साथ हर पल का जुड़ाव हो जाता है। गौर से देखा तो उनके साँस की ध्वनि सुनाई दी। देह में रोमांच, नयनों में आंसू। धन्य-धन्य।

झांसी की रानी - आप तो पिताजी के साथ झांसी जाती ही रहती थीं।...एक बार का वाकया है कि रेल्वे स्टेशन से बाहर निकलते ही आप विस्मित रह गईं। देखा कि झांसी की रानी उन्हें माला पहिना रही हैं। उस वक्त तो आप चुप रहीं। बाद में गुरु जी ने कहा कि शहीद भी कभी नहीं मरता है। यह रूहानी घटना थी यानी रूहानियत में माल्यार्पण हुआ था। यह बातें समझ में नहीं आती हैं। आएगी भी कैसे? हमारी सोच एक मिनट में साठ सेकण्ड तक सीमित है। उधर विज्ञान नेनो सेकण्ड (एक बटा दस करोड़ सेकण्ड) से भी आगे निकल कर फ्लिक सेकण्ड(एक बटा सत्तर करोड़ सेकण्ड) तक पहुंच गया है। दूसरी तरफ परमाणु के बाद प्रोटोन, इलेक्ट्रान व न्यूट्रोन से आगे मूल कण क्वार्क, लेप्टान, बोसॉन, आदि को ज्ञात कर चुका है। क्वार्क ऐसा कण है जो जगह नहीं घेरता। चेतना भी जगह नहीं घेरती यानी उसका कोई द्रव्यमान नहीं है। ये सब समझ लेंगे तब रुहानी सत्य को आत्मसात कर सकेंगे। भारतीय पुराण साहित्य में एक सेकण्ड के एक अरबवें भाग तक गणना की हुई है। इसे प्रजापति ब्रह्मा भी नहीं जानते थे। तो परमाणु जितने सूक्ष्म कण में

विद्युत आवेश की क्षमता कहां से आई ? यहां विज्ञान चेतन शक्ति को मानने के लिए बाध्य हो जाता है। ब्रह्मर्षि वशिष्ठ, राजर्षि विश्वामित्र आदि इन रहस्यों से अवगत थे इसीलिए सर्व समर्थ थे। हजरत मिश्रा जी इसी राह के फकीर थे।

शहर में बरसात, उनकी छत पर पार्टी - विजय और अनूप गुप्ता हमारे आश्रम के कर्मठ मुरीद हैं। उनके घर, बेटे नमन की बर्थडे पार्टी थी। बरसात का मौसम था। पार्टी का आयोजन घर के अंदर ही करने की बात चली। गुरुदेव के इशारे से यह कार्यक्रम छत पर हुआ। आदर्श नगर से भी आत्मीय जन आये। उन्होंने बताया कि सारे शहर में बरसात हो रही है; केवल शास्त्री नगर बचा हुआ है। इनका घर वहीं है। ऐसा होना चमत्कार नहीं है। बचपन में हम तमाशा देखने जाते थे। उस समय नंदराम एवं ब्याल व्यास उस्ताद के अखाड़े प्रसिद्ध थे। वर्षा के दिनों में मै सुनता था कि बारिश रोक देते थे। कोई मंत्र पढ़ते और नींबू काट कर आकाश में उछाल देते थे। तमाशा पूरा हो जाने के बाद ही बारिश होती थी। एक बार आश्रम में वर्षा कराने के लिए मंत्रायोजन हुआ। मुझे भी मंत्र का एक अंश जाप करने के लिए दिया गया। ऐसा लगा जैसे मै किसी भारी पत्थर के नीचे दब गया हूं; मंत्र का जाप इतना मुश्किल हो गया। यद्यपि मै रुहानियत की काफी अच्छी अवस्था में था फिर भी बड़ी कठिनाई से ढाई घण्टे जाप कर सका। बाद में पानी बरसा। पॉजीटिव मंत्र से? सकारात्मक ओर नेगेटिव मंत्र से नकारात्मक ऊर्जा निकलती है। उससे वैसे ही काम होते हैं। पार्टी के बाद ज्यों ही गुरुदेव अपने आश्रम पहुंचें त्यों ही शास्त्री नगर में भी झमाझम वर्षा आरम्भ हो गई।

आकाश में जय बाबा - कोई परिवार वैष्णो देवी की यात्रा के लिए गया था। साथ में मुश्किल से तीन वर्ष का एक बच्चा भी था। उक्त परिवार गुरुदेव को बहुत मानता था। माता के मंदिर की चढ़ाई वाले मार्ग पर वह बच्चा आकाश में देख रहा था। फिर टाटा करने के अंदाज में अपना हाथ हिला दिया। उसकी बुआ ने सवाल किया कि - किस से बात कर रहा है ? वह बोला कि अरे जय बाबा साथ चल रहे थे। अब चले गए- तू रूप है किरन में, सौंदर्य है सुमन में। तू प्राण है पवन में, विस्तार है गगन में।

दुकान पर लाईन लगने लगी - एक कोई कट पीस वाला व्यापारी आपका मुरीद था। तंग हाली बढ़ गई। आप को दया आ गई। अपने पीर से प्रार्थना की। बात बन गई। उस आदमी की दुकान पर ग्राहकों की लाईन लगने लगी। पास वाली

दुकानों पर ग्राहक नहीं जाता; क्यू में खड़ा रह कर उसकी दुकान से ही कपड़ा खरीदता था। ...आप ने ऐसा तो बहुत किया; दाल रोटी का जुगाड़ प्रत्येक मुरीद को उपलब्ध करा दिया।

हनुमान जी के चोला चढ़ाओ - ये हैं प्रदीप जैन। एक बार गुरुदेव के पास गए। बोले कि काम धंधा धीमा पड़ गया है। आप ने कहा कि हनुमान जी का ऐसा मंदिर ढूंढो जहां दीया बत्ती नहीं होती हो। तुम वहां 21 शनिवार चोला चढ़ाओ। प्रदीप जी ने ऐसा ही किया। पहले शनिवार के बाद ही अनपेक्षित रूप से दूध का व्यवसाय मिल गया। अच्छी आय आरम्भ हो गई।

नोटों की गड्डी दिखी - इनका बच्चा बीमार हुआ। अस्पताल में भर्ती कराया। इन्हें ध्यान में नोटों की गड्डी दिखी। दूसरे दिन एक परिचित बीस हजार रुपए दे गया। इन्होंने उसे तीन साल पहले उधार दिये थे। इस दौरान उसने रकम नहीं लौटाई।

गुड़ की गजक - आप बाबा हुजूर के आस्ताने में बैठे थे। अंर्तवाणी के जरिए हुजूर की आवाज सुनाई दी; अगली बार गुड़ की गजक लाना। आगामी गुरुवार को आप का बच्चा बीमार हो गया। आप हुजूर के रोजे पर नहीं जा सके। उधर एक गुरु भाई के मन में गुड़ की गजक ले जाने की इच्छा स्फुरित हुई। उसने केसरगंज से गजक खरीदी और वह प्रसाद पेश कर दिया।

याद किया और आ गए - ऐसा प्रीति जैन के साथ हुआ। घर पर सुबह - सुबह बात की कि किसी दिन गुरु जी को अपने घर भी बुलाएं। और उसी दिन दोपहर में द्वार पर खटका हुआ। दरवाजा खोला तो देखा कि गुरुजी खड़े हैं। श्रद्धा, आंसू, मान सत्कार, आभार - वह यादगार दिवस हो गया।

हमारा लिफाफा तो दो - सुरेश जी के छोटे भाई जगमोहन की सगाई का दिन था। मथुरा जिले के ओल गाँव में समारोह था। उनके यहां एक परम्परा है कि सगाई में नेग का पहला लिफाफा गुरु के नाम का होता है। ...तो उक्त एनवलप सुरेश जी को दे दिया; इस विचार से कि वे अपने गुरु जी को दे देंगे। कार्य सम्पन्न होने के बाद आप अजमेर आ गये। पिता जी से मिलने आश्रम गए। वहां गुरुदेव बोले कि हमारा लिफाफा तो हमें दो। ...आप यहां थे किंतु नजर उस समारोह पर थी कि सहर्ष सम्पन्न हो जाए।

मल माह में मकान का नांगल – आप के प्राथमिक मुरीदों में श्री मुन्ना लाल मित्तल भी रहे हैं। बात उस समय की है जब महबूब की कोठी वाला मकान बन गया था। गृह प्रवेश की रस्म करनी थी। आप गुरुदेव की सेवा में हाजिर हुए ओर नांगल के लिए दिन तय करने का आग्रह किया। दिक्कत यह थी कि तारा लग चुका था और मल मास भी शुरु हो गया। गुरुदेव तो परम थे। वे ये बातें नहीं मानते थे। उन्होंने मल माह में ही गृह प्रेश कराया। आज यह परिवार शहर में अग्रणी है। आप ने बताया कि इन के बच्चों की शादी के जो दिन गुरुजी ने निश्चित किये वे ही शुभ मुहूर्त्त हो गए। इन के घर में तीज, त्योहार, शगुन, लग्न, पूजा, पाठ आदि सब गुरु कृपा में समाहित हैं।

गुरु ही कुल देवता हैं – यह प्रसंग अनूप गुप्ता एवं उनके परिवार से जुड़ा हुआ है। गुरु दीक्षा के बाद वाला आरम्भिक दौर था। मकान बनाना था। गुरु जी ने जमीन पसंद कर दी। अब साई की रकम देनी थी। जेब में पैसे नहीं। गुरुदेव ने कहा कि सब हो जाएगा; और हो गया। अनपेक्षित ढंग से पचीस हजार रुपए का प्रबंध हो गया। इस के बाद रजिस्ट्री करानी थी। बड़ी राशि देनी थी। गुरु कृपा से उस वक्त उधार पर वह काम हो गया। मालिक की नजर हुई। काम चल गया और नाम भी चल गया। वे कहते हैं कि हमारे कुल देवता तो गुरु जी ही हैं – ऐसो कौ उदार जग माहिं ! बिनु सेवा जो द्रवै दीन पर गुरु सरिस कोउ नाहिं।

चौंक गये लक्ष्मीनारायण – ये गुरुदेव के परम शिष्य थे। बाबा साहब के भण्डारे की बात है। भण्डारा पूरा हो गया। सुबह का वक्त था। पिताजी, दिल्ली वाले चाचाजी श्री महेन्द्र प्रसाद जी मिश्रा और लक्ष्मीनारायण जी स्थान पर थे। लक्ष्मीनारायण के पास स्कूटर था। गुरु जी बोले कि हम तीनों तो एक स्कूटर पर नहीं बैठ सकते; इसलिए तुम अकेले चले जाओ। हम दोनो पैदल पहुंच जाएंगे। ऐसा ही हुआ। लेकिन जब लक्ष्मीनारायण गुरुदेव के घर पहुंचे तो दंग रह गए। वे दोनो चाय पी कर कप टेबल पर रख रहे थे। ये स्कूटर से भी तेज गति से पैदल कैसे चल लिए ! स्पष्टीकरण – एक प्राचीन साधना का नाम है; लुंगगोम। इसका मतलब है प्राण वायु को नियंत्रित करना। ऐसा योगी घोड़े से भी तेज चल सकता है। लगातार सैकड़ों मील तक चल सकता है। बाबा हुजूर ने गुरुदेव को यह सिद्धि कराई थी। गुरुदेव, महेन्द्र चाचा जी को अपनी शक्ति से खींचते हुए ले आए। दादा हुजूर भी एक बार इसी सिद्धि के सहारे अजमेर से झांसी पैदल ही कुछ घण्टों में पहुंच गए थे।

जोरदार झटका लगा - लक्ष्मीनारायण एक नग खरीदने जयपुर गए। जिस दुकान पर वे नग देख रहे थे वहां कोई साधु आया। उनकी तरफ देख कर बोला कि इतने बुलन्द फकीर के शिष्य हो; ओर यहां पत्थर का टुकड़ा ढूंढ रहे हो !...यह सुनते ही उन्हें जोरदार झटका लगा। तत्काल दुकान से नीचे उतर गए और अजमेर आ गए।

श्री गोपाल धाकड़ -दमदार भक्त, दमदार साधक और साफ सुथरे इन्सान। जहाजपुर के पास पारौली गांव में रहते हैं वहीं गुरुदेव का मंदिर बनवाया है। युवावस्था में आप को बाबा बादामशाह की दरगाह वाली जगह दिखती थी। आप उसे इधर उधर तलाशते रहे। फिर पढ़ाई के लिए अजमेर आ गए। डी.ए.वी. कालेज में प्रवेश लिया। लेकिन सपने में दिखती रहने वाली जगह की तलाश जारी रही। ...और एक दिन वहां पहुंच ही गए। ...गुरुदेव के घर में कमरा मिल गया। उनकी कृपा भी उपलब्ध हुई।

एक बार गांव से मूंगफली की बोरी लाए। नौ नम्बर पेट्रोल पम्प पर उतरे। कोई साधन नहीं मिला बोरी वहीं रख कर अपने पीर के घर, रामगंज, चले गए। वहाँ सारी बात बताई। लौट कर देखा कि बोरी अपनी जगह रखी हुई है। इतने व्यस्त चौराहे पर लावारिस पड़ी रही किंतु कोई नहीं ले गया।

श्री अरुण गर्ग - ये शांत हैं; मौन, धैर्य और मुस्कान का समन्वित रूप हैं। गुरुदेव इस युगल के लिए कहते थे कि ये दोनो जब हमारे पास आते हैं तो हमें बहुत अच्छा लगता है। हमारा मन इन के घर जाने के लिए इच्छुक रहता है। ..यह बहुत बड़ी बात है। घटना उस समय की है जब आप ने दीक्षा नहीं ली थी। विजयलक्ष्मी पार्क में इनकी बेटी की शादी थी। दिन में जोरदार बरसात हो गई। पार्क में चार फीट पानी भर गया। उस वक्त शाम के पांच बजे थे और नौ बजे बरात आनी थी। तब गुरुदेव के दो तगड़े शिष्य इनके साथ थे - अनूप गुप्ता एवं लक्ष्मीनारायण गर्ग। दोनो ने गुरु कृपा से पानी निकल वाया। वहां मिट्टी डलवाई। समारोह स्थल को एक दम दुरुस्त कर दिया। विवाह धूमधाम से सम्पन्न हो गया।

इनकी ही दूसरी पुत्री का विवाह दिसम्बर, 2008 में तय हुआ। इधर गुरु साहब ने 22 नवम्बर के दिन पर्दा कर लिया। शादी दिल्ली में होनी थी। रामदत्त जी भी वहां चालीसवें से पहले जाने में असमर्थ थे। अरुण जी बहुत निराश हुए। अब गुरु की रूहानी कृपा ऐसे हुई कि अपने एक मुरीद रमण भाई को पानीपत से वहां भेज दिया। अरुण जी कहते हैं कि तत्काल समारोह स्थल सुगंध से भर गया। सब

तरफ नूरानी चमक फैल गई। ....आगे चल कर आप के सिर में चोट लग गई। स्थिति गम्भीर थी। तब गुरुदेव की नजर से ऑपरेशन हुआ। आप स्वस्थ हो गए। गुरु के प्रति आप के अदब को सलाम !

एक ऐतिहासिक क्षण - रामगंज मे हरीश काका जी की एक दुकान थी; कटपीस की । गुरुदेव वहां बैठते थे। एक दिन उनके पास श्री रमेश चंद शर्मा (बाबा हुजूर के मुरीद) और उनके छोटे भाई श्री अशोक शर्मा भी बैठे हुए थे। सामान्य सी बातें हो रही थीं। तभी गुरुदेव ध्यान में डूब गए। आज्ञाचक्र वाली जगह पर आलोक कौंधने लगा। ...फिर आप बोलने लगे - देख लो; अभी मै ही बादाम शाह हूं.. सन्देह मत करो ..मै बादाम शाह हूं। रूहानियत की एक परम लहर आ कर चली गई। दूसरे ही क्षण आप सामान्य हो गए। लेकिन चुप.. बोले कुछ नहीं। पूरे जीवन में एक बार ही ऐसा हुआ।

उधर श्रीकृष्ण भी स्वयं के जीवन में एक ही बार ब्रह्म की अवस्था में स्थिर हुए और हमारे विश्व को ' श्रीमद्भगवत्गीता ' मिल गई। उस दशा में वे अनेक बार बोले - मै ब्रह्म हूं। द्वारिकाधीश के रूप में कभी ऐसा नहीं कहा। ...महाभारत युद्ध के बाद एक दिन अर्जुन ने कहा कि मै आप का वह दिव्य उपदेश भूल गया हूं; कृपया वापस कहिए। तब कृष्ण बोले कि उस समय मै ब्रह्म की उच्चतम अवस्था में था। अब वापस उस अवस्था को प्राप्त करना सम्भव नहीं है।.... एक ही तरंग उठती है जो व्यक्ति को परम से एकाकार वाली अनुभूति करा देती है।

वेद के किसी ऋषि ने भी कभी ऐसी ही अनुभूति की किंतु बोला नहीं; लिख दिया -अहंब्रह्मस्मि...मै (प्रत्येक मनुष्य का परम मै) ब्रह्म हूं। यह महावाक्य बन गया। फिर उपनिषद के ऋषि ने भी स्वयं के शिष्य में ऐसी ही परम अवस्था देखी। तब कहा - तत्वमसि; तू (जीव भाव से मुक्त होने पर) ही ब्रह्म है। अपने शिष्य को ऐसी अनुभूति करा दी। यह भी महा वाक्य हो गया। उवैसिया मुरीदों के मध्य गुरुदेव का उक्त उद्घोष भी महा वाक्य ही है।

परमहंस श्री फजल अहमद खां ने अपने मुरीद मुंशी राम चंद्र जी को एक बार समझाया कि जब कोई पीर ही अपने शिष्य में उतर जाए तो ऐसे मुरीद को मुराद कहते हैं। वे मुंशी जी में उतर गए थे। उन के पास जो ब्रह्म विद्या थी ,वह उन्हें दे दी। ... हमारे गुरुदेव के साथ ऐसा ही था। उधर मुंशी राम चंद्र जी के खास मुरीद श्री

चतुर्भुज सहाय थे। गुरु ने स्वयं का अक्स उन्हें दे दिया। दोनो एक जैसे दिखते थे। लोग भ्रमित हो जाते थे । एकरूपता ऐसी भी होती है।

गुरुदेव अपने पीर में फना थे लेकिन कभी बोले नहीं। स्वयं को जज्ब किये हुए रहते थे। उस दिन जरूर जबरदस्त जलाल था कि वे उजागर हो गए। वस्तुतः हम जिस किसी के ख्याल में फना हो जाते हैं, तो खुद भी वैसे ही हो जाते हैं - राधा बिल्कुल कृष्ण जैसी हो गई थी। गोपियां मक्खन बेचते समय बोलती थीं - कोई कृष्ण ले लो; वे कृष्णमय हो गईं।...तो गुरु के भाव में रहने वाले मुरीद की देह तो खुद की रहती है किंतु अंदर रूहानी रूप पीर का हो जाता है। देह मिश्रा जी की, शख्सियत बाबा बादामशाह की। देह बाबा हुजूर की, रूप कलंदर निजामुल हक साहब का। देह निजामुल हक कलंदर की लेकिन ओरा उवैस करनी जी का। शरीर उवैस करनी साहब का किंतु चेतनता मोहम्मद साहब की और देह तो मोहम्मद साहब की किंतु पैगाम खुदा का। यही सच है।

8. रुहानी पुरुष - मेरी अनुभूतियां

इस अध्याय में एक पूरा रूहानी वृत्तांत है - मुझ पर शक्तिपात से लेकर वर्तमान में निरंतर हो रही रहमत तक। जीवन में तप्त पथरीले रास्ते पार करते हुए मैं कालेज शिक्षा में अध्यापक के पद पर पहुंचा था। तब तक बाहरी हकीकत को उसके पूरे तीखे तेवर के साथ भुगत लिया था। लिखना, पढ़ना और छपना तो आरम्भ से ही जारी रहा। पिता रामभरोसे लाल जी की शुभेच्छा ओर माँ शांति देवी का आशीर्वाद अवश्य साथ रहा। भीतर एक रूहानी कसक बार-बार सिर उठाती रहती थी। अब जीवन आराम से चल रहा था। एक दिन अरविंद गर्ग मुझे गुरुदेव के पास ले आए। कहा कि राजस्थान पत्रिका में बाबा बादाम शाह वाली दरगाह पर लेख छपवाओ। मैं पत्रिका के लिए लिखता रहता था। सामान्य सी बातचीत हुई। आप बोले कि आते रहना। आगे 1-2 महीने में एक बार गया। जाने कैसे गुरुदेव पर किताब लिखने की बात चल पड़ी। यह मेरी रुचि का विषय था। सामग्री संकलन के लिए आश्रम आने लगा। एक दिन बैठे-बैठे ही नशा छा गया। कॉलेज में सूफीवाद पढ़ाता था, इसलिए बात समझ में आने लगी। दूसरी बार नशा अधिक गहरा हुआ। मजा आया। चस्का लग गया। अब आश्रम की याद आने लगी। किताब प्रकाशित हो गई - हमारे पूज्य गुरुदेव।

अब प्रति रविवार को आश्रम आने की उतावली रहती थी। थोड़ी बातचीत भी होने लगी। मैं अपना ज्ञान बघारता, सत्संगी चुप रहते और गुरुदेव मुस्कराते रहते। बीच-बीच में वे प्रश्न भी कर लेते। प्रश्नों के जवाब दे कर मैं स्वयं अपनी पीठ थपथपाने लगता। अब यह सब याद कर के हंसी आती है। रूहानी लकीर गहरी होना शुरू हो गई। मैंने शोध संस्थान स्थापित करने की बात चलाई। प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। ''बाबा बादाम शाह आध्यात्मिक शोध संस्थान'' आरम्भ किया गया। एक दिन पुस्तकालय में बैठे थे। श्री आर सी शर्मा के साथ नाम दीक्षा की बात हो रही थी। मैंने कहा कि मेरी दीक्षा तो अभी तक नहीं हुई। वे आश्चर्य चकित रह गए। बोले कि मजे ले रहे हो और कहते हो कि अभी नाम नहीं लिया। मैं बोला - हाँ, अभी तक उन्होंने बुलाया ही नहीं। अब शर्मा जी गम्भीर हो गए; बोले कि वे क्यों बुलाएंगे? इसी वक्त जाओ और नाम के लिए आग्रह करो। उस दिन योग प्रबल था। मैं चला गया। आप रहस्यमयी हँसी हँस दिए। अगले गुरुवार के दिन सपत्नी दीक्षा हुई। महफिलखाने में बैठे थे। नाम दे कर बोले कि सत्संग कक्ष में बैठ

जाओ। वहां बैठते ही कमाल हो गया। जिंदगी ने रूहानियत में ऊंची छलांग मार दी। बेखुदी ने प्रवेश किया; खुदी को धक्का मार कर बाहर कर दिया। शिव शर्मा बेहोश। बरसों से सोई हुई मुरीदी को होश आ गया। वह उछल कर बैठ गई। शक्तिपात हुआ।

शक्तिपात- कुछ शब्द देखिए - तड़ितपात यानी आकाश से बिजली गिरना। करकापात; ओले गिरना। दृष्टिपात अर्थात किसी पर नजर डालना। ऐसे ही शक्तिपात; मुरीद में गुरु द्वारा रूहानी शक्ति डालना। रुहानी नजर से देखा और हो गया। रूहानी स्तर पर संकल्प किया और शक्तिपात हो गया। एक ही क्षण में हो गया। जीवन भर के लिए हो गया। अपनी रूहानी ताकत से मुरीद की कुण्डलिनी शक्ति को टच कर दिया और वह सक्रिय हो गई। स्त्री के अण्डाणु को पुरुष के शुक्राणु ने टच किया और गर्भ में बच्चा बनना शुरू हो गया। तो गुरुदेव ने उस दिन शक्तिपात किया। मुझे लगा जैसे रीढ की हड्डी के नीचे से कोई तरंग उछल कर ऊपर आई और गर्दन-पीठ के जोड़ पर बैठ गई। फिर दूसरे ही क्षण वहाँ से भी छलांग लगा कर सामने ललाट पर दोनों भौहों के मध्य यानी आज्ञा चक्र पर टिक गई। अद्भुत अनुभूति, आनंद का अनिर्वचनीय क्षण। इसके बाद क्या हुआ; पता नहीं। बाहरी एहसास मिट गया। दो घण्टे बाद ध्यान टूटा। गहरी खुमारी, आनंदमय नशे की अनुभूति हो रही थी। गुरुदेव तो ऐसे अनजान बने रहे कि जैसे उन्हें कुछ ज्ञात नहीं हो।

देवों के दर्शन; अंदर विस्फोट -

ध्यान की गहराई में डूबना तो सामान्य बात हो गई। एक दिन बहुत बड़ा तांबे का त्रिशूल दिखा। कैलाश पर्वत पर महादेव के दर्शन हुए। चांदी, सोने एवं नीलम के पहाड़ दिखे। मानसरोवर झील के दिव्य दर्शन हुए। सब कुछ अनिर्वचनीय था। तत्पश्चात किसी और वक्त देव दर्शन हुए - तीन तीन की पंक्ति में बैठे हुए महात्मा एवं देवताओं की रील पांच मिनट तक चलती रही होगी। सब से ऊपर प्रकाश का गोला। गुरुदेव ने समझाया कि इस प्रकाश में लीन होना है। यह आज्ञाचक्र पर दिखता है। बाद में ब्रह्मरंध्र वाली जगह घूमता है। इसी को वहां स्थायी करना है। प्रकाश पर ध्यान टिकाए रहो; आगे बढ जाओगे। वह दृश्य मेरे लिए स्वर्णिम उपलब्धि रहा।

ध्यान, समाधि, ध्यान; यह क्रम चलता रहा। तब पंद्रह दिन का ऐसा दौर आया कि मैं निहाल हो गया। ध्यानावस्था के दौरान अंदर पीताभ लाल रंग के

चक्र दिखने लगे। एक एक चक्र में विस्फोट होता था। मैं समझा कि नीचे वाले सूक्ष्म चक्र खुल रहे हैं। बाद में गुरु जी ने स्पष्ट किया कि पहले वाले जन्मों के संचित भोग संस्कार कट रहे हैं। उस दिन आप बोले कि - मैं तुम से आज बहुत खुश हूं। मैं बड़भागी हो गया। ऐसे दो रहमो करम आगे भी हुए - 'तस्मै श्री गुरवै नमः' किताब पूरी हुई। पहली प्रति गुरुदेव को अर्पित की। वे मुस्कराते हुए बोले कि 'तुम्हारा कल्याण होगा'। एक मुरीद को इस से ज्यादा क्या चाहिए ! उस दिन मुझे 'वह' मिल गया जिसके लिए मनुष्य गुरु के पास जाता है। तीसरा दृष्टांत हुजूर की दरगाह में घटित हुआ। पिता जी यानी गुरुदेव भी वहीं थे। मैं आश्रम या स्थान जाता हूं तो रात में सोता नहीं हूं। इबादत करता हूं। उस दिन भी बाहर दालान में बैठ गया। आधी रात के बाद ध्यान टूटा तो देखा कि दो कुत्ते मेरे पास दायें बाये बैठे हैं। एकदम शांत, आत्मलीन से। ध्यान वापस लग गया। फिर दोबारा आंख खुली तो मैं अंदर महफिलखाने में जाने के लिए उठ गया। वे दोनों कुत्ते भी उठ कर पता नहीं किधर चले गए। सुबह गुरुदेव ने पास बुला कर पीठ थपथपाई और कहा - बहुत अच्छे। वे दो फरिश्ते थे जो हुजूर के आदेश से तुम्हारी रखवाली कर रहे थे। इधर से कई नकारात्मक शक्तियां भी गुजरती हैं; उनसे तुम डर न जाओ इसलिए वहां फरिश्ते बैठा दिये थे। ऐसे पीर को शत् शत् प्रणाम।

शक्तिपात के बाद आध्यात्मिक यात्रा आरम्भ हो जाती है। ललाट के मध्य बिंदु से रोशनी फूटने लगती है। श्वेत, पीली, नीली। कभी त्रिकोण आ जाता है। उस त्रिकोण के मध्य श्वेत बिंदु। इबादत करते करते प्रकाश की लकीर फैलने लगती है ; आकाश जितनी फैल जाती है। चांद तारे, ग्रह नक्षत्र दिखने लगते हैं। दीक्षा गुरु का चेतन शरीर प्रति पल साथ रहने लगता है। घर में, सोफे पर, ड्राइंगरूम में, पलंग पर। सड़क पर साथ चलता है। कॉलेज के क्लास रूम में भी आप साथ रहते थे। अनेक बार आप बाबा हुजूर के साथ घूमते हुए घर में नजर आने लगे। चाय एवं भोजन का साक्षात भोग लगने लगा। बिना भोजन किये ही पेट भर जाता था। देवली में अपने ही घर का पता भूल जाता। रोटी बनाते वक्त तपते तवे को कपड़े के बिना ही पकड़ कर हाथ जला लेता था। सौदा खरीद कर पैसे वापस लेना भूल जाता था। अंदर चौबीसों घण्टे नाम गूंजता रहता था। एक ही नाम न जाने कितनी धुनों में गूंजता रहता था। परीक्षा में ड्यूटी के दौरान ध्यान चढ़ जाता लेकिन मेरे रूम में कभी भी नकल का केस नहीं पकड़ा गया।

रात्रि में जगा देते थे

शक्तिपात के बाद वाले शुरुआती दिनों की बात है। रात के दो ढ़ाई बजे आप पीठ पर थपकी देते और कहते कि उठो, इबादत का वक्त हो गया। नहीं उठता तो दोबारा थपकी लगाते। उठ कर बैठते ही ध्यान चढ़ जाता ।समाधि सी लग जाती। तीन घण्टे तीन मिनट की तरह बीत जाते। नशा ऐसा चढ़ा कि दिन के समय रात होने का इंतजार करने लगा। एक दिन क्लास में तुलसीदास के पद पढ़ा रहा था। ध्यान लग गया। पीरियड समाप्त होने पर विद्यार्थी बोले कि सर! आज तो आपने प्रवचन देने जैसा पढ़ाया।

अंदर बोलने लगे - तब मैं अजमेर आने के लिए बस स्टैण्ड पर खड़ा था। अचानक ही ख्याल आया कि जेब में पैसे नहीं हैं। देखा तो वाकई जेबें खाली थीं। चिंता में उदास हो गया कि रुपये कहीं गिर गए। तभी आपकी आवाज आई - घर जाओ; मिल जाएंगे। घर गया तो आप बोले कि पलंग के दाहिने हाथ वाले पैताने की तरफ देखो। वहां सारे पैसे पड़े हुए थे। ....ऐसे ही एक साथी लेक्चरर् ने स्टाफरूम की अल्मारी वाली चाबी पार कर ली। मैं घर लौट रहा था। एक अन्य प्राध्यापक भी साथ थे। उन्होंने बहुत तलाश की किंतु चाबी नहीं मिली। अंदर परिचित आवाज आई कि कल सुबह तुम्हारी अल्मारी के पास ही चाबी मिल जाएगी। यह बात मैंने उस लेक्चरर् को भी कह दी कि देखना हमारे गुरुदेव का कमाल। अगले दिन हम दोनों साथ ही कॉलेज गये। चाबी उनको ही दिखी। जहां के लिए कहा था वहीं मिली। ऐसी तो ढ़ेरों बातें हैं।

एक अन्य अविस्मरणीय घटना - आप पर्दा फरमा चुके थे। आपके लिए आस्ताना बनना था। मुझे देवली जाना था। बैग उठा कर घर से निकलने लगा कि मन फिर गया। कोई मेरे भीतर फोर्स कर रहा था कि आज मत जाओ। दो चार मिनट द्वंद्व चलता रहा। फिर मैंने बैग रख दिया। पत्नी को आश्चर्य हुआ कि बिना कारण क्यों एक सी एल बिगाड़ रहे हो। मैं चुप रहा और नौ बजे आश्रम के लिए चल दिया। वहां जाने पर देखा कि गुरुदेव के आस्ताने का शिलान्यास है। मुझे तो ज्ञात ही नहीं था। अब समझ में आया कि पीर साहब ने ही मुझे बुला लिया। शिलान्यास के दौरान गहरा ध्यान चढ़ा। सफेद पौशाक में अनेक बुजुर्गों की उपस्थिति के दर्शन हुए। रूहानी अनुभूतियों से बेखुदी में पहुंच गया। जहां बैठा था वहीं लुढक गया।

नीम का पेड़- रामगंज वाले मकान में नीम का एक पेड़ था। उस पेड़ से मुझे हरदम एक मीठी गूंज सुनाई देती थी। उठते-बैठते, खाते-पीते वही धुन रहती। यह बात गुरुदेव को बताई। आप बोले कि उस वृक्ष पर दो दिव्यात्माओं का वास है। देखना वहां दो कबूतर होंगे। इस पेड़ को कटाना मत। मैंने गौर किया तो पाया कि वहां दो कबूतर हरदम बैठे रहते हैं। फिर मेरी अनुपस्थिति में सामने वाले सरदार जी ने उक्त पेड़ कटवा दिया। कारण कि उसकी पत्तियां झर झर कर पूरी गली में कचरा कर देती थीं। गुरुदेव बोले कि यह अच्छा नहीं हुआ। मतलब नहीं समझाया।

मनोसंवाद शुरू हुआ- एक दिन बोले कि कब तक मुंह से बोलते रहोगे? अब मन में ही सवाल करो ओर जवाब भी मन में ही सुनो। तुम्हें प्रति दिन शाम चार से पांच बजे का समय देते हैं। तब से मनो संवाद शुरू हो गया जो आज तक जारी है। रूहानियत संबंधी ऐसा कोई प्रश्न शेष नहीं रहा जिसका जवाब आपने मन में नहीं दिया हो। पर्दा लेने के बाद तो रफ्तार बहुत तेज हो गई। एक दो दृष्टान्त प्रस्तुत हैं - सूक्ष्म शरीर क्या होता है ? आपने गहरे ध्यान में ले जा कर दिखा दिया-हल्के गुलाबी रंग की आकृति; कुछ-कुछ पीताभ। चांदी जैसी पतली डोर से बंधी हुई। सिर के ऊपर से निकल कर आकाश में विचर रही है। चांदी की डोर के विषय में सुनाई दिया कि यह सूक्ष्म प्राण है। अब सारा मामला दृश्य श्रव्य हो गया। सूक्ष्म देह अब सितारों के मध्य से गुजर रही है। अब आकार बड़ा हो रहा है। चारों तरफ श्वेत नीली रोशनी चमक रही है। अब यह वापस लौट रहा है। मैं जिस आसन में बैठा था उसी आसन के आकार में वह स्थूल देह में समा गया। दूसरा उदाहरण -एक दिन आस्ताने में बैठा था। आपकी आवाज आई - अब हमें बाहर देखना बंद करो। खुद के दिल में देखो। मजार में नहीं, हृदय में देखो। लो यह आस्ताना तुम्हारे अंदर। मजार भी तुम्हारे भीतर। देखो इनका सूक्ष्म रूप । यह रहा महफिलखाना। यह पूरा आश्रम। जाओ। हमें याद कर के भोजन करो; भोग लग जाएगा। खाना-पीना; सोना-जागना; सब हमारा। अब कहीं भी रहो, हम तुम्हारे अंदर ही हैं। ऐसा ही होता था। गफलत बढ़ जाती और लगता कि मैं हूं ही नहीं। बाहरी भोग लगाना छूट गया। जाप क्षीण हो गया; अंदर नाद सुनने लगा। कभी धीमा तथा कभी बहुत तेज। ऐसा लगता जैसे नाद मेरे साथ चल रहा है। मेरी दुआ है कि गुरु ऐसी कृपा सब पर करें।

वह अद्‌भुत दौर- लगभग डेढ वर्ष तक हमारे घर में आपकी रहमत का विलक्षण दौर चला। संध्या के बाद आप मेरे भीतर झूमने लगते। न जाने कहां से

भजन सृजित होते ओर मैं गाने लगता। धुन कौन बनाता, नहीं पता। शुरू में तो मेरी पत्नी कुछ नहीं समझी। बस, विस्मित रह जाती। लेकिन बाद में भजन को लिखने लगी। एक उदाहरण - तेरा दर छोड़ कर मुझे अब कहीं नहीं जाना; तेरा दर ही है मेरा भी ठिकाना। .... वो सांझ भई थी उजियारी , जब घर आए थे गिरधारी। खुद ही खुद के दीप जलाते, खुद ही खुद की आरती गाते; खुद ही खुद को भजन सुनाते और खुद ही भरे किलकारी; मेरे घर आये रे गिरधारी।..... यह थी बेखुदी में भक्ति। भक्ति में संगीत। संगीत में रस और रस में आनंद। कभी सोहं गूंज गया तो कभी सम्बोधि उतर आई। घर की हवा में अनजाने भजन सुनाई देते थे। धुन गूंजती; शब्द साकार हो जाते। अनेक बार आप सोफे पर बैठे हुए दिखते रहते थे। आठ दस दिन में एक बार ऐसा हो ही जाता था।

कई बार धारा प्रवाह आध्यात्मिक विषयगत विचार झरने लगते थे। उन्हें भी गुरुदेव की शिष्या और मेरी पत्नी लिख लेती थी। आत्मा, गुरु, ज्ञान, भक्ति, कर्म, ध्यान, दर्शन आदि अनेक विषयों पर मौलिक कथन। आज ऐसे लगभग दो सौ पृष्ठों जितना मैटर हो गया है। सम्पादित नहीं हो पाने के कारण अप्रकाशित है। स्वयं ही चिदाकाश में भजन बन कर उतरते, धुन बन जाते , गायन हो जाते और घर को रूहानी कर देते। इस तरह मुझे भाव भक्ति का रास्ता पार करा दिया। मूलत: मैं ज्ञानयोग का साधक हूं। कर्म तो जीवन भर किया लेकिन भक्ति नहीं हुई। यह कमी स्वयं आपने पूरी कराई।

बहुत डर लगता था- शक्तिपात के बाद वाले दिन थे। समाधि जैसी अवस्था में कहीं डूबने लगता था। लगता कि किसी गहरे कुए में गिरता जा रहा हूं। गिरने के लिए अंतिम छलांग वाले बिंदु पर डर के मारे ध्यान टूट जाता। ऐसा महसूस होता था कि जैसे मर जाऊंगा। गुरुदेव कहते कि मरना ही तो है; अच्छा होता यदि मर जाते। एक बार किसी दरगाह में इबादत कर रहा था। चारों तरफ ऊंची दीवारें। अचानक वहां पानी भरने लगा। पानी मेरी कमर से ऊपर तक आ गया। फिर वही डर कि मर जाऊंगा। झटके के साथ नीचे गिरा। गुरुदेव ने फटकार लगाई कि डूबे क्यों नहीं ? मरने से डर लगता है तो मेरे पास क्यों आए ? वस्तुत: वे तेजी से आगे बढ़ाना चाहते थे किंतु कोई अड़चन मुझे रोक लेती थी। डर को मिटाने के लिए वे जागती अवस्था में मृतात्माओं के हवा में विचरण का सत्य दिखाने लगे। वे आत्माएं चींखती हुई भागती थीं। पुनर्जन्म के लिए गर्भ की तलाश में रहती थीं। दिखने भी

लगीं ; आग की लपट जैसी। अब डर मिटने लगा। बैठे रहो या डूब जाओ – यह अंतर समाप्त हो गया। फिर भी कोई बाधा तो शेष थी। एक बार रामदत्त जी ने भी ऐसा ही किया। ध्यानावस्था में सूक्ष्म शरीर से आ गए। मेरे सूक्ष्म शरीर को भी बाहर निकाला और कहा कि मेरे पीछे पीछे आओ। बहुत ऊपर तक जाने के बाद मैं ठहर गया। उन्होंने हाथ नीचे किया और बोले कि मेरा हाथ पकड़ लो। बीच में केवल एक फीट की दूरी थी। किंतु मुझ से ऊपर नहीं उठा गया। रामजी ने कहा कि वे नीचे नहीं आ सकते हैं। दूसरे दिन आश्रम में बोले कि अभी और इबादत करो। यह सात वर्ष पहले की बात है। अब तो एकत्व है, अद्वैत है, अद्वय है।

ब्रह्म कमल – आप ने पर्दा कर लिया। मैं पांचवें दिन आश्रम गया। समाधि के दाहिने हाथ की तरफ बैठ गया। मन तो भरा हुआ था ही। जल्दी ही ध्यान में डूब गया। अब दृश्य श्रव्य कमेंटरी आरम्भ हो गई – समाधि पर गुलाबी रंग का बादल आ गया; यह हम हैं, आत्मा; उसमें सुनहरी धारियां चमक रही थीं। गुलाबी बादल पूरे आस्ताने में भर गया। तभी समाधि के बीचों बीच एक लाल कमल खिल गया। जैसे नाभी से नाल निकली है और उस पर बड़ा कमल। आवाज आई कि यह ब्रह्म कमल है। एक अद्भुत सुगंध भर गई। पूरे आस्ताने में गुलाबी बादल में स्वर्णिम धारियों की झिलमिलाहट। यही सूक्ष्म प्राण है। देखो यह चांदी की डोरी; इस से सूक्ष्म एवं कारण शरीर जीवात्मा के साथ बंधे रहते हैं। सूक्ष्म देह को स्थूल प्राण भौतिक देह से बांधे रहते हैं। दैहिक मृत्यु के वक्त स्थूल प्राण की डोर टूट जाती है। जब मोक्ष की अवस्था आती है तब सूक्ष्म प्राण वाली डोर टूटती है। आत्मा मुक्त हो जाती है। वहां से मैं सीधा रामदत्त जी के पास गया (वे गद्दी नशीन हो गए थे)। उन्होंने मुझे गले लगा लिया और बोले – बड़े भाग्यशाली हो भाई साहब। वस्तुतः गुरुदेव जब देह में थे तो मैं ब्रह्म कमल के विषय में प्रश्न करता रहता था। जब वे असीम हो गए तो यह अनुभूति करा दी।

दोनो एक ही हैं – कोई समय था जब मैं जेब में सांई बाबा की तस्वीर रखे रहता था। आप से नाम दीक्षा हो चुकी थी। शर्ट की जेब में तस्वीर रहती थी। एक बार स्कूटी से मांगलियावास जा रहा था। सामने सफेद कुत्ता आ गया। उसे बचाने के प्रयास में स्कूटी उलट गई। तस्वीर जेब से निकल कर सड़क पर गिर गई। मेरे सिर से दस इंच की दूरी से एक के बाद एक तीन ट्रक स्पीड से गुजर गए। मुझे होश था। शोर मच गया। मैं थोड़ा घबरा कर उठा। देखा कि बाबा की तस्वीर मेरे सिर

और गुजरते गये ट्रकों के बीच में थी। मैंने एक आदमी को कहा कि तस्वीर उठा कर मुझे दे दो। उसने मना कर दिया; कहा कि मै नहाया हुआ नहीं हूं; और आज ये बाबा साक्षात हैं अन्यथा आप तो मर गए थे। मैं फिर भी मांगलियावास गया। अपना काम कर के बाबा हुजूर के आस्ताने में जा कर बैठ गया। वहां आवाज आई कि दोनों (हम ओर सांई बाबा) एक ही हैं। पता नहीं; आश्रम न जा कर मैं स्थान क्यों गया ?

उन्होंने तीन बार मना किया - अपने सरकारी काम से पचास बार जयपुर जाना पड़ा। कार्य पूर्ति का कागज लेने के लिए अंतिम बार जाना था। एक दिन पहले मैंने आप से अनुमति चाही। आप बोले - क्या करोगे कल ? और कभी चले जाना। अगले बारह घण्टों में ऐसे तीन बार आज्ञा मांगी किंतु आपने हाँ नहीं कीं। मैं फिर भी उनके ही एक मुरीद अरविंद गर्ग को ले कर चला गया। लौटती बार आपने पुनः दो बार भोजन कर लेने के बहाने रोकना चाहा लेकिन ड्राईवर नहीं रुका; बोला कि रास्ते में कहीं ठहर जाऐंगे। बस, जिस घड़ी और जहां एक्सीडेंट होना था, हो गया। गाड़ी टोटल डेमेज हो गई। मैं इतने गहरे ध्यान में था कि एक्सीडेंट का पता ही नहीं चला। अरविंद ने तेज आवाज दी, तब ध्यान टूटा। इतना तेज दर्द हो रहा था कि चीखें निकलने लगीं। सिर में अंधेरी छाने लगीं, तभी आप सामने आ गए और बोले कि होश कायम रखो। बेहोशी आ गई तो जान का खतरा है। मैं दर्द से चीखता रहा और आप बराबर होश में रहने के लिए कहते रहे। आगे की बात बेकार है। उस वक्त गुरुदेव को पर्दा फरमाए आठ साल हो चुके थे। हम तीनों बच गए।

स्कूटी ने पत्थर को चार दिया - एक बार आश्रम से मैं अपनी पत्नी मधु शर्मा के साथ आ रहा था। वह पीछे बैठी थी। सड़क साफ देख कर मैंने स्पीड बढ़ा दीं। उधर ध्यान चढ़ गया। बीच सड़क पर कोई बड़ा पत्थर पड़ा होगा। मधु जी जोर से चिल्लाई कि देखो बड़ा पत्थर। ध्यान टूटा और मैं केवल इतना ही देख पाया कि स्कूटी उस पत्थर को चीरती हुई आगे निकल गई। कम से कम दस किलो का पत्थर था। फिर अनेक बार ऐसा हुआ कि ध्यानावस्था में हेलमेट के बिना गाड़ी चलाते हुए पुलिस की जीप के पास रूक कर बोलता कि, जी ! कहिए क्या बात है ? या ट्रेफिक सिगनल की लाईट को देखे बिना आगे निकल जाता। तब पुलिस वाला सामने आ कर कहता कि आप कहां जा रहे हो ! कोई पेनल्टी नहीं; कोई जुर्माना नहीं। अंततः रामदत्त जी ने एक दिन टोक ही दिया कि आप गाड़ी चलाना बंद कर दो।

दो भाई बहिन की बात - वे आश्रम आते थे; कभी कभी। लड़की के कोई

बीमारी हो गई। यूरिन में शत प्रतिधत ब्लड आने लगा। डॉक्टर से खूब इलाज कराया किंतु फर्क नहीं पड़ा। तब गुरुदेव से निवेदन किया। वे चुप रहे। सप्ताह भर बाद बोले कि दो दिन से हमारे यूरिन में भी खून जा रहा है। मेरा कलेजा धक्क रह गया। वह लड़की ठीक हो गई; आप ने उसका रोग खुद पर ले कर काट दिया। मैं कई दिन तक पछताता रहा कि हमने पीर साहब को पीड़ा पहुंचाई। ..... उसका भाई सीए कर रहा था। फाईनल के वक्त दो पेपर में सप्लीमेंटरी आ गई। मैंने पीर साहब से अरदास करी। आप ने हनुमान चालीसा के ग्यारह पाठ रोज करने के लिए कहा। उसने रीटोटलिंग या रिवेल्यूएशन कराया। आश्चर्य कि दोनो विषयों में अंक बढ़ गए। उसे डिग्री मिल गई।

दूसरे संत के पास भेजा - मेरे शरीर में कुछ दिक्कत आ गई थी। आप देह त्याग चुके थे। एक दिन बोले कि सेवाराम जी के पास चले जाओ। ये महात्मा कुचामण के पास बूड़सू की बगीची में रहते थे। एक दो बार आश्रम आए थे। हम एक दूसरे को नहीं जानते थे। न ही पहले मैं कभी उनकी बगीची में गया था। एक दिन सुबह ही बिना कुछ कहे वहां चला गया। परिसर में उनका सेवादार मिला और बोला कि आप अजमेर से आए हैं क्या? मेरी हाँ देख कर कहा कि महाराज आपके लिए बोल गए हैं कि - उनको बिठाना। वे आ ही रहे हैं। मैं चौंक गया; महाराज को कैसे पता चला ? वे आए। सामान्य से मनुष्य दिखे। उम्र 150 वर्ष किंतु 60-65 से ज्यादा नहीं लगते थे। दो तीन वाक्यों में वार्ता हुई। फिर सेवादार को बम के गोले (आंवले के चूर्ण के लड्डू) लाने के लिए कहा। वे मुझे देते हुए प्रयोग बता दिया और कहा, अब जाओ। मैं ठीक हो गया। फिर अनेक बार वहां जाता रहा। एक दिन बोले कि तुम्हारे पीर जैसे संत बड़ी मुश्किल से मिलते हैं। उनकी सेवा करते रहो, मेवा मिलता रहेगा। यह गुरुदेव द्वारा पर्दा लेने के पांच वर्ष बाद की बात है। फिर सेवाराम जी बीमार पड़ गए। गुरुदेव ने पुनः वहां भेजा। उनके साथ अंतिम मनो संवाद कराया। आशीर्वाद दिलाया। मेरे लिए वे आज भी साक्षात हैं।

गुलाब के फूल की कहानी - रविवार का दिन था। मैं इबादत के बाद बाहर आ रहा था। हुजूर की समाधी के पैताने जाने क्यों रुक गया। तभी समाधि के मध्य स्थल से गुलाब का एक फूल लुढकता हुआ आया और उनके पैतरने से नीचे गिर गया। मैंने तत्काल उसे उठा लिया। समझ गया कि कोई बात है। तभी अंतर्वाणी हुई कि बाहर जो सब से दुखी हो उसे यह दे दो। दालान में आते ही एक गुरु भाई दिखा

जो लम्बी बीमारी भुगत रहा था। वह फूल मैंने उसे दे दिया। उसे चिकित्सा की सही लाइन मिल गई। वह ठीक हो गया।

सवा लाख जाप का सिलसिला - नाम दीक्षा के बाद पहली बार चैत के नवरात्रे आए। वे बाले कि सवा लाख जाप करो। मैंने पायल्स का ऑपरेशन कराया ही था। डॉक्टर ने ज्यादा बैठने के लिए मना किया था। उधर कॉलेज में परीक्षाएं आरम्भ हो गईं थीं। सप्ताह में चार दिन तीनों शिफ्ट में डयूटी आती थी; यानी बारह घण्टे कालेज में। छः घण्टे प्रतिदिन जाप। ऑपरेशन के बाद वाला दर्द अलग। ज्यादातर भूखा ही रहा। नौ वें दिन अंदर आवाज आई - अरे भाई, मान लिया। मैं समझा नहीं। गुरुदेव की आवाज नहीं थी। बाद में आप ने बताया कि वे बाबा हुजूर थे। आप सर्दी वाले नवरात्रे भी कराते और चैत वाले भी। चैत वाले हरदम परीक्षाओं के दौरान ही आते। लेकिन कभी भी थकान नहीं हुई। कभी भी परीक्षा में गड़बड़ नहीं हुई। ..... और रुहानियत के सोपान पार होते गए।

ओशो का जादू काटा - कॉलेज के पुस्तकालय में ओशो की 25-30 किताबें खरीदीं। आठ दस पुस्तकें ध्यान पर थीं। मैं उन्हें पढ़ गया। एक बात अंदर घर कर गई कि तीन घण्टे सांस पर ध्यान टिकाने से बहुत लाभ होता है। मैं गुरु मंत्र का जाप छोड़ कर सांस पर ध्यान टिकाने में लग गया। तीन माह में ऐसा करना था। एक माह बीत गया। आनंद आने लगा। फिर अचानक ही सब कुछ भूल गया। लगभग दो माह बाद याद आया कि ओशो वाले निर्देश का क्या हुआ।

मंत्र बदल दिया -कोई कारगर मंत्र था जो मैं सिद्ध कर रहा था। लेकिन उसमें रस नहीं आ रहा था। मन में उकताहट आ गई। बस, तभी आस्ताने में और घर पर भी इबादत के दौरान तीन बार मंत्र बदल दिए। एक बार बाबा हुजूर ने और दो बार पीर साहब ने। तीनों वैष्णव मंत्र थे। फिर एक मंत्र का अवतरण कराया। उसी के सहारे आगे तक बढ़ाते जा रहे हैं। मंत्र मेरे लिए जुनून है; कसक है; उन्माद है; चुनौती है; जिद है। मैं वैखरी या मध्यमा से जाप नहीं करता था। आरम्भ से ही जिद थी कि मंत्र को स्वयं के अंदर सुनूं। उसे सांस में सुनूं। उसका कम्पन ऊपर सहस्त्रार चक्र में महसूस करूं। मंत्र मेरे लिए शब्द नहीं, धुन है। नाद है। विचार है। आंतरिक स्फोट है। बाहर सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में ओंकार का कम्पन। अंदर भी उसी के नाद का कम्पन। उस से जुड़ने के लिए गुरुमंत्र के मानस जाप का सहारा लिया।

मंत्र में ध्वनिमय अक्षरों का संयोजन। ध्वनि में कंपन। शरीर के सूक्ष्म चक्रों पर भी अक्षर; सूक्ष्म ध्वनियां। जाप की टक्कर से उन चक्रों के कम्पन को उत्तेजित करना पड़ता है। वे कम्पन हमें ब्रह्माण्ड व्यापी ध्वनि प्रकाश के कम्पन से जोड़ देते हैं। मंत्र वहां तक ले जाता है। मंत्र को वाक्य मत समझो। उसे केवल जाप भी मत समझो। मंत्र एक माध्यम है; स्वयं से जुड़ने का; स्वयं के माध्यम से परम के साथ जुड़ने का। मंत्र को केवल सांसारिक कार्य सिद्धि तक सीमित मत रखो। मंत्र का धुनात्मक जाप करो; शब्दात्मक नहीं। उसे अपनी श्वास बनने दो; अपनी धड़कन बनने दो; अपना प्राण बनने दो। उसे खुद का भोजन पानी हो जाने दो। अब यदि कोई प्रश्न करे कि ऐसा गुरु कृपा से ही होता है या स्वयं के अभ्यास से भी सम्भव है अथवा यह दोनों की संयुक्ति का परिणाम है। तो मैं तीसरी बात कहूंगा।

वैसे भी मंत्र मिल जाने के बाद उसके जाप में तीन बातें जरूरी होती हैं – देह का संयम, मन को मंत्र पर ही टिकाने का कड़ा अभ्यास और मंत्र के अर्थ में डूबे रहना। यह सोचना गलत है कि गुरु ही सब कुछ कर देगा। बेटे को पास कराने के लिए बाप परीक्षा भवन में जा कर कॉपी में उत्तर नहीं लिखता है। ऐसा करेगा तो जेल हो जाएगी। वह बेटे को किताबें दे देगा; ट्यूशन लगा देगा; इम्पॉर्टेंट प्रश्न ला कर दे देगा; किंतु परीक्षा तो खुद बेटे को ही देनी पड़ेगी। परीक्षा भी वही लेता है और पास भी वही करता है; ये केवल बातें हैं; मीठी बातें; खुद को ही बहलाने वाली बातें; खुद को ही धोखे में रखने वाली बातें। बाबा हुजूर ने गुरुदेव को सब कुछ दे दिया था फिर भी हमने पीर साहब में कठोर जप, मन, वाणी, भोजन, आचार, विचार का पूर्ण संयम देखा है। अनासक्ति देखी है। प्रवृत्ति से निवृत्ति की तरफ उनकी कठोर यात्रा देखी है।

थोड़ा ओर अधिक विस्तार से समझें – यह पूरा यूनिवर्स पदार्थ, प्रकाश एवं ध्वनि के कम्पनों से भरा हुआ है। इस तरह हमारे बाहर परमाणुओं का कम्पन। अंदर प्रत्येक अवयव की क्रियाओं से उत्पन्न ध्वनियों के कम्पन। (टोरंटो के वैज्ञानिकों ने एक ऐसा कक्ष बनाया है जिस में प्रवेश करते ही हमें हमारी श्वासों, हृदय की धड़कन, रुधिर संचार, फेफड़ों के संकुचन, मांस पेशियों के फैलने सिकुड़ने की ध्वनियां सुनाई देने लगती हैं)। योगी इन्हें गहन ध्यानावस्था में सुन लेता है। ऐसे ही एक वैज्ञानिक ने ऐसी प्रविधि विकसित की है जिसके द्वारा प्रति सेकण्ड में चार करोड़ कम्पन पैदा किये जा सकते हैं। जब उसने ऐसा किया तो पास रखी हुई रुई में

आग लग गई। ...हम सामान्यत: 20-25 हट्र्ज की ध्वनि सुन सकते हैं किंतु अब ऐसे यंत्र उपलब्ध हैं जिनके जरिए 1000 हट्र्ज वाली आवाज को सुना जा सकता है। हमारे अंदर भी अति सूक्ष्म ध्वनियां उत्सर्जित होती रहती हैं। उनसे बहुत अधिक ऊर्जा निकलती है। मंत्र जाप के द्वारा उसे उपयोगी किया जा सकता है। समाधि में ध्वनि दृश्य श्रव्य हो जाती है।.... तो अपने मंत्र की ध्वनि को सुनने का अभ्यास करो।

अब देखें कि संगीत में स्वर तरंगों के कंपन। ... सारे कम्पनों में एक लय है। स्वर या शब्दों से मंत्र संयोजित होते हैं। अत: मंत्र में भी ध्वनि कम्पन। जहां कहीं भी इन कम्पनों की लय बिगड़ती है वहां दोष आ जाता है। वायलिन में धुन के कंपन बिगड़ते ही संगीत बिगड़ जाएगा। शरीर में अवयवों के ध्वनि कंपन की सामूहिक लय बिगडेगी तो समझो कि किसी अंग में बीमारी आ गई है। मंत्र में उच्चारण का क्रम गलत होते ही मंत्र फेल हो जाएगा - फल की सिद्धि नहीं होगी। ब्रह्माण्ड में परमाणुओं या मूल कणों (क्वार्क, लेप्टान, बोसॉन, फोटोन आदि) के कम्पन गड़बड़ होंगे तो प्रकृति में उपद्रव आएगा।

अब समझना है कि संगीतकार धुन से शब्द समझ लेता है। साधक मंत्र की लय से मंत्र के बोल जान लेता है। ऐसे ही योगी ब्रंह्माण्ड में होते रहने वाले कम्पनों को पकड़ कर उनका अनुवाद करते हुए उन में समाहित घटनाएँ समझ लेता है। उधर हमारे मंत्र के कम्पन हमें सुनाई देने लगते हैं। कुण्डलिनी शक्ति या प्राण विद्युत के माध्यम से वे ब्रह्माण्डीय कम्पनों से जुड़ जाते हैं। तब हमारे व्यक्तित्व का विस्तार हो जाता है। सामर्थ्य बढ़ जाती है। बहुत दूर का दिखाई व सुनाई देने लगता है। दूसरों के मन की बात पकड़ में आने लगती है।

इस सारे खेल की जड़ में हमारा मस्तिष्क है। इस में एक खरब से ज्यादा न्यूरांस या तंत्रिका कोशिकाएं होते हैं। ये एक हजार ज्ञान कोष में विभाजित रहते हैं। अध्यात्म में जो सहस्त्रार चक्र होता है उस में एक हजार कमल दल माने जाते हैं। वे यही ज्ञान कोष हैं। प्रत्येक कोष में करोड़ों कनेक्शंस या संवाहक होते हैं। इनमें अरबों जानकारियां स्मृति के तौर पर सुरक्षित रह सकती हैं। हमारा यह मस्तिष्क ज्ञानेंद्रियों से तंत्रिका कोशिकाओं के जरिये आने वाली तरंग सूचनाओं को तत्काल शब्दों में रूपांतरित करते हुए समझ लेता है। फिर हाथों हाथ प्रतिक्रिया को अंग विशेष तक पहुंचा देता है।

मंत्र की ऊर्जा से इसी मस्तिष्क में स्फोट होता है। ब्रह्माण्ड में महास्फोट और मनुष्य में सूक्ष्म स्फोट। स्फोट के जोर से देह के परमाणुओं में हलचल बढ़ जाती है। इस से घर्षण होता है। घर्षण के परिणाम स्वरूप अधिक ऊर्जा उत्सर्जित होती है। तब संत या महात्मा ऊर्जस्वित हो जाता है। इस अवस्था में ठहरे हुए मनुष्य को हम अवतार, परमहंस, सिद्ध महात्मा कह देते हैं।

अब होता यह है कि अवतार, योगी एवं ईश जीव (मोक्ष से वंचित रह गईं उच्च संस्कारों वाली जीवात्माएं) के रूप में जन्म लेने वाले मनुष्य अपने मस्तिष्क की इन अपार क्षमता को अपने अपने स्तर के अनुसार बढ़ा लेते हैं। फिर हमारे लिए पूजनीय हो जाते हैं। .... जपयोग, ध्यानयोग, नादयोग आदि के माध्यम से यहीं तक पहुंचा जा सकता है।

भरी धूप में शीतल लहर – रामपुर। सुहाब खाँ साहब की दरगाह। मैं, मेरी पत्नी और अरविंद गर्ग सपत्नीक। दोपहर का वक्त। धूप तेज। मैं और अरविंद अंदर बैठे। अंदर पहले तो गर्मी लगी। फिर ठण्डी हवा की लहर चलने लगी। आनंद आ गया। बाहर आया तो मुंह से निकल ही गया कि भीतर एकदम शीतल माहौल था। वे सब बोले कि इतनी गर्मी तो थी; ठण्डक कहां से आ गई ? मैं चुप ही रह गया। ...आगे गुल मोहम्मद साहब के आस्ताने में बैठे। वहां किसी आदमी में बला आई हुई थी। वह चिल्ला रहा था। हमें दिक्कत हो रही थी। मेरे भीतर आवाज आई कि अमुक मंत्र का जाप करो। वैसा करते ही वह आदमी उठ कर चला गया। मधु जी ने देखा कि बाहर निकल कर उस ने साईकिल उठाई और बैठ कर चल दिया। यह एक वैष्णव मंत्र था।..... बाबा लक्ष्मण दास जी के मजा आया। पता नहीं मुझे कैसे यह लगा कि वहां भण्डारा था। इबादत के बाद मैं बोला कि हम तो इतनी दूर से आए हैं ; और यहाँ न पानी, न चाय , न ही भोजन ! भण्डारे का क्या मतलब हुआ ! आवाज आई कि अच्छा; शाम को आना। मैंने मना कर दिया कि अब तो नहीं आऊंगा। बाहर पता चला कि भण्डारा नहीं था। खैर, शाम होने को आई। मुझ से रहा नहीं गया और हम वापस बाबा की दरगाह पहुंच गए। वहां अब चाय के साथ समोसा भी था। मैं धक् रह गया। आरती का वक्त हो गया। अन्य कुछ लोग भी आ गये। उनमें वे सज्जन भी थे जिनकी वहां होटल थी। वे वहां के विधायक के मित्र थे। उन्होंने भोजन का निमंत्रण दे दिया। जिद कर के बैठ गए। यह बाबा की कृपा थी। अंतर्वाणी स्फुरित हुई कि हमारे भरोसे हो तो भूखे कैसे जाओगे। वहां कृपा तो इतनी

हुई कि हम एक लड़की की शादी का मामला ले कर भी गए थे। मेरे माध्यम से आप बोल गए कि सितम्बर तक बात बैठ जाएगी। ऐसा ही हुआ। ...दोबारा रामपुर गए तो वहां से नैनीतील जाने का मन हो गया। ऑटो वाला एक अनजानी मजार पर ले गया। कुछ नहीं था - टूटे फुटे दालान में मजार थी। पेयजल के लिए एक पम्प था। लेकिन बाबा तो बोल गए; कहा कि आराम से जाओ; नैनीताल में तुम पर हमारी नजर रहेगी। यहीं तुम हमारी जिम्मेदारी हो। रामपुर से आगे तुम्हारा पीर सम्हालेगा। यात्रा यादगार रहीं।

तुम्हारा खाता हमारे पास नहीं है - पहली बार झांसी गया। निजामुल हक साहब के आस्ताने में प्रणाम किया ही था कि वे बोले - तुम्हारा खाता हमारे पास नहीं है; उधर जाओ। चौंका भी एवं निराश भी हो गया। उदास दिल से हाफिज मोहम्मद इब्राहिम साहब के आस्ताने में गया। वहां भी चौंका कि जैसे स्वागत हुआ हो। वे बोले कि एक सौ पचास साल बाद आए हो। बैठो। ऐसा लगा जैसे आपकी छत्र छाया में बैठा हूं। मेरे अंदर अपने बेटे की नौकरी संबंधी चिंता थी। आप ने फरमाया कि दस दिन में काम हो जाएगा। दसवें दिन नौकरी मिल गई।.... रामदत्त जी महाराज भी वहीं थे। मुझे कहा कि जो दौलत यहां से ले जा रहे हो उसे सम्हाल कर रखना। निजामुल हक साहब के आस्ताने में भी फिर तो जम कर रहमत बरसी। दिव्य रोशनी के दर्शन हुए। नूर, खुमारी, जलाल, जुनून; जैसे जन्नत। सब अनिर्वचनीय।

आकाश से उतरी रुहानी धारा- आश्रम में सहस्त्र जलधारा का आयोजन था। यज्ञ पूरा हुआ। आरती के समय मैं शिव मंदिर में ही था। हवन पूरा हुआ। आरती हो रही थी। रामदत्त जी महाराज आरती कर रहे थे। तभी मैं अपने पीर की रहमत में आ गया। देखा कि आकाश से पीले लाल रंग की मोटी धारा उतर रही है। वह असंख्य परमाणुओं से भरी है। चारों तरफ सुगंध भर गई है। उक्त आकाश ज्योति नीचे शिव पिण्डी में प्रवेश कर रही है। मुझे अन्य कुछ नहीं दिख रहा था। जीवन में पहली बार अनुभव हुआ कि प्राण प्रतिष्ठा किस तरह सम्पन्न होती है।

मौत के मुंह से वापस आना-मेरी एक रिश्तेदार लड़की है। नाम लिखने के लिए उस ने मना कर दिया। उसके गर्भाशय से लगातार रक्त बहने लगा। अजमेर लाए। अस्पताल में भर्ती कराया। तभी गुरु वाणी सुनाई दी कि बच जाएगी। यहां कुछ नहीं हो सका। जितना खून चढ़ाते थे वह वापस निकल जाता था। तब जयपुर

ले गए। वहां भी ढाक के तीन पात जैसी दशा। मौत सामने दिख गई। मेरा विश्वास भी दरकने लगा। तभी कमाल हुआ - जाने कहां से एक स्त्री रोग विशेषज्ञ आई। उसने गर्भाशय में कॉटन लगा दिया। खून थम गया। लड़की बच गई। आज तक मजे में है। ....एक कोई बंसल साहब थे। आश्रम आते जाते थे। जयपुर के अस्पताल में भर्ती थे। इधर महात्मा जी अपने कक्ष में थे। डा दिलीप भी वहीं थे। जयपुर से खबर आई कि बंसल जी का देहांत हो गया। गुरुदेव ने ध्यान लगाया। फिर चुटकी बजाते हुए डॉ. दिलीप से कहा कि फोन लगा कर वापस बंसल की तबीयत पूछो। तब ज्ञात हुआ कि वे ठीक हैं। वार्ड के डाक्टर ने कहा कि आश्चर्य है। ऐसे ही दो अन्य केस मेरी अनुभूति में हैं - दोनों के सिर में बड़ी खराबी आ गई। मेरे पास खबर आई। गुरुदेव तो अंतर्यामी हैं ही। दो जवाब आए- ठीक हो जाएगा; और दूसरे के लिए कि ऑपरेशन जल्दी कराओ। दोनों स्वस्थ हैं। आश्रम में इसे मिरेकल माना जाता है।

संक्षेप में इतना ही कि संत महात्मा गण डूबते हुए को तिनके का सहारा उपलब्ध करा देते हैं। अन्यथा कई मुरीद उनके सामने भी मरते ही हैं। एक तो वह जो मरेगा। दूसरा वह जो मृत्यु के निकट पहुंच गया है; मरा नहीं है। हमें ऐसा लगता है कि वह मरेगा। किंतु होनी को देख लेने वाले फकीर को पता चल जाता है कि वह बचेगा। उसके बचने का उपाय वह कर देता है। जो लोग किसी संत के सम्पर्क में नहीं होते हैं उनके भी बचने का योग कैसे न कैसे प्रतिफलित हो ही जाता है। .... एक बार कोई बड़े महानुभाव लम्बे समय से अस्वस्थ चल रहे थे। मुझे ज्यादा कुछ भी ज्ञात नहीं था। आप बोले कि उनके घर जाओ। कुछ मत बोलना । सत्संग करना और भोजन करके आ जाना। ऐसा ही हुआ। मुझे बस इतना सा लगा कि रोग निकल कर बाहर जा रहा है। वे अभी तक ठीक हैं।

ये रुहानी शक्तियां कई बार किसी जीवित साधक को माध्यम बना लेती हैं। माध्यम को परीक्षाओं के दौर से भी गुजरना पड़ता है - पीर देखता है कि उस में अहंकार आता है या नहीं; यदि आता है तो कितनी सीमा तक? आप ही के वंश के युवक की बात है। एक दिन बाबा हुजूर की दरगाह के परिसर में मैंने उसकी गोद में लड़का देखा। उसे कुछ नहीं कहा लेकिन रजनीकांत जी को बता दिया। ऐसा ही हो गया।

रज्जो चाचा- गुरुदेव के सब से छोटे भाई। पूरा नाम रजनीकांत मिश्रा।

स्कूल में अध्यापक थे। बाबा हुजूर के कृपा पात्र रहे। गुरुदेव ने अपनी रुहानी नजर से इन पर कई करम किये। बड़े रहस्य मय व्यक्ति हैं ये। सन् 2019 तक इन्हें हुजूर की सेवा करते हुए 43 वर्ष बीत चुके हैं। मौनी बाबा हैं। अंदर से भरे हुए हैं। किसी के भी सामने नहीं खुले। लेकिन यह सच है कि आपकी बाबा हुजूर से रूहानी निरंतरता कायम है। मैं भी तब चौंका जब एक वाकया घटित हो गया। हम झांसी गये हुए थे। हुजूर हाफिज साहब वाली घटना मैं लिख चुका हूं। दो दिन मैं उनके आस्ताने में ही अधिक बैठा था। जब लौट आया तो आप ने कहा कि और तो सब ठीक है लेकिन तुम्हें दादा साहब के आस्ताने में ज्यादा बैठना था। मैं चकित रह गया कि इन्हें कैसे ज्ञात हुआ कि मैं वहां कम बैठा ? ... जाने से पहले भी रज्जो चाचा ने मुझे इशारा किया कि वहां फूल पेश करते समय दूसरों के समान भागम भाग मत करना। चुप रहना; शांत खड़े रहना। मैंने वैसा ही किया। अलग थलग रहा किंतु रहमत की कमी नहीं रही।

बाबा हुजूर के आस्ताने में इबादत के दौरान अनेक रूहानी गुजरान होते रहते हैं। कई बार चाचा जी की आंतरिक अवस्था उजागर होती रही है। एक दिन पहली बार हुजूर ने कहा कि चाय पी कर जाना। बाहर आते ही चाचा जी ने चाय ऑफर कर दी। कई बार मैं आस्ताने से मदहोश की तरह निकलता हूं; और रज्जो चाचा की आँखों में वैसा ही जलाल देखता हूं। वे जब मुझे गले लगाते हैं, खड़े हो कर हाथ जोड़ते हैं तब वास्तव में तो वे हुजूर की उस नियामत का सम्मान करते हैं जिस की सुगंध उन्हें मेरे आस्ताने वाले वजूद से आती है। वहां उपस्थित अन्य मुरीदों को बुरा लगता है कि 'चाचा इस शिव शर्मा को इतना मान क्यों देते हैं ?' ऐसा भी हुआ कि घर से स्थान के लिए चलते वक्त हुजूर की आवाज आई - आज बरामदे में जो भी टहलता हुआ मिले; समझ लेना कि हम ही घूम रहे हैं'। ...और वहां चाचा जी मिलते। पूरी दरगाह मोगरे से या गुलाब से अथवा ऊद से महकती हुई। पिता जी तो चुप रह कर स्वयं को छिपाए रहे। रामदत्त जी स्वयं की रूहानियत को छिपाए रखने के लिए हर्षोल्लास के हंगामे करते रहे। लेकिन चाचा तो हर किसी के मुंह लगे हुए है, सब के साथ बैठ कर खाते हैं, बतियाते हैं; फिर भी इंच भर नहीं खुलते हैं। ऐसी हरकतें कर देते हैं कि सामने वाला सोच लेता है कि यह आदमी तो खाली है। चाचा में अदब इतना कि सिर झुक जाता है - मैं कई बार आस्ताने में उस वक्त पहुंचता हूं जब वे सफाई कर रहे होते हैं। तब अपना काम इतनी सफाई से करते हैं कि मेरी

इबादत में तनिक भी व्यवधान नहीं पड़ता है। सेवादारों को इन से सबक सीखना चाहिए। याद रखो - आस्ताने में कोई इबादत कर रहा है और तुम्हारी हरकत या काम से उसका ध्यान टूट रहा है तो यह बेअदबी है। आस्ताने के अदब के साथ बद सलूकी है। आस्ताने में किसी भी प्रकार की आवाज बेअदबी है।

ऐसा भी होता रहा है कि आस्ताने एवं आपके कक्ष के बीच में जो दीवार है वह हट गई है; एवं आप वह सब देख रहे हैं जो मेरे साथ घटित हो रहा है। .... एक वाकया - अनूप - विजय गुप्ता की होटल ग्रेंड जूनिया का उद्घाटन फंक्शन था। वातावरण में नूर था। रज्जो चाचा मेरे पास आए अैर पूछा कि क्या देख रहे हो ? मैं बोला कि गुरू कृपा दमक रही है। आप ने पीठ थपथपाई । - होता यह है कि पीर कई बार अपने रूहानी शरीर को करोड़ों परमाणुओं में बिखेर देता है। हर परमाणु में चमक होती है। तब पूरा माहोल ज्योतिर्मय हो जाता है। यह हर किसी को नहीं दिखता है।

जरा यह भी सोचिए कि चालीस साल पहले सोमलपुर वाली पहाड़ियों का वातावरण कैसा रहा होगा ? बाहर प्रेतात्माओं की आवाजाही एवं चीत्कारें। पहाड़ों से उठती लपटें तथा घर घराने की आवाजें। सन्नाटे की दहशत। घुप अंधेरा। ऐसे में कोई भी मनुष्य दैवी शक्ति की मदद के बिना नहीं रह सकता है। आपके साथ हुजूर की नजर थी। उसी नजर ने आपको अंदर भी निहाल किया। आपका मौन; आपका अदब; आप गजब हैं।

चिंता मत करो; हम हैं - विगत दो वर्ष के दौरान बीसों बार ऐसा हुआ कि संध्या होते ही हमारी पीठ पर खरोंच आ जाती। पूरी पीठ खरोंचों से भर जाती। मैं चिंताकुल भी हुआ किंतु आप फरमाते कि उस शैतान को अपनी करतूत करने दो। तुम इबादत करो। उसे हम देख लेंगे। मैं भी कहता कि जो 'कार' बता रखी है वह आप से बढ़ कर नहीं है। मैं उस कार का पाठ नहीं करूंगा। जब आप हैं तो कार का क्या महत्व ? एक बार तो घर पर मैं अकेला था। रात साढ़े ग्यारह बजे कोई छाया सामने आ गई। बहुत डर भी लगा। फिर मैंने कह दिया कि तुम आश्रम जाओ। वहीं तुम्हें सुकून मिलेगा। वह तत्काल चली गई। यह बात बताने के पीछे भी मंतव्य केवल इतना सा है कि यदि पीर सारथी है तो निश्चिंत रहो।

भोग लग गया; भण्डारा हो गया - ये दो रहमत कर्म। गुरुदेव एवं बाबा हुजूर से संबंधित हैं। गुरुदेव का जन्म दिन मित्तल घराने में मनाया जा रहा था। मेरे

चोट लगी हुई होने के कारण मैं नहीं जा सकता थाा। घर पर ही भोजन रूप भोग बनवाया। भोग लगाया तो स्पष्ट ज्ञात हो गया कि भोग स्वीकार है। मैंने एक कोर खाया; पेट भर गया। उधर गुरुदेव को पूछा गया कि थाली लगवा दें ? बोले कि आज तो पेट भरा हुआ लगता है। ऐसी कृपा मुरीद को निहाल कर देती है। यही निजता साधक की पूंजी होती है।

सात अप्रेल, 2019 को बाबा साहब का सालाना उर्स था। हमारे हैदराबाद आने का एयर टिकिट डेढ़ माह पहले ही हो चुका था। उर्स की तारीख मुझे बाद में पता चली। हमें छः अप्रेल को अजमेर छोड़ना था। चार तारीख को मन में विचार आया कि हम पहले ही भण्डारा कर लेते हैं। पांच तारीख के दिन शाम को स्थान गये। साथ में मधु, किरण और अरविंद थे। प्रसाद व फूल माला ले गए। हुजूर के सेवादार श्री रजनीकांत मिश्रा के द्वारा प्रसाद पेश कराया। हुजूर का आशीर्वाद मिल गया। आपने अगले दिन हमारे घर भोजन को भण्डारा मान लेने का भरोसा दिलाया। बस, उर्स हो गया। सात तारीख की सुबह ही भोग लग गया। शाम को तो हम प्लेन में थे। रात में वहां की महफिल का आनंद यहां करा दिया। ...ऐसे ही एक बार गुरुदेव झांसी गए। हमें हुजूर की सेवा में रख गए। वहां मजा आ गया । छः घण्टे की बैठक हो गई। रोटी भोग बन गई। सांसें इबादत बन गईं। बाद में राम जी झांसी गए। मुझे आश्रम में छोड़ गए। वादा किया कि आपको सब कुछ यहीं दिखेगा। ऐसा ही हुआ। वहां की महफिल का साक्षात आनंद यहां आश्रम में उठाया।

पंद्रह दिन ठहरो - आश्रम में एक लड़की आती थी। शादी का मामला नहीं बैठ रहा था। परेशान हो गई। फिर कोई संबंध आया। घर वाले सहमत थे किंतु लड़की को नहीं जमा। रोने लगी। मैं साक्षी हूं। गुरुदेव के दरबार में प्रार्थना की गई। वे बोले कि पंद्रह दिन ठहरो। एक सप्ताह बाद ही बढ़िया सम्बन्ध मिल गया।

मंत्र, महफिल एवं आनन्द - आप कहते थे कि रस के बिना मंत्र की सिद्धि नहीं होती है। आदमी रस में ही डूबता है। मंत्र सिद्धि के लिए उस में डूबना जरूरी है। लेकिन यदि मंत्र में रस नहीं आ रहा है तो डूबोगे कैसे? तुम ने तो बस, उसे याद कर लिया। याद करना और सिद्ध होना अलग बात है। तो क्या करें? मंत्र की एक धुन बना लो; जैसे हारमोनियम में धुन बजती है, वैसे ही मंत्र की धुन बना लो। अब उसे गुनगुनाते रहो। आगे उस धुन को मन ही मन दोहराते रहो। फिर उसे कान लगा कर सुनने का अभ्यास करो। जब अपने आप अंदर गूंजने लगे तब उस में ही डूबे रहो।

आनंद के बिना मंत्र की बारह हजार आवृत्तियां असम्भव है। कर लोगे तो फलेगी नहीं; क्यों कि मन तो मंत्र में डूबा ही नहीं। बे मन से करोगे तो काम नहीं करेगा। रूहानी चढ़ाई नहीं होगी। ध्यान नहीं लगेगा। मन अपने आनंद वाले विषयों की तरफ दौड़ता रहेगा। परिणाम होगा – मन अलग और मंत्र अलग। फेल होते रहोगे।

आप कहते थे कि महफिल में भी बैठना नहीं; डूबना है। बैठो तो डूबो। भजन या कलाम को अंदर उतरने दो। अपनी देह को नहीं, मन को झूमने दो। मन झूमेगा तो डूबेगा। मन डूबना यानी – अब न कलाम है, न महफिल है, न तुम हो और न स्वयं की पहचान है। केवल रस है, केवल आनंद है। अब तुम्हारी रूह बुजुर्गों की रूह से जुड़ जाएगी। तुम व्यष्टि से समष्टि हो जाओगे।

आप सत्संग कक्ष में भी फरमाते थे कि जितनी देर संत के पास बैठो उतनी देर खुद से दूर हो जाओ। घर, परिवार, पद, ओहदे, कारोबार आदि को भूल जाओ। संत को तुम्हारी दैहिक उपस्थिति नहीं, मन की मौजूदगी चाहिए। सत्संग कक्ष की वायब्रेशंस तन को नहीं, मन को छूती हैं। तुम्हारा मन तो बजार में या घर परिवार में अटका हुआ है। रूहानी लाभ कैसे होगा। इसलिए मंत्र जाप के वक्त घर को साथ मत रखो; महफिल में बैठो तो दुनिया को साथ मत बिठाओ; आश्रम आओ तो काम धंधों को साथ मत लाओ।

१. सृष्टि का पहला रूहानी पुरुष -

ज्ञात पौराणिक इतिहास में सब से पहले रुहानी पुरुष हमारे प्रजापति ब्रह्मा थे। इन्हें परमेष्ठि प्रजापति कहा जाता है। इन्हीं ने योग सृष्टि की थी। वेद का ज्ञान भी सब से पहले इन्हें प्रत्यक्ष हुआ था। वेद का ज्ञान अनादि माना जाता है। प्रलय काल में भी यह नष्ट नहीं होता है। जिस तरह उस वक्त सृष्टि का द्रव्य परमाणविक इकाई के रूप मे सुरक्षित रहता है वैसे ही उक्त ज्ञान ध्वनि 'प्रकाश ऊर्जा' के तौर पर संरक्षित रहता है। नई सृष्टि के दौरान यह वेद ज्ञान पहली बार जिस मनुष्य के मानस में उतरता है उसे ब्रह्म या परमेष्ठी प्रजापति ऋषि कहा गया है।

इन से यह ज्ञान ऋषियों में उतरा। ऋषि, यानी, अतींद्रीय क्षमता। आकाश में तरंग रूप से व्याप्त सनातन ज्ञान को अपने मानस में सुन लेने की क्षमता; प्रत्यक्ष कर लेने या देख लेने की क्षमता; उसे दूरस्थ शिष्य के मानस में प्रेषित कर देने की क्षमता। लोक लोकांतर तक संवाद की रूहानी शक्ति। पदार्थ के परमाणु और जीव के कर्माणु को देख लेने की दृष्टि। वायुपुराण के अनुसार जिस व्यक्ति में निम्न लिखित चार विशेषताएं होती हैं उसे ऋषि कहते हैं - लोक लोकांतर में गति; परा वाणी को सुन लेने की शक्ति; सत्य के दर्शन की क्षमता; और निष्काम तपस्या। ''वेद ज्ञान का प्रथम प्रवक्ता, और पारदर्शी दिव्य दृष्टि वाला; जो अंतर्ज्ञान द्वारा मंत्रों को प्रत्यक्ष करता है एवं संसार की चरम सीमा को देख सकता है; उसे ऋषि कहते हैं''।

तत्पश्चात अन्य ऋषियों में आविर्भूत हुआ। उस समय 'अयोनि सम्भव' मनुष्य होते थे। इन्हें ब्रह्मा के मानस पुत्र भी कहा गया है। ऐसे ऋषि समय समय पर ध्यान की गहनावस्था या समाधि में ब्रह्मा की ज्ञान राशि से कोई मंत्र सुन लेते या प्रत्यक्ष कर लेते थे। उन्हें उस मंत्र का ऋषि कहा गया। ये ऋषि इन मंत्रों को अपने शिष्यों को समझाते व याद करा देते थे। इन शिष्यों में से कोई या अन्य जब किसी मंत्र को नये ढंग से प्रत्यक्ष करते अथवा उसका नये रूप में उपयोग करते तो उन्हें भी उस मंत्र का ऋषि ही कहा गया। इस तरह एक ही मंत्र के अनेक दृष्टा ऋषि हो गए। ये सब रूहानी पुरुष थे।

ऋषियों की अपार क्षमताएं - ऋषि रूहानी पुरुष होता है। उसे हम परा पुरुष भी कह सकते हैं। अपरा प्रकृति में रहते हुए भी वह परा अवस्था में रहता है। उसकी

क्षमताएं - लोक लोकांतरों में गमन कर सकता है। भूत एवं भविष्य काल में जा सकता है; मतलब कि अतीत ओर आगत की घटनाओं को ज्ञात कर सकता है। अपने सूक्ष्म रूप से एक ही समय में अनेक लोकों में उपस्थित हो सकता है। मनो संवाद कर सकता है। दूर का देख सकता है और स्वयं को भी चाहे जहां दिखा सकता है। हमारे पुराण साहित्य में उल्लेख मिलते हैं कि ब्रह्मर्षि वसिष्ठ, महर्षि विश्वामित्र आदि सर्व समर्थ थे। कुछ भी कर सकते थे; लेकिन करते नहीं थे। सारे ऋषि ऐसे होते हों, यह जरूरी नहीं। कुछ ऋषि केवल रचयिता होते थे; आचार्य होते थे; गुरुकुल चलाते थे; गोत्र चलाते थे और राजाओं के पुरोहित होते थे।

साधु संत, महात्मा आदि सब रूहानी पुरुष होते हैं। जैनियों में साधु, उपाध्याय, आचार्य, अरिहंत व सिद्धों को नित प्रणाम करते हैं; ये रूहानी पुरुष हैं। फकीर, औलिया, दरवेश, अवधूत योगी, भक्त आदि भी आध्यात्मिक मनुष्य ही होते हैं। इनका सामर्थ्य इन्हें ऐसी ऊँची अवस्था में स्थिर रखता है। हमारे गुरुदेव ऐसे ही थे।

हम यों भी तो सोच सकते हैं कि मनुष्य के ही मानसिक विकास की एक ऊंची अवस्था है ऋषि। फिर ऋषि होने की परम अवस्थाएं हैं - महर्षि, ब्रह्मर्षि, देवर्षि और परमेष्ठि प्रजापति ऋषि। आज के दौर में संत, साधु, महात्मा और अन्य कथित बड़े लोग। ये सब मानस शक्ति के विकास वाली अवस्था के दृष्टांत हैं।

तो ऋषि आध्यात्मिक पुरुष थे। इधर सूर, तुलसी, कबीर, रैदास, कृष्णमूर्ति आदि भी ऐसे ही थे। इन्होंने भीड़ वाली सभाएं नहीं कीं। रामसुखदासजी व डोंगरे महाराज ने किसी को चरण स्पर्श नहीं करने दिये। महर्षि रमण तो पहाड़ी गुफा में रहते थे। कृष्णमूर्ति ने वह मिशन ही भंग कर दिया जो उन्हें महिमामंडित करने लगा था। शिव तत्व को सिद्ध कर लेने वाली लल्लेशवरी तो शहर में आती ही नहीं थी। राजस्थान की भूरीबाई ने अपने घर के बाहर दीवार पर लिखवा दिया - चुप। ऐसे अन्य और भी संत महात्मा रहे हैं। ये सब रुहानी पुरुष हैं। जो कोई इनकी शरण में पहुंचा; उनका कल्याण हुआ। ये धन दौलत बाँटने वाले 'संत' नहीं थे। ये चमत्कार दिखाने वाले महात्मा नहीं थे। इन्होंने स्वयं की पूजा नहीं कराई। अपनी तस्वीरें और मूर्तियां नहीं बनवाई। ये महात्मा गण अपने पीछे भीड़ ले कर आगे नही चले। भीड़ से बचने के लिए महर्षि रमण पहाड़ की गुफा में ही चालीस साल रहे। तेलंग स्वामी भीड़ के जुटते ही भाग जाते। बाबा जी महाराज तो उन्हें ही दिखते थे

जिन में आध्यात्मिक कसक होती थी। किसी भी क्रिया योगी संत ने 5-10 से ज्यादा शिष्य नहीं बनाए। इनके शरीर धरती पर रहते थे किंतु हृदय परम ज्योति में लीन रहता था।

ये कैसे होते थे; कुछ उदाहरण - स्वामी हरिदास के पास एक बार बादशाह अकबर तानसेन को ले कर चला गया। संगीत सुना। मुग्ध हो गया और बोला कि मैं आप की क्या सेवा करुं? स्वामी जी ने कहा कि दोबारा यहां मत आना। उधर कबीर, रैदास, सूरदास, तुलसी, मीरा आदि ने भीड़ को अपने पीछे नहीं लगाया।

रैदास, जूते गाठने का काम करते थे। एक दिन गोरखनाथ आए। बोले कि प्यास लगी है, पानी पिला दो। रैदास ने पास रखे कूण्डे की तरफ इशारा किया। उस में पानी था; कहा कि पी लो। गोरखनाथ ने देखा कि इसी कूण्डे के पानी में वह चमड़ा भिगोता है और उसी के लिए कह रहा है कि पी लो। नाथ जी पानी पीये बिना ही चले गए। वह पानी कबीर की बेटी कमली ने पी लिया और रौशन हो गई। शादी के बाद कमली मुल्तान चली गई। वहां एक दिन गोरखनाथ उस के घर आये। उन्हें भोजन कराना था। कमली ने उनके खप्पर में एक चम्मच खीर डाली। खप्पर भर गया। खीर नीचे ढुलने लगी। गोरखनाथ का गरूर चूर चूर हो गया। उनको यह घमण्ड था कि उन का खप्पर कोई नहीं भर सकता है। उन्होंने कमली से पूछा कि तेरी इस शक्ति का रहस्य क्या है और तू कौन है? वह बोली कि मैं कबीर की बेटी कमली हूं; और जिस पानी को आप रैदास के पास छोड़ कर लौट गये थे वह पानी उन्होंने मुझे पिला दिया। गोरख भागे। काशी में रैदास के पास गए। सारी बात बताई। रैदास ने कहा कि वह पानी तो अब मुल्तान गया। मैंने तुम्हारे लिए काशी विश्वनाथ से मंगाया था। ऐसे होते हैं रुहानी पुरुष।

कबीर के घर साधु आ गए। सौ-ड़ेढ़ सौ की संख्या में आ गए। कबीर तो फक्कड़ थे। कोई कुबेर नहीं पाल रखा था। अपनी पत्नी से कहा कि बाजार जा रहा हूं। इन के भोजन का इंतजाम करना है। लेकिन गये कहीं नहीं। उन्हें उधार कौन देता! घूम कर पिछवाड़े वाली कोठरी में बैठ गए। प्रभु के ध्यान में डूब गए। उधर बाहर कोई आदमी भोजन सामग्री ले कर आया और बोला कि कबीर साहब ने भिजवाई है। साधु संतों का भोजन हो गया। तब कबीर बाहर आए। वे रुहानी पुरुष थे। हुआ यह कि कबीर के खिलाफ साजिश की गई थी कि उसे नीचा दिखाया जाए। यह बात एक साहूकार को पता चल गई। उसे कबीर की असलियत ज्ञात थी। उस ने प्रभु

कृपा से सारा प्रबंध कर दिया। ये ऐसे संत थे कि जिन्होंने कभी कोई चमत्कार नहीं दिखाया, किसी से पैसा नहीं लिया, किसी राजा के दरबार में नहीं गए। इन्होंने लोगों को केवल आत्मज्ञान का रास्ता बताया और उस पर चलाया।

एक सूफी संत थे उवेस करणी। अरब देश के यमन में कर्नी गांव में पैदा हुए थे। खुद को पैगम्बर मोहम्मद साहब का मुरीद मान लिया। उन से जीवन में कभी नहीं मिल पाए। फिर भी उनका रूहानी स्तर इतना ऊंचा हो गया कि वे मोहम्मद साहब की नजर में रहने लगे। कुछ जिज्ञासुओं ने इस रहमत का कारण पूछा। आप ने फरमाया - रुहानी रहमत के लिए मुरीद और मुर्शिद का आमने सामने होना जरूरी नहीं। उन के बीच जबानी बातचीत की भी दरकार नहीं। यह रूह का मामला है। रूह सांसारिक दूरियों की मोहताज नहीं रहती है। पीर चाहे जहां से किसी पर भी करम कर के मुरीदी दे सकता है। यदि ऐसी कुव्वत नहीं तो वह पीर नहीं। इसीलिए उवैसिया सिलसिले को कलंदरी यानी आजाद; मात्र रूहानी सिलसिला कहा जाता है। फूल माला, रोजा नमाज, पीर के दर पर आना जाना आदि जरूरी नहीं। केवल रूह से रूह का रिश्ता; अद्वैत रिश्ता। वे रूहानी पुरुष थे।

राबिया बसरी रूहानी शख्सियत थी- उनके पास हसन बसरी आते जाते थे। एक बार राबिया के साथ नदी किनारे बैठे थे। अचानक हवा में आसन लगाने के चमत्कार दिखाने लगे। तब राबिया ने कहा कि ये चमत्कार बंद करो। अपने अंदर खुदा के नूर को देखो। पूरी कायनात में उस नूर के अलावा कुछ है ही नहीं। ....एक अन्य दृष्टान्त - इब्राहिम अद्हम एक बार हज यात्रा के लिए घर से निकले। हर कदम पर कुरान की एक आयत पढ़ते और सिजदा करते। काबा पहुंचने में 14 साल लग गए। जब वहां पहुंचे तो अंदर की आँख ने देखा कि काबा शरीफ वहां नहीं हैं। आश्चर्य हुआ। विस्मय हुआ। निराशा हुई। प्रश्न ऊठा कि जीवन के चौदह साल लग गए इस यात्रा में; और काबा शरीफके दर्शन नहीं हुए। खुदा की परा वाणी स्फुरित हुई कि काबा अभी राबिया बसरी को उस की राह में ही दर्शन देने के लिए गया है। वह गरीब औरत बीच राह में थक कर बैठ गई है। आगे चल नहीं सकती है। ऐसी रुहानी हस्ती थी राबिया। वह चुप थी; निराडम्बर थी; उस के अंदर इबादत के अलावा अन्य कुछ नहीं था। मकान नहीं था; रोटी नहीं थी लेकिन वह अंदर बाहर से पाकीजा थी। उधर इब्राहम अद्हम ने अपनी यात्रा का दिखावा किया। दिखावे को दुनिया देखती है, खुदा नहीं देखता।

निजामुद्दीन औलिया के ठिकाने पर रोज दिल्ली सल्तनत से प्रचुर मात्रा में अनाज व नकदी आती थी। वे दिन भर में सारी सामग्री व दौलत बाँट देते थे। शाम होत-होते खुद के लिए दो रोटी बनाने जितना अनाज भी नहीं बचता था। वे रुहानी पुरुष थे। आज तो जलसा है। तमाशा है। ग्लैमर है। सोने के सिंहासन हैं। लाखों रुपए वाली चादरें हैं। कहां है फकीरी ! कहां है रुहानी नूर ! सब तरफ भीड़ ही भीड़। अपनत्व नहीं। भाईचारा नहीं। सदाशयता नहीं। सब के सब एक दूसरे को धक्का दे रहे हैं।

एक थी अक्का महादेवी। बहुत सुंदर थीं। उसके शहर के राजा ने शादी कर ली। लेकिन वह रूहानी स्त्री थी। देह नहीं थी; आत्मा के भाव में ठहरी हुई थी। राजा पति यह बात नहीं समझा। वह भोगवादी था। उधर महादेवी योगवादी थी। राजा को उसने शारीरिक संबंध नहीं बनाने दिए। परिणाम भयानक हुआ। राजा ने उसे निर्वस्त्र अवस्था में घर छोड़ने के लिए मजबूर किया। दुनिया के इतिहास में ऐसा दोबारा नहीं हुआ कि किसी रानी को नग्नावस्था में महल छोड़ना पड़ा हो।..... रानी शिव भक्त थी; जन्मजात रूहानी महिला थी। उसकी देह के चारों तरफ दिव्य प्रकाश की चादर सी लिपटी रहती थी। वह जंगल में रहने लगी। भक्ति सिद्ध हो गई। अक्का से ऊपर उठ कर अक्का देवी बन गई। ....ऐसे ही आनंदमयी माँ थीं। आरम्भ से ही रूहानी स्त्री। शादी के लिए बहुत मना किया लेकिन माता-पिता नहीं माने। विवाह कर दिया। किंतु उसमें देह भाव था ही नहीं। पति को कहा कि मेरी देवी भाव से पूजा करो। ऐसा ही हुआ। फिर पति को एक आश्रम में भेज दिया। ऐसे होते हैं 'स्प्रीच्युअल पर्सन'। देह से परे, राग से परे, द्वेष से परे, किसी भी आसक्ति से परे।

गौतम बुद्ध ने कहा कि मेरी पूजा मत करो। मैं जो कहता हूं, उसे ध्यान से सुनो। फिर अपनी आास्था और क्षमता के अनुसार सत्य के दर्शन कराने वाली राह पर चलो। लेकिन लोगों ने आत्मसाक्षात्कार की जगह बुद्ध के मंदिर बना कर उन की पूजा आरम्भ कर दी। ऐसा सारे महात्माओं के साथ हुआ। इसीलिए हम आज भी भटके हुए हैं। इस भीड़ में और इस ग्लैमर में न रुहानियत है; न ही रूहानी पुरुष।

10. अब मेरे पीर साहब की बात-

वे देह में भी अदेह थे; इसलिए रूहानी थे। आत्मलीन थे, स्वाधीन थे; अतः आध्यात्मिक थे। वे मुझे सृष्टि के आरम्भ तक ले गए ; इसलिए मेरे परम पुरुष थे। वे आज भी हर पल मेरे साथ हैं; इसलिए रूहानी पुरुष हैं।

वे कहते थे कि मैं अकेला हूं। फकीर की नियति में अकेलापन होता है। फिर समझाया कि मैं जिन चीजों को नहीं चाहता वे ही चीजें मांगने के लिए लोग मेरे पास आते हैं; इसलिए अकेला हूँ । मैं आत्म सत्य के सूत्र देना चाहता हूं जो कोई नहीं मांगता है; इसलिए मैं अकेला हूं। यह कारण है कि वे रुहानी पुरुष थे।

वे कहते थे कि मैं देह भाव से अलग हो गया हूं किंतु लोग मेरी देह की ही सेवा करते हैं - फूल, माला पहिनाते हैं; पांव दबाते हैं; कमरे में एसी लगा देते हैं; आने जाने के लिए गाड़ी खरीद दी। ये सोचते हैं कि यही सेवा है लेकिन इनकी सोच गलत है। मैं रूह हूं; देह नहीं। इसलिए वे रुहानी पुरुष थे।

कहते थे कि मेरी हस्ती मेरे पीर में मिल चुकी है। मैं अब कुछ नहीं करता; फिर भी लोग यही सोचते हैं कि उनकी सेवा से खुश हो कर मैं कुछ कर दूंगा। इन अज्ञानियों को कौन समझाए !...मैं ऐसे गुरु को रुहानी व्यक्ति मानता हूं।

उन्होंने मुझे कभी नहीं कहा कि मेरा ध्यान करो। हरदम यही समझाया कि परम प्रकाश ही सत्य है; उसी का ध्यान करो। यह कभी नहीं कहा कि फूल, माला, प्रसाद से पीर प्रसन्न होता है। यह भी नहीं कहा कि काठ की माला फेरो। शुरू में ही सिखा दिया कि मानस जाप करो और ध्यान में अंतिम प्रकाश का गोला रखो। इसलिए मैं आप को रुहानी पुरुष के रूप में देखता हूं। -मुझे किसी नियम से पाबंद नहीं किया; बस इतना ही कहा कि हम तुम्हें जहां देखना चाहते हैं वहां पहुंचो। एक बार मैंने कहा कि आप को देने के लिए मेरे पास कुछ नहीं है। आज मैं अपने विकार आप के चरणों में विसर्जित करना चाहता हूं; क्या अनुमति है ? आप बोले कि शाबाश; जल्दी करो। निश्चय ही वे परम पुरुष थे।

मेरे गुरुदेव में कोई आग्रह नहीं। आसक्ति नहीं। इच्छा नहीं। अपेक्षा नहीं। मैंने एक बार सोचा कि यदि इन के पास आते जाते इन के चरण स्पर्श नहीं करूं तो ये गुस्सा होंगे या नहीं। मैंने पांव छूना छोड़ दिया। कई बार प्रणाम किये बिना ही उठ कर चला जाता। आप के चेहरे पर कोई भाव नहीं। फिर एक दिन सब के सामने

सामान्य तौर पर बोले कि मुरीद जब आश्रम आने के लिए अपने घर से निकलता है तभी मैं उस का प्रणाम स्वीकार कर लेता हूं। मुझे याद किया तब ही तो यहां आने का विचार किया। फकीर को मन से याद कर लेना ही उसे प्रणाम करना है। ऐसी सरलता रूहानी पुरुष में ही होती है। वे परम थे। - यह मेरी अपनी अनुभूति है। मेरा ज्ञान है। हो सकता है कि आप को ऐसा अनुभव नहीं हुआ हो। शायद आप देह, फूल, माला, प्रसाद तक सीमित हों। यह भी सम्भव है कि आप के लिए वे कथित भगवान हों। यह आप का विचार है। विचार तो बन जाता है; अनुभूति बनती नहीं, होती है। विचार सत्य हो, यह जरूरी नहीं किंतु अनुभूति तो सत्य की ही होती है। विचार बदल जाता है; अनुभूति बदलती नहीं है। विचार तो मान्यता है, ज्ञान नहीं। अनुभूति ज्ञान है, मान्यता नहीं। देहधारी गुरु को भगवान मान लेना एक मान्यता है; उधर गुरु तत्व की अनुभूति तो ज्ञान है। गौतम को सत्य का बोध हुआ था और हम ने कह दिया कि हमारे विचार से गौतम अब भगवान हैं। उन्हें सत्य की अनुभूति हो गई इसलिए वे भगवान हैं। हमें उन के भगवत रूप की अनुभूति नहीं है; उन का ईश्वरत्व हमारा विचार है। ऐसे ही आप के गुरु के गुरुत्व का आप को ज्ञान नहीं हुआ है लेकिन मुझे उस की अनुभूति कराई गई है। मेरे कथन पर गौर कीजिए - मुझे स्वयं की साधना के सहारे अनुभूति नहीं हुई; गुरु ने ही कृपा कर के स्वयं के गुरुत्व का ज्ञान करा दिया। अब मैं अपनी सामर्थ्य से उस अनुभूति की पुनरावृत्ति कर रहा हूं। मेरे लिए वे रूहानी पुरुष हैं।

मैंने उन का सूक्ष्म रूप देखा है। उनकी परा वाणी सुनी है। उनके साथ मनो संवाद किया है। उन्हें आकाश में देखा है। हवा में देखा है। प्रकाश में देखा है। स्वयं के अंदर उन्हें भोग ग्रहण करते हुए देखा है। हृदय में उन के आदेश सुने हैं। फटकार सुनी है। उन के कथन सत्य होते हुए देखे हैं। रुहानियत में उन के उर्स और भण्डारे देखे हैं। मैंने उन्हें खुद का रक्षा कवच बनते हुए देखा है। वे बता देते हैं कि सामने वाला मेरे साथ कहां असत्य आचरण कर रहा है। वे दूर के वार्तालाप सुना देते हैं। होनी से अवगत करा देते हैं। अब मैं उन के साथ एकत्व की राह पर हूं। वे मेरे रुहानी पुरुष हैं; परम पुरुष हैं।

संग्रीला घाटी - वे किस स्तर के रूहानी पुरुष हैं, यह इस प्रसंग से भी ज्ञात होता है। यह घाटी दुनिया की सर्वाधिक रहस्यमय जगह मानी जाती है। यह तिब्बत और अरुणाचल प्रदेश की सीमा पर है। यहां अदृश्य सिद्धाश्रम, ज्ञानगंज एवं योगाश्रम बताए जाते हैं।

आप ने समझाया कि उक्त जगह अपार्थिव है। कोई पार्थिव जगह जब सिद्ध महात्माओं की साधना एवं निवास स्थली बन जाती है तो वह अपार्थिव हो जाती है। उस के पार्थिव गुण दोष समाप्त हो जाते हैं। उस स्थान के चारों तरफ ऐसी रूहानी तरंगों की अदृश्य चादर फैल जाती है जो प्रकाश का परावर्तन नहीं होने देती। इस के परिणाम स्वरूप ये आश्रम सामान्य जन के लिए अदृश्य रहते हैं। ...यहां भूमि का गुरुत्व बल स्थगित रहता है और वायु के गैसीय अणु विरल पड़ जाते हैं। इस कारण यहां के महात्मा बहुत तेज गति से चल सकते हैं तथा हवा में उड़ सकते हैं।

इस घाटी में आश्रम जैसे अस्थाई आवास ज्यादा होते हैं। ये सिद्ध महात्मा जरूरत के अनुसार सूर्य प्रकाश में विद्यमान पंच महाभूतों का आत्म शक्ति से संघटन करते हुए अस्थाई आश्रम का संयोजन करते हैं। कार्य पूर्ति के बाद उनका विसर्जन कर देते हैं। ...अधिकतर सिद्ध आत्म देह के रूप में रहते हैं । यह प्रकाश पुंज होता है। जो आज्ञा चक्र पर दिखता है उसी का परिवर्द्धित एवं संघनित रूप। ये सिद्ध गण आवश्यकतानुसार सूक्ष्म या स्थूल शरीर धारण कर लेते हैं। इन के अलावा यहां अनेक देह धारी योगी भी सैकड़ों साल से साधना करते हुए मिल जाते हैं।

यहां का सारा अस्तित्व योग सृष्टि का कमाल बताया जाता है। योगारूढ मनुष्य को सिद्ध योगी कहते हैं। ऐसे महात्मा स्वयं की आत्म शक्ति से चाहे जैसी सृष्टि कर सकते हैं। प्रकाश में मौजूद सृष्टि तत्व से संयोजन वियोजन के द्वारा सृजन - विसृजन कर सकते हैं। ये महात्मा क्रिया योग वाली विधि से स्थूल श्वास की आवश्यकता को स्थगित कर देते हैं। तब इन्हें आक्सीजन की जरूरत नहीं रहती है। ये सूक्ष्म प्राण से जीवित रहते हैं। स्थूल देह धारी योगियों को सूर्य प्रकाश से ही प्राण ऊर्जा मिलती रहती है। इसके परिणाम स्वरूप आयु ठहर जाती है; उम्र बढती नहीं है। देवताओं की तरह ये भी चिर युवा रहते हैं। यहां स्वेच्छा से मृत्यु का वरण किया जाता है।

गुरु साहब ने बताया कि लगभग 14 ईस्वी पूर्व इस क्षेत्र में देव सभ्यता आबाद थी। उन के तपो बल से यह क्षेत्र अपार्थिव हो गया था। तब ऋषि मुनियों एवं अन्य सतोगुणी मनुष्यों का यहां आना जाना रहता था। कालांतर में सब कुछ उलट गया। अब यह घाटी केवल सिद्ध महात्माओं तक सीमित रह गई है। अभी भी धरती के परमहंस जैसे महात्मा यहां जाते रहते हैं। ... एक जिज्ञासा थी कि यहां अदृश्य यज्ञों एवं मंत्रोच्चारण की ध्वनि कैसे गूंजती रहती है ! तो एक दिन बाबा हुजूर के

आस्ताने में ऐसी अनुभूति कराते हुए समझा दिया - मैं ध्यान मग्न था। तभी ओऽम् नमः शिवाय की आहूतियां सुनाई देने लगीं। यज्ञ का माहौल और ये आहूतियां। आधा घण्टे तक ऐसा ही रहा। सब समझ में आ गया। आगे यह सवाल कि इस स्थान पर ये महात्मा क्या करते हैं? तो आप ने स्पष्ट किया - दुनिया में पॉजीटिव तरंगें प्रेषित करते हैं। तीर्थ स्थानों को ऊर्जावान रखते हैं तथा वहां की नदियों के जल में दैवी ऊर्जा मेंटेन रखते हैं। धरती पर समाधि एवं मजारों को ऊर्जावान बनाए रखने में उन संबद्ध महात्माओं की मदद करते हैं जो देह त्याग चुके हैं। योग्यतम साधकों का चयन कर के उन्हें सिद्धाश्रम लाते हैं।

ऐसे सिद्धाश्रम भारत में अन्य जगह भी हैं - मेरु पर्वत पर महर्षि कश्यप का आश्रम, दण्डकारण्य में महर्षि विश्वामित्र का आश्रम, वाराणसी में परमहंस विशुद्धानंद जी का आश्रम, छत्तीसगढ़ में महात्मा अंगीरा की गुफा आदि। सूफी ओलियाओं की दरगाह भी ऐसी ही रूहानी जगह होती हैं।

ये महात्मा सूर्य विज्ञान के विशेषज्ञ होते हैं। अजीव - सजीव सृष्टि के सारे तत्व सूरज के प्रकाश में होते हैं। उन्हीं से कुदरत सारी चीजें बनाती है। प्रकृति की प्रक्रिया में निश्चित वक्त लगता है। किंतु ये सिद्ध गण समय की अवधि को नहीं मानते और त्वरित गति से संघठन विघठन करते हैं। कुछ मंत्र, कुछ यंत्र, प्रकाश और आत्म बल; कुदरत इनके काबू में रहती है।

मंसूर को सूली पर क्यों चढाया !

एक बार प्रश्न किया कि सूफी संत मंसूर बिन हल्लाज को सूली पर क्यों चढाया गया ? मैं चुप रहा। मैंने सुना और पढ़ा है कि नौवीं सदी के दौरान फारस में ये सूफी फकीर थे। पारसी से मुसलमान हुए थे। सूफी साधना के चारों स्तर पार करते हुए खुदा में फना हो गए थे। उसी अवस्था में 'अन' ल हक' बोलते थे। इसका मतलब है , मैं सत्य हूं। सत्य यानी खुदा। इसीलिए कट्टर पंथी मुल्ला मौलवियों ने इसे अपराध माना। बादशाह को शिकायत की। मुकदमा चला। आठ साल जेल में रखा। किंतु इनकी स्थिति में सुधार नहीं हुआ। ये समाधि की दशा में अनलहक बोलते रहे। परिणाम स्वरूप इन्हें सूली की सजा दी गई। लेकिन क्यों ? यह आपने समझाया- फना हो जाना एक दिव्य अनुभूति है। खुद को उस अलौकिक आलोक में रौशन देखना और स्थूल देह बोध से मुक्त हो जाना आंतरिक अनुभूति है। यह अव्यक्त है। निःशब्द है। इसमें दिव्य नाद है, कोई शब्द नहीं। लेकिन वह बोल गया।

बोलना ही गुनाह हो गया। मुसलमानों के अल्लाह (वह एक है, दो नहीं) के विरुद्ध हो गया। पहले मूसा, नूह और मोहम्मद; किसी ने ऐसा नहीं कहा। मंसूर ने कह दिया यह अपराध जैसा हो गया।

हमारे किसी भी ऋषि, महर्षि, ब्रह्मर्षि, महात्मा आदि ने मुंह से नहीं कहा कि मैं ब्रह्म हूं (अहं ब्रह्मास्मि)। होता यह है कि व्यक्तिवाचक मैं ही बोलता है। देहधारी मैं बोलता है। देह में 'इदमं' बोलता है। अहंकार बोलता है। सविकल्प समाधि में सात्विक मैं रहता है; वही बोलता है। किंतु ब्रह्म तो व्यक्तिवाचक, जातिवाचक, भाववाचक आदि सारे सर्वनाम, संज्ञा और विशेषणों से परे होता है। वह वाणी से अगम है। वह अतिन्द्रीय (जिसके दसों इंद्रियां नहीं होती) है। अतः बोलेगा कैसे ? वह तो परम शांति है; परमानंद है; केवल अनुभूति। मंसूर इस दिव्यानुभूति में धैर्य नहीं रख सका। अधीर हो गया। अनन्य अनुभूति से उतावला हो गया। अंदर ही अंदर ऐसा हुआ; उसे कुछ भी ज्ञात नहीं। लेकिन परिणाम पलट गया। उसकी परम हस्ती स्वयं बोलती; उस के उपदेश बोलते; उस का व्यक्तित्व बोलता; उस की दृष्टि बोलती कि वह मुक्त पुरुष है। किंतु वह खुद ही बोल गया। धैर्य नहीं रखा कि उसका व्यक्तित्व बोले। मैं बोला और मारा गया। परम अहम् बोलता नहीं है।

दुष्टों में तामसिक मैं बोलता है; मनुष्य में राजसिक मैं तथा महात्माओं में सात्विक मैं बोलता है। जीवन मुक्त में परम अहम् निःशब्द आनंद मय रहता है। यह एक परम अवस्था है। हमारा ऋषि कहता है कि तुम में जो चेतन शक्ति (अहम्) बोल रही है, उसी का अनंत विस्तार ''ब्रह्म'' है - अहं ब्रह्मास्मि।

मुझे याद है - शक्तिपात के बाद मेरी रुहानी दशा में एक ऐसा दौर आया कि मुझे लगता, मैं ही गुरु हूं, गुरु एवं मैं एक हो गए हैं। गुरुदेव बोलते कि बाहर भोग लगाना बंद करो; हम तुम्हारे माध्यम से भोजन ग्रहण कर लेते हैं। आस्ताने में मैं समाधि के प्रकाश में लीन हो जाता; कभी स्वयं को पीर के साथ टहलते हुए देखता। जो कह देता वह सच हो जाता था। आस्ताना मेरे अंदर ही दिखता था। अब यदि मैं ये बातें लोगों को बताता या मुंह से बोलता तो मेरा उपहास होता; मुझे पागल कहा जाता और मंसूर हल्लाज वाला जमाना होता तो सजा भी दी जाती। साधना के पथ पर यह तो मामूली अवस्था है लेकिन इसे भी अंदर दबा लेना पड़ता है। उधर मंसूर ने तो चरम सीमा की बात बोल दी। उदारवादी उस समय भी थे। उन्हीं के कारण उसे जेल में रखा गया; इस उम्मीद के साथ कि शायद वह अनलहक बोलना बंद कर दे।

बस, वे लोग यह नहीं माने कि मंसूर अचेतावस्था में ऐसा बोलता है; जान बूझ कर नहीं।

क्या हमारे मस्तिष्क की केंद्रीय ऊर्जा ही आत्मा है !

केन्द्रीय ऊर्जा का मतलब है वह शक्ति जो हमारे शरीर के दैहिक, मानसिक एवं यौनिक विकास को नियंत्रित करती है। हमारी आध्यात्मिक अवधारणाओं में इसीलिए (1) कुण्डलिनी शक्ति को मूलाधार से उठा कर सहस्त्रार तक ले जाने एवं आज्ञाचक्र पर ध्यान लगाने पर जोर दिया गया है। आज्ञाचक्र को हृदय मानते हैं जहां आत्मा का निवास है। यह मस्तिष्क में है। विज्ञान के अनुसार मास्टर ग्लैंड यानी पीयूष ग्रंथी (पिच्यूटरी ग्लैंड)। यह हाइपोथेलेमस मस्तिष्क के तल पर निचले हिस्से में स्थित है। आकार मटर के दाने जैसा। रंग लाल व भूरा। यह अंतःस्त्रावी ग्रंथी है। यह हमारे शारीरिक, मानसिक व यौनिक विकास को नियंत्रित करती है। इसी की सीध में ललाट पर बिंदी, तिलक, त्रिपुण्ड चन्दन आदि लगाये जाते हैं। आधुनिक क्वाण्तम भौतिकी के अनुसार क्वाण्तम चेतना भी यहीं मस्तिष्क में है। पूरे विश्व में ललाट पर किसी न किसी रंग का कोई निशान लगाने का रिवाज है; जरूर इस का कोई कारण तो है। ज्यादातर श्वेत, लाल, पीला आदि रंग ही इस्तेमाल किया जाता है। आकार होता हे - गोल, त्रिभुज, चक्र, त्रिपुण्ड और खड़ी लकीर। ये सब ऊर्जा संवर्धन, उद्दीपन आदि के आधार हैं।.. इस केंद्रीय ऊर्जा से रोज ब्रह्म मुहूर्त के समय अमृत की बूंद टपकती है; यहां की पीयूष ग्रंथी से प्रति दिन जीवन रस स्त्रवित होता है। ऐसी मान्यताएं हैं। ग्रंथी में यही ऊर्जा द्रव रूप है; ज्ञान में प्रकाश रूप; और कर्म में शक्ति (अहंकार) रूप। भक्ति में इसी को ईश्वरीय रूप में साकार किया गया है। विज्ञान इसी के वैश्विक रूप को ब्रह्माण्ड व्यापी क्वाण्तम चेतना कहता है।

देह में देखो कि खरबों कोशिकाएं सजीव, न्यूरांस सजीव, ग्रंथियां सजीव। इस का आधार है जीव। जीव क्या है? स्थूल प्राण। या भोग कर्माणुओं से युक्त अंतःकरण चतुष्टय; चित्त, मन, बुद्धि, अहंकार और कर्माणु। इन कर्माणुओं का संचय चित्त में बताया जाता है। इसका स्थान मस्तिष्क में है। मन, बुद्धि, अहंकार भी मस्तिष्क में हैं। जीव भी ब्रह्मरंध्र के जरिए कथित भुवर्लोक से यहीं उतरता है। कपाल छिद्र से ही सूक्ष्म शरीर लोक लोकांतरों की यात्रा के लिए निकलता है। मृत्यु भी मस्तिष्क में ही घटित होती है - बोध शक्ति नष्ट हो जाती है;

न्यूरांस, अंत:स्रावी ग्रंथियां काम करना बंद कर देती हैं। स्पाइनल कोर्ड से मस्तिष्क को कोई संकेत मिलता है जिस के बाद शरीर में त्वरित डीकम्पोजिशन (विघटन) शुरू हो जाता है।

तो लगता यही है कि जीवन मस्तिष्क में है और यहीं से शरीर में उतरता है अथवा फैलता है। मृत्यु के वक्त देह से सिकुड़ जाता है - श्वास प्रश्वास थम जाती है; रक्त संचार रुक जाता है। लगभग 20-40 क्षण में मस्तिष्क की भी मृत्यु हो जाती है। जीवन मृत्यु का केंद्र मस्तिष्क है। इसीलिए इसे ऊर्जा का केंद्र कहा गया है लेकिन मस्तिष्क की मृत्यु एवं जीवन का कारण कौन है? कोशिकाओं को कार्य शक्ति कहां से मिलती है? विज्ञान चुप। गॉड पार्टिकल्स को पहचानने की क्षमता उसे किस ने दी है ? विज्ञान चुप। यदि क्वाण्तम चेतना की बात करें तो उस क्वाण्तम की ऊर्जा का स्त्रोत क्या है? विज्ञान चुप। हमारे ऋषि कहते हैं कि चेतन ऊर्जा। मस्तिष्क की केंद्रीय ऊर्जा से ऊपर है चेतन ऊर्जा । इसका उत्स है - ब्रह्म तत्व।

अब सवाल - क्या ब्रह्माण्डीय चेतना का उत्स ब्रह्माण्डीय द्रव्य में ही है? क्या मानवीय चेतना का उत्स मस्तिष्कीय रसायनों का संगठन ही है ? क्या ब्रह्म केवल अभौतिक ऊर्जा है ? यह मानव द्रव्य क्या है जिसे विज्ञान अब यूनिवर्स का मूल कारण मानना चाहता है ? मुझे आज्ञाचक्र के श्वेत प्रकाश में जो कुछ दिखता है वह दिव्य है अथवा अतींद्रिय शक्ति का परिदृश्य? तो क्या चेतन शक्ति अतींद्रिय ऊर्जा है ? किसी ऐसे ग्रह या तारे की ऊर्जा जो हमारी कल्पना से परे है ? स्टीफन हॉकिंस ने कहा कि किसी तारा मण्डल में गैसीय मानव भी हो सकते हैं और जिन की खुराक नाइट्रोजन गैस हो या ठोस नाइट्रोजन हो। माईनस 183 डिग्री सेंटीग्रेट पर ऑक्सिजन गैस जम जाती है। माईनस 259 - 434 डिग्री सेंटीग्रेट पर हाईड्रोजन ठोस हो जाती है; वह क्रिस्टल रूप में भी उपलब्ध कराई जा सकती है।

समय क्या है !

एक बार यों ही बात चल गई कि समय क्या है ! तब आप ने अंतर्वाणी के माध्यम से समझाया उसी को यहां लिख रहा हूं। ...काल अनंत है। यह अदृश्य ऊर्जा का अनंत प्रवाह है। पूरे ब्रह्माण्ड में है। समय उसका एक मान है जो प्रत्येक ग्रह एवं आकाशगंगा में बदल जाता है। जैसे विश्व के अन्य देशों में हमारे रुपये का मान (वेल्यू) बदल जाता है वैसे ही पृथ्वी वाले समय का मान दूसरे ग्रहों पर अलग हो जाएगा। बुध ग्रह का एक दिन पृथ्वी के 88 दिन के बराबर और बृहस्पति ग्रह का

एक दिन हमारे 260 दिन जितना है। ऐसे ही यदि बीस वर्षीय कोई मनुष्य प्रकाश की गति से थोड़ी कम गति वाले यान में बैठ कर देवयानी गेलेक्सी की यात्रा करके वापस आए तो उसकी उम्र में 36 साल बढ जाएंगे किंतु पृथ्वी पर 40 लाख वर्ष बीत चुके होंगे। समय का मान इतना बदल जाता है। समय की गणना गति के सापेक्ष होती है लेकिन काल तो निरपेक्ष है। सारे ग्रहों व आकाशगंगाओं पर एक जैसा है।

काल तो ऊर्जा प्रवाह है। निरंतर अथिर है; ठहरता नहीं है। यही वह ऊर्जा है जिस के प्रभाव से बिग बैंग के बाद मात्र डेढ सेकण्ड में ब्रह्माण्ड हजार-हजार खरब गुना फैल गया था। इसे गणितीय ढंग से दस पर तीस पॉवर कहेंगे। ...अंग्रेजी भाषा में काल के लिए कोई पर्याय वाची शब्द नहीं है। वहां केवल एक ही शब्द है, टाईम। उनके पास बिगे बैंग से पहले समय की अवधारणा नहीं है लेकिन हम कहते हैं प्रलय काल यानी जिस काल में प्रलय हो गई या प्रलयावस्था थी। जब हमारे ब्रह्माण्ड (आकाशगंगा) में प्रलय काल था तब किसी दूसरी गेलेक्सी में सृष्टि रही होगी; इस सम्भावना से इनकार नहीं किया जा सकता है।

हमारे पौराणिक साहित्य में पूर्ण प्रलय की अवधारणा अलग ढंग की है। यह पूर्ण प्रलय आंतरिक होती है, बाहरी नहीं। आंतरिक प्रलय का अर्थ है मोक्ष - जब जीव भाव, सूक्ष्म एवं कारण शरीर से मुक्ति मिल जाती है। पुनर्जन्म समाप्त। जिसका जन्म नहीं तो उसके लिए सृष्टि भी नहीं। हम हैं तो संसार की अनुभूति है। जो दुनिया में है ही नहीं, उसके लिए दुनिया भी नहीं है। उसके लिए कुछ नहीं है। कुछ नहीं होना ही प्रलय है। वह सूक्ष्म काल में लीन हो जाता है। सूक्ष्म काल यानी 1/1000000000 सैकण्ड। इसका ज्ञान प्रजापति ब्रह्मा को भी नहीं होता है। ..परमाणु समय तक तो भागवत पुराण में समय की गणना की हुई है-

दो परमाणु से एक अणु बनता है; ऐसे तीन अणुओं से एक त्रसरेणु बनता है; ऐसे तीन त्रसरेणु (18 परमाणु) को पार करने में प्रकाश को जितनी देर लगती है उसे 'त्रुटि' कहते हैं। एक त्रुटि 1/3750 सैकण्ड माना गया है। यहां से आगे ब्रह्मा के एक दिन यानी आठ करोड़, पैंसठ लाख वर्ष तक समय की गणना प्राचीन काल में ज्ञात थी। इससे भी आगे ब्रह्मा के एक सौ दिव्य वर्ष। यह सृष्टि से संबंधित है; सृष्टि का सारा फैलाव दिक् में है। ...ओर दिक्,काल में है। महाकाल ही ब्रह्म है। विज्ञान भी परमाणु के आधार पर ही समय की गणना करता है - परमाणु के उप कण इलेक्ट्रान की तरंग दैर्घ्य के अनुसार। यह तरंग एक मीटर की दूरी कितने समय में

पार करती है ! इसी गणित के आधार ही प्रकाश की प्रति सैकण्ड गति निकाली गई है- 299792458 मीटर। इसे लगभग तीन लाख कि.मी. प्रति सैकण्ड कहा जाता है। लेकिन परमाणु से पहले मूल कण क्वार्क, लेप्टान, फोटोन व बोसोन माने गए हैं। इनके आधार पर समय की गणना नहीं है। क्वार्क से भी पहले इसे बनाने वाला लावा जो जलती हुई गैस था। यह बिग बैंग के तत्काल बाद अस्तित्व में आया। बिग बैंग से पहले यह सब एक परमाणविक इकाई के रूप में था। उसके चारों तरफ काल की अदृश्य ऊर्जा थी। उसमें ओऽम् गूंज रहा था। इसे महाकाल का दिव्य रूप कहा गया है। समय की अवधारणा तो पृथ्वी के बाद शुरू हुई। समझो कि प्रकाश के अस्तिव में आने से आरम्भ हुई; किंतु काल तो सनातन है।

बौद्ध धर्म में काल को शून्य कहा गया है। वहां कालचक्र की पूजा की जाती है। इस काल के चार आयाम हैं - शून्य यानी वह अवस्था जब सृष्टि नहीं हुई। स्वरूप अर्थात जब सृष्टि आरम्भ हुई। समय साकार हुआ। तीसरा अवधि यानी एक निश्चित समय सीमा जिस में सृष्टि का विकास होता है। चौथी अवस्था है, ध्वंस; मतलब विनाश, प्रलय। फिर वापस शून्य रह जाता है। यह शून्य ही सत्य है; अनादि अनंत है। ऐसा कहा जाता है कि गौतम बुद्ध को इस सत्य की अनुभूति ज्ञानगंज या सिद्धाश्रम में हुई थी। उनकी भाषा में इस जगह का नाम शम्भाला है।

चरणामृत - जब भगवान अवतार रूप में होते हैं तब उनके चरणों की धोवन चरणामृत कही जाती है। ऐसे ही शिष्य गण स्वयं के गुरु के चरण की धोवन से मिलने वाली चरण रज को चरणामृत मानते हैं। मंदिरों में ईश्वर की प्रतिमा के प्रक्षालन वाले जल में तुलसी पत्र रख कर चरणामृत के रूप में दिया जाता है। ...तो समझना यह है कि चरण रज एवं चरणामृत क्या है ?

11. सत्संग

गुरुदेव अपने कक्ष में नियमित सत्संग करते थे। मैंने वहां जो ज्ञान प्राप्त किया उसे संकलित, संक्षिप्त एवं सम्पादित रूपेण यहां प्रस्तुत कर रहा हूं।

(1). जीभ पर संयम

दक्षिण भारत के कई नामी संतों में एक सदाशिव भी थे। उनके गुरु का नाम परमशिवेंद्र सरस्वती था। एक बार सदानन्द जी ने शास्त्रार्थ में किसी वेदांती विद्वान को हरा दिया। जब वे गुरुदेव के पास गए तो उन्होंने इन्हें फटकार दिया....फिर कहा कि तुम अपनी जबान पर संयम नहीं रख सकते हो? आखिर ऐसा कब करोगे? उसने कहा - अभी...इसी क्षण से।.... और सदानंद मौन हो गया...सदा के लिए चुप हो गया। यह था अहंकार को छोड़ना। उसने कहा था कि 'मैंने उस विद्वान को शास्त्रार्थ में हरा दिया'- यह अहंकार था जिसे उसके गुरु मिटाना चाहते थे। सदानंद ने अहंकार का संग छोड़ दिया। आगे एक मुसलमान सरदार के निवेदन पर उसे शिक्षा दी; रेत पर अंगुली से लिख कर कि जो करने का मन हो, उसे कभी मत करो। इसका तात्पर्य भी यही कि अहंकार से अलग हट जाओ।

घूमते-घूमते आप किसी दूसरे नगर में चले गए। वहाँ मजदूरों के ठेकेदार ने आपको भी मजदूरों के झुण्ड में धकेल कर लकडी के लट्ठे उठाने के काम पर लगा दिया। आप कुछ नहीं बोले- उसे बताया नहीं कि मैं ब्राह्मण हूँ, मजदूर नहीं हूँ...पण्डित हूँ। लट्ठा उठा कर जब लकड़ियों के बाड़े पर रखा तो उसमें आग लग गई...सब कुछ जल कर राख हो गया। वह ठेकेदार चमका। उनके चरणों में सिर रख कर माफी मांगी। फिर भी आप चुप रहे और वहाँ से चले गए। महात्माओं के मान की रक्षा खुद भगवान करते हैं, स्वयं उन्हें बोलने की जरूरत नहीं रहती है।

(2). अभय

संत कुम्भनदास उच्च कोटि के भक्त थे। एक बार किसी राजा के सैनिक उन्हें पकड़ कर ले गए। राजा उनके भजन सुनना चाहता था। दरबार में कुम्भनदास नजर नीची किए हुए चुप चाप खड़े रहे। राजा बोला कि महात्मन् /आप इस तरह क्यों खड़े हैं? आपको कोई कष्ट है तो बताएँ। महात्मा बोले कि मैं जिसका मुँह देखना नहीं चाहता, उसके सामने भजन सुनाने को बाध्य किया जा रहा है; यही कष्ट

है। सैनिकों ने तलवार उठाई लेकिन राजा ने संकेत से शांत रहने को कहा। फिर स्वयं बोले कि मेरा कुछ कसूर ? अब कुंभन दास ने जवाब दिया- आप युद्ध में निर्दोष लोगों को मारते हैं, दूसरों का राज्य छीनते हैं, आपके सैनिक जीते हुए राज्य को लूटते हैं....क्या यह आपका कसूर नहीं ? मैं भजन भगवान के भक्तों को सुनाता हूँ .. किंतु यहाँ तो सारे के सारे आक्रांता व आततायी बैठे हुए हैं। तब राजा ने दरबार को संबोधित करते हुए कहा कि देखो ! संत कितना अभय होता है ! न धन का लोभ और न मौत का भय ! केवल भगवत भाव में लीन रहता है। ....मैं इन्हें प्रणाम करता हूँ और आदेश देता हूँ कि इन्हें सम्मान पूर्वक इनके घर पहुँचा दिया जाए। जिसे मृत्यु का भय है वह सतकर्म के मार्ग से विचलित हो सकता है। भय केवल बुरे कर्म से होना चाहिए।

सिकंदर के भारत पर आक्रमण के समय की बात है। उसके सैनिक दंडामिस या दाण्ड्यायन नाम के महात्मा के पास गए। उन्हें सम्बोधित करते हुए बोले -देवपुत्र विश्व विजेता सिकंदर महान ने आपको बुलाया है। आप चलेंगे तो बहुत उपहार मिलेंगे और यदि मना करेंगे तो आपका सिर काट दिया जाएगा। महात्मा बोला कि अरे ! फिर तो जल्दी काट...भीतर का सिर (अहंकार) तो कभी का गिर चुका है; बाहर वाले को तू अभी काट दे। झंझट खत्म...मैं अपने परमात्मा के घर जाऊँ। सैनिक चकित रह गए.. यह आदमी तो मरने के लिए तैयार है ! मौत का डर ही नहीं! यह तो हमारे सम्राट से भी नहीं डरता है ! वे लौट गए। फिर खुद सिकंदर आया। सुबह का वक्त था। महात्मा जी धूप में बैठे थे। सामने जा कर सिकंदर बोला - मैं विश्व विजेता सम्राट सिकंदर आपके पास आया हूँ... आपकी क्या सेवा करूँ ? ...दण्डामिस ने कहा कि सामने से हट जाओ ...धूप आने दो ! सिकंदर लौट गया। यह है अभय एवं अनासक्ति।

एक और छोटी सी घटना-बर्नार्ड शॉ इंग्लैण्ड के बहुत विख्यात साहित्यकार थे। वहाँ की रानी ने एक बार उनके नाम पत्र भेजा। पत्र ले कर दरबारी आदमी उनके घर पहुँचा। पत्र में लिखा था कि मैं अमुक दिन आपके साथ चाय पीना चाहती हूँ। कृपया अवश्य आएँ ! जवाब में शॉ ने पत्रवाहक को कहा कि आपकी पत्नी मेरे साथ चाय पीना चाहती हैं किंतु मैं नहीं...उन्हें कहें कि मुझसे मेरी सुविधा के अनुसार समय तय करें; तभी ऐसा आयोजन हो सकता है। बर्नार्ड शॉ ऐसा क्यों कह सके ! क्योंकि उनमें न तो महारानी के साथ चाय पीने का मोह था, न

ही उनसे मूल्यवान उपहार पाने का लालच; न ही उनके नाराज हो जाने का भय था, न ही राजदरबार में चाय पीने की आसक्ति ! ...उनसे संबंधित एक और घटना है- उस समय की एक विश्व विख्यात खूबसूरत अभिनेत्री ने उनके समक्ष विवाह का प्रस्ताव रखा। उसका कहना था कि इससे हमारी संतान आप जैसी बुद्धिमान एवं मेरी जैसी सुन्दर होगी। शॉ ने उसका प्रस्ताव ठुकराते हुए कहा कि यदि इसका उल्टा हो गया तो !...मतलब मेरी तरह बदसूरत और तुम्हारी जैसी मूर्ख संतान हो गई तो? यह है मांसल सौंदर्य के प्रति अनासक्ति।

(3). चाहत और लक्ष्य

विश्व विख्यात गणितज्ञ आइंस्टाइन से संबंधित है यह घटना। कहते हैं कि विवाह की पहली रात के मधुर अवसर पर उनकी पत्नी उन्हें छत पर ले गई। मौसम सुहावना था। वह कवयित्री थी। चाँद पर कविता सुनाने लगी। पहली पंक्ति पूरी होते ही आइंस्टाइन बोले - ठहरो ! क्या तुम्हें चाँद का डाइमीटर ज्ञात है? पत्नी ने कविता वाली डायरी बंद कर दी...थोड़ी तुनक भी गई। जब वैज्ञानिक महाशय ने कहा कि देखो! तुम्हारी चाहत कविता का आनंद है और मेरा लक्ष्य भौतिकी गणित है। तुम अपनी चाहत का आनंद लो एवं मुझे अपने लक्ष्य तक पहुँचने दो। पत्नी खुश हो गई। फिर दोनों चांद की सुंदरता का काव्यात्मक आनंद उठाने लगे। यह है अहंकार से मुक्त समझदारी। पत्नी जान गई कि उसका पति वैज्ञानिक-योगी है... उसके लिए भौतिक आनंद का तनिक भी महत्व नहीं है।

(4). मैं तो उसी दिन मर गई थी !

आयरलैण्ड के स्वतंत्रता-आंदोलन में 'जॉन ऑफआर्क' का बड़ा नाम है। यह एक कृषक बालिका थी। बात उन दिनों की है जब आयरलैण्ड पर अंग्रेजों का अधिकार था। देश को आजाद कराने की लड़ाई चल रही थी। वह कृषक बालिका भी अग्रणी आंदोलनकारी थी। उसे रूहानी शक्ति प्राप्त थी। बचते-बचते भी वह अंग्रेज सैनिकों की पकड़ में आ गई। सैनिकों ने गाँव की चौपाल में आग जलाई। सैकड़ों लोगों की भीड़ एकत्र हो गई। सैनिकों ने उसे कहा कि इंग्लैण्ड की जय बोलो अन्यथा इस आग में तुम्हें जला देंगे। जॉन ने आयरलैण्ड की जय बोली। फिर सैनिकों से कहा - मुझे मौत का डर मत दिखाओ...अपने देश को आजाद कराने के लिए मैं जिस दिन घर से बाहर निकली थी, उसी दिन मर गई थी... मैं यह लड़ाई आत्म

बल से लड़ रही हूँ, शरीर से नहीं...। मौत का भय मुझे नहीं, तुम लागों को है। तुम ही एक दिन मृत्यु के डर से यह देश छोड़ कर भाग जाओगे। ऐसी खरी बात सुन कर सैनिक तिलमिला गए। उन्होंने जॉन को आग की लपटों में फेंक दिया। इतिहास ने उसे जॉन ऑफआर्क के रूप में अमर कर दिया। सतकर्म की राह पर कई बार देह का मोह छोड़ना पड़ता है। हमारे देश की आजादी का इतिहास ऐसे उदाहरणों से भरा हुआ है।

(4 A). विभीषण का पतन !

रावण की आसुरी प्रवृत्तियों के कारण विभीषण ने उसका त्याग किया था। अपने ही अधर्मी भाई को छोड़कर वह श्रीराम की शरण में आ गया। रावण मारा गया और रामजी ने उसे लंका का राजा बना दिया। इस तरह राम भक्त विभीषण लंकेश हो गया। लंका में सुराज आ गया। जनता बड़ी खुश हुई।

लेकिन सत्ता और भोग ने विभीषण को स्वेच्छाचारी बना दिया। वह श्रीराम को भूल गया, उनके काम को भूल गया। दबे हुए विकार वापस खड़े होकर सामने आ गए। उसके खिलाफजन आक्रोश बढ़ने लगा। उधर रावण का सबसे छोटा पुत्र अरिमर्दन जवान हो गया-रावण की मृत्यु के समय वह शिशु था....मंदोदरी से नहीं, किसी अन्य रानी से उत्पन्न हुआ था। विभीषण के विरुद्ध जन आक्रोश को अरिमर्दन ने अपने पक्ष में संगठित किया। ...और विभीषण के विरुद्ध युद्ध छिड़ गया। ...उसने सहायता के लिए श्रीराम के पास सूचना भेजी। अयोध्या से सेना गई भी.... लेकिन विभीषण हार गया.... उसे 'श्रीराम' का समर्थन नहीं मिला। इस बात को समझाने के लिए आगे द्वापर युग की घटना का उदाहरण देखते हैं-श्रीकृष्ण की नारायणी सेना दुर्योधन के पक्ष में लड़ी फिर भी उसका सर्वनाश हुआ....क्योंकि उसे स्वयं भगवान श्रीकृष्ण का समर्थन नहीं मिला। पराजित विभीषण ने वन में पलायन किया। रावण का यह पुत्र लंका का राजा बना।

अब गीता की बात कि विकारों को छोड़ो, उन्हें दबाओ मत। दबे हुए विकार तो मौका मिलते ही वापस सामने आ जाते हैं ...लेकिन जो छूट गया वह छूट गया। स्कूल की पढाई छोड़ कर जो कॉलेज में चला गया वह कभी भी वापस स्कूल में प्रवेश नहीं लेगा। ऐसे ही 'छूटे' हुए विकार मनुष्य पर वापस प्रहार नहीं कर सकते हैं।

(5). क्रोध नहीं आता

गुरु का नाम श्री युक्तिगिरि और शिष्य, योगाानंद । दीक्षा से पहले योगानंद का नाम मुकुन्द था। आरम्भ में योगानंद बहुत वाचाल थे। अपने गुरु से तर्क ज्यादा करते थे और कभी कभार अवज्ञा भी हो जाती थी। ऐसे ही एक बार वे गुरु जी की अनुमति के बगैर ही आश्रम से चले गए...तीन दिन बाहर रहे। फिर सकुचाते हुए लौटे। गुरुदेव के निकट जा कर बोले कि मैं आ गया हूँ। गुरु जी ने कहा- चलो, रसोई में...कुछ खाने का प्रबंध करते हैं। योगानंद विस्मित रह गए...उन्हें तो अपेक्षा थी कि गुरु जी डाँटेंगे फटकारेंगे...किंतु ऐसा कुछ नहीं हुआ...क्यों ? तब शिष्य ने गुरु से पूछा कि आपको मुझ पर क्रोध क्यों नहीं आ रहा है ? युक्तिगिरि जी ने कहा- कोई इच्छा पूरी नहीं होने पर क्रोध उठता है ...किंतु मेरी कोई इच्छा ही नहीं है...न तुम से, न ही किसी अन्य से ! इसलिए मुझे क्रोध नहीं आता है। कितनी सीधी सरल बात है कि इच्छा की अपूर्ति ही क्रोध का कारण होती है...अतः इच्छा को छोड़ दो। इससे यह होगा कि अंततः क्रोध नाम वाला विकार ही भीतर समाप्त हो जाएगा। तो जिससे दोष उत्पन्न होता है उसे छोड़ो...इच्छा से क्रोध वाला दोष उत्पन्न होता है, इसलिए इच्छा को त्याग दो। ऐसी ही एक और कथा- संत रामदास मंदिर जाने के लिए नदी में स्नान करके बाहर आए। तभी एक आदमी ने उन पर थूक दिया। वे कुछ नहीं बोले...वापस स्नान किया। नदी से बाहर आते ही उस आदमी ने उन पर वापस थूक दिया। ऐसा उसने एक सौ बार किया। रामदास जी ने सौ बार स्नान किया। बोले कुछ नहीं। जब एकसौ एकवीं बार नदी से बाहर आए तब वह आदमी उनके चरणों में गिर कर रो दिया। महात्मा ने उसे उठाया और बोले कि तुम क्यों रोते हो ? उसने कहा कि मैं अपनी दुष्टता पर रो रहा हूँ। फिर हाथ जोड़े हुए ही पूछा कि आप मुझ पर क्रोधित क्यों नहीं हुए ? रामदास जी बोले कि क्रोध तो भीतर है ही नहीं...जो भीतर होगा वही तो बाहर आएगा ! क्रोध छूट गया। सतकर्म की राह पर दृढ़तापूर्वक चलते रहने से असत प्रवृत्तियाँ छूटती जाती हैं। श्रीकृष्ण भी जब 'संगवर्जितः' कहते हैं तो उसका यही मतलब है। सांसारिक कर्म का निर्वाह करते हुए मन में ऐसा संकल्प भी रखें....अनासक्ति वाला संकल्प...तो वैसा हो जाएगा।

(6). किसे दण्ड दिलाऊँ !

गौतम बुद्ध अपने परम शिष्य आनंद के साथ भिक्षा के लिए बस्ती में घूम रहे थे। राह में एक आदमी ने उन पर थूक दिया। वे कुछ नहीं बोले... वस्त्र से मुँह साफ

किया और आगे चल दिए। आनंद बोला - आपने उसे कुछ नहीं कहा ! उसने आपका अकारण ऐसा अपमान किया ! आप कुछ नहीं कर सकते तो राजा से कह कर उसे दण्ड तो दिला सकते हैं!...गौतम बोले - किसे दण्ड दिलाऊँ ? जिस आदमी ने अपराध किया, वह तो अब रहा ही नहीं...वह तो तेजी से आगे सरकते जा रहे समय के साथ बीत गया...यों समझो कि दो पल पहले जिस व्यक्ति ने थूका था वह तो अब है ही नहीं..अब तो उस घटना के सौ पल बाद वाला आदमी है जो बे कसूर है।...दूसरी बात यह कि उसने मेरे जिस अस्तित्व पर थूका, वह भी अब नहीं है....तो थूकने वाला एवं जिस पर थूका वे दोनों ही भूतकाल में चले गए हैं। अब कौन किसकी शिकायत करे !...ऐसी सोच से ही क्षमा पल्लवित होती है। दूसरी सच्चाई यह कि संसार प्रति पल परिवर्तित होता रहता है। मतलब कि हम प्रति पल भूतकाल होते जा रहे हैं। अतः हर पल का उपयोग करो...उसे व्यर्थ मत जाने दो। अपकार करने वाले के प्रति भी बैर भाव भूल कर सतकर्म करते रहो।

इसी प्रसंग में अब एक और दृष्टांत !

श्रीराम द्वारा छोड़े गए ब्रह्मास्त्र ने दशानन रावण को मृत्यु शैया पर गिरा दिया था...तब उन्होंने लक्ष्मण को कहा कि इस युग के पांडित्य का सूर्य अस्त हो रहा है...जाओ, दशानन से शिक्षा ग्रहण करो...जा कर उनके चरण की तरफ खड़े होना। लक्ष्मण ने ऐसा ही किया...वहाँ खड़े हो कर प्रणाम करते हुए निवेदन किया कि मुझे मानव जीवन के सार की बात बताइये । तब रावण ने उन्हें बीस सत्य बताये जिनमें से हम यहां केवल एक का ही उल्लेख कर रहे हैं क्योंकि अभी इतना ही प्रासंगिक है - जो काम तुम अभी करना चाहते हो उसे तत्काल कर लो...बाद में कर लेने के लिए मत छोड़ो.. क्योंकि संसार हर पल परिवर्तनशील है ...क्या पता अगले पल ही परिस्थिति बदल जाए और तुम वह काम नहीं कर सको ! अब उसने पीपल के सात पत्ते लाने के लिए कहा। फिर उन्हें हाथ में ले कर एक स्वर्ण सींक से बींध दिया। परिणाम देख कर लक्ष्मण चौंक गए...पहला पत्ता सुनहरे वर्ण का, दूसरा रजत वर्ण का ..ऐसे ही छः पत्तों का रंग बदल गया लेकिन सातवें पत्ते पर कोई असर नहीं हुआ ..वह यथावत रहा। ...दशानन ने समझाया कि एक ही सूई ने एक क्षण में ही सारे पत्तों को बेध दिया किंतु इतने से समय में भी उसके परिणामात्मक असर अलग अलग हुए.. तथा सातवें पत्ते तक जब स्वर्ण-सींक पहुँची तब समय बिल्कुल बदल गया जिसके फलस्वरूप उस पर कुछ भी असर नहीं हो सका। ...मैं चाहता तो सोने में

सुगंध पैदा कर सकता था और स्वर्ग तक सीढ़ियाँ बना सकता था लेकिन ऐसा नहीं हुआ...कारण वही कि मैं जब वैसा कर सकता था तब नहीं किया और बाद में समय उक्त कार्य के अनुकूल नहीं रहा। .....तो इस संदर्भ में हमारा अभिप्राय इतना सा है कि सतकर्म करते वक्त आलस मत करो...हो सकता है कि अगले ही क्षण परिस्थिति तुम्हारे प्रतिकूल हो जाए।

(7). जो छूटना है उसे छोड़ दो !

भगवान कहते हैं कि जिससे तुमको दोष लगे या जो तुम्हारा बुरा करे उसे छोड़ दो। सिद्‌र्थ ने पत्नी-पुत्र, माता-पिता व राजप्रसाद को छोड़ा...पत्नी यशोधरा के प्रति आसक्ति इतनी प्रबल थी कि आधी रात उसे सोती हुई को छोड़ गए! जागती हुई को सम्भवतः त्याग कर नहीं जा पाते। फिर लौट कर आए तो भिक्षु के रूप में। उन्होंने 'राजकुमार सिद्धार्थ' को भी त्यागा था। ऐसे ही राजा भर्तहरि ने राजपाट सहित रानी पिंगला व 'राजा भर्तहरि' को छोड़ा। लौट कर पिंगला के पास 'जोगी' के रूप में आए। राजकुमार वर्धमान ने भी सत्य की प्राप्ति के लिए सब कुछ त्याग दिया था। रामबोला ने पत्नी रत्नावली को छोड़ा...फिर उसके जीवन के अंतिम क्षणों में गोस्वामी तुलसीदास के रूप में उसके पास गए। राजा जनक की अवस्था तो और अधिक ऊँची थी....वे राजमहल में घर परिवार के साथ रहते थे किंतु उनके मन से वे सब छूटे हुए थे...वे योगीराज थे। श्रीकृष्ण के जीवन का एक दृष्टांत- अश्वत्थामा के ब्रह्मास्त्र से अभिमन्यु की पत्नी उत्तरा का गर्भस्थ शिशु मृत प्रायः हो गया था। तब महर्षि व्यास ने कहा कि जो ब्रह्मचारी रहा है वही इसे पुनर्जीवित कर सकता है। तब श्रीकृष्ण आगे आए और घोषणा की कि वे ब्रह्मचारी रहे हैं।...कैसे ! उनके तो आठ रानियाँ, अस्सी पुत्र एवं एक पुत्री थीं ! वस्तुतः वे किसी में लिप्त नहीं थे...अनासक्त; आंतरिक स्तर पर सबसे छूटे हुए 'गृहस्थ योगेश्वर' ..! इसीलिए गीता 'भोगने' की नहीं, 'अभोगने' की बात करती है। योगात्मक भोग की बात करती है। ब्रह्म की अवस्था में विचरण करते हुए सारे सांसारिक कर्म करने की प्रेरणा देती है।

(8). धृतराष्ट्र

युद्ध शुरु होने से पूर्व महर्षि व्यास धृतराष्ट्र के पास आए। उन्होंने कहा - यदि सर्व विनाश को रोकना चाहते हो तो पाण्डवों को उनका अधिकार दे दो। धृतराष्ट्र ने कहा कि वह दुर्योधन को नहीं समझा सकता है। तो महर्षि बोले कि इस

महाविनाश के लिए तुम उत्तरदायी रहोगे...इतिहास तुम्हें माफ नहीं करेगा। धृतराष्ट्र ने लाचारी दिखाई - मैं क्या करूँ ! मेरी नियति ही ऐसी है ! महर्षि नहीं, नियति नहीं, यह तुम्हारी दुर्बलता है जो अन्य लक्ष लक्ष लोगों के साथ खुद के वंश का भी नाश करा देगी। कुरुराज कुछ नहीं बोले। महर्षि- तो ठीक है...इस विनाश को देखने के लिए मैं तुम्हें दिव्य दृष्टि देता हूँ। अब धृतराष्ट्र बोला - नहीं....ऐसा मत कीजिए...मैं अपने ही कुल के वीरों को मरते हुए देखना नहीं चाहता...मुझे दिव्य दृष्टि मत दीजिए।

यह कथा स्पष्ट करती है कि विनाश काले विपरीत बुद्धि ! जब काल मण्डराने लगता है वहाँ मनुष्य की सात्विक सोच मर जाती है। धृतराष्ट्र ने दुर्योधन के बहाने सबसे पहले तो भीष्म पितामह की सलाह ठुकराई....फिर ब्रह्म स्वरूप श्रीकृष्ण के शांति प्रस्ताव को अस्वीकार किया और अंत में त्रिकालदर्शी महर्षि वेद व्यास के आदेशात्मक निर्देश को भी नहीं माना। वह जानता था कि श्रीकृष्ण के कारण पाण्डव ही जीतेंगे...उनकी जीत का मतलब कौरवों का सर्वनाश है...तो भी युद्ध रोकने के लिए अपने अधिकार का प्रयोग नहीं करता है। पाप या अन्याय जब इतना हठी हो जाता है तब उसे नष्ट करने के लिए ईश्वर को अवतार लेना ही पड़ता है। ....तो ! विनाशकालीन विपरीत बुद्धि भी मनुष्य को सतकर्म की राह पर चलने नहीं देती है।..

त्रेता युग में रावण के साथ भी ऐसा ही हुआ था। वह तो महापंण्डित था, प्रकाण्ड ज्योतिषी था...अनन्य तपस्वी था; फिर भी सर्वनाश को समुद्र पार से बुला ही लिया। वहाँ तो राज्य के बँटवारे की बात भी नहीं थी...केवल एक स्त्री (सीता) को लौटाना था। विश्व इतिहास में एक और ऐसा बड़ा युद्ध एक स्त्री के कारण ही हुआ -'हेलन' को लेकर एथेंस एवं स्पार्टा के मध्य यह विनाशकारी लड़ाई हुई थी जो 'बैटल ऑफट्राय' के नाम से प्रसिद्ध है। राजस्थान में चित्तौड़ की रानी पद्मनी को प्राप्त करने के लिए दिल्ली सल्तनत के सुल्तान अलाउद्दीन ने चित्तौड़ पर आक्रमण किया था । उस दौरान सात सौ स्त्रियों ने जौहर की आग में स्वयं को भस्म किया। अहंकार और लोभ कितना विनाश करते हैं ! अत: इनका संग छोड़ दो।

(9). संदेह मत करना

यह बात श्री रामकृष्ण परमहंस से संबद्ध है। एक बार वे अपने खास शिष्यों के बीच बैठे हुए थे। अनायास ही वे बोले - आज मैं 'वह' हो गया हूँ... अब सन्देह मत करना...राम जो त्रेता में थे और कृष्ण जो द्वापर में हुए, मैं भी वही हो गया

हूँ...मुझ में वही आत्मा है...यदि पाना है तो मुझे देखो। मतलब यह कि जीव भाव से मुक्त होते ही आत्मा वैसी ही हो जाती है जैसी इन अवतार पुरुषों में थी। इतनी बड़ी बात उन्होंने हर किसी के सामने नहीं कही, बल्कि श्रद्धालु भक्तों के समक्ष ही स्वीकारी। गीता में नौवें अध्याय के 29वें श्लोक में श्रीकृष्ण कहते हैं कि मैं अपने भक्त से अलग नहीं हूँ और वह मुझ से पृथक नहीं है। ऐसा होता है तभी उसे वे अपने दिव्य रूप के दर्शन कराते हैं। इसी तरह महात्मा गण भी योग्य साधक को ही अपने सत्य से अवगत कराते हैं। रामकृष्ण देव ने भी ऐसा ही किया। जिस पर गुरु की ऐसी कृपा होती है वही सतकर्म कर पाता है। शास्त्र कहते हैं कि भगवान से मिलना हो तो उनके भक्त की सेवा करो...फिर भी लोग भ्रमित हो जाते हैं। भक्त को मनुष्य जैसे ही खात-पीते, उठते-बैठते, बीमार होते देख कर वे संशय में पड़ जाते हैं। मन का संशय ही उन्हें प्रभु कृपा से दूर कर देता है।

यहाँ सवाल है कि आज के व्यावसायिक दौर में रामकृष्ण देव जैसे संत को कहाँ तलाश करें? जवाब है कि शास्त्र को ही उनका शब्द रूप मान कर उससे शिक्षा ले सकते हैं। ऐसा करने से जब संस्कार सघन हो जाएंगे तब कोई सदगुरु तुम्हें किसी न किसी बहाने बुला लेगा। फिर वह तुम से प्रभु में प्रवेश दिलाने वाले कर्म करा लेगा। बस, उसकी बात में संदेह मत करना।

(10). गद्दी को ही शाप दे दिया

एक संत थे रज्जब...बहुत प्रसिद्ध थे। किसी दिन कहीं भोजन के लिए जा रहे थे। साथ में कई चेले चाटी थे। राह में कोई गरीब ब्राह्मण मिला जो भूखा था...रोटी मांग रहा था। रज्जब बोले कि तुम हमारे साथ चलो और भोजन कर लेना। कुछ शिष्यों को यह बुरा लगा कि एक भिखारी जैसा आदमी हमारे साथ भोजन करेगा। ऐसी बात कहने वाले वे शिष्य थे जो खुद को ऊँचा मानते थे और धन के लोभी थे...उनकी नजर गद्दी पर थी...रज्जब साहब के पास पर्याप्त धन आता था जिससे वे साधु संतों की सेवा करते थे। ऐसे शिष्यों के विषय में वे जानते भी थे किंतु चुप रहते थे। वे शिष्य ही कानाफूसी करने लगे कि इस भिखारी से गुरुजी बातें तो ऐसे कर रहे हैं जैसे इसी को गद्दी दे देंगे !

खैर, भोजन कर के सब आश्रम आ गए। दूसरे दिन रज्जब ने सबके सामने उसी ब्राह्मण को अपना वारिस घोषित किया। लोभी मुरीदों में हलचल मच गई किंतु बोलते क्या ! महाराज की मर्जी !....इसके बाद वे बोले- मैं इस गद्दी को शाप

देता हूँ कि इस पर बैठने वाला दरिद्र ही रहेगा। दूसरे ही दिन लोभी शिष्य आश्रम छोड़कर चले गए। आप सोचेंगे कि उन्होंने ऐसा क्यों किया !...शिष्यों के मन से धन के प्रति आसक्ति मिटा देने के उद्देश्य से ही ऐसा किया गया था। तो अपने प्रिय साधकों को सतकर्म की राह पर चलाने के लिए महात्मा लोग कभी-कभी ऐसा काम भी कर देते हैं।

(11). कोरू का खजाना

लोक समाज में आज भी 'कोरू का खजाना' एक कहावत है। यह कारू एक मुस्लिम देश का राजा था। उसके पास अथाह दौलत थी। वह उस धन को प्रजा की अमानत के तौर पर खर्च करता था...स्वयं सपरिवार सादा जीवन व्यतीत करता था। लेकिन उसका पुत्र विपरीत आचरण वाला निकला...वह धन का लोभी एवं विलासिता का शौकीन था। कोरू नहीं चाहता था कि यह खजाना उसके पुत्र को स्वेच्छाचारी बना दे। अत: मरने से पहले उसने उक्त खजाना गुप्त स्थान में गड़वा दिया जो आज तक किसी को भी नहीं मिला है। उसके पुत्र का जीवन इस खजाने को ढूंढने में ही बीत गया। वस्तुत: धन से विलासिता और अहंकार आता है। ये दोनों ही मनुष्य का पतन करते हैं।

(12). ज्ञानी भक्त

गीता में सातवें अध्याय के 17-18 वें श्लोक में भगवान कहते हैं कि ज्ञानी भक्त मुझे सर्वाधिक प्रिय है । वह तो मानो मेरा ही रूप है। इससे पहले कई बार कहा है कि निश्चयात्मक बुद्धि से किया गया सतकर्म मनुष्य को परम सत्य में प्रवेश कराता है और तब ईश्वर की प्रत्यक्ष अनुभूति होती है। यह प्रत्यक्ष अनुभूति ही ज्ञान है। जब साधक को ऐसे अनादि अनंत ब्रह्म की अनुभूति हो जाती है तो उसका सारा अहंकार नष्ट हो जाता है...वह जान लेता है कि उस विराट की तुलना में तो वह परमाणु जितना भी नहीं है। तब वह सही अर्थ में भक्त बनता है ...उसमें परमात्मा के प्रति भक्ति विकसित होती है...निश्चल भक्ति...अडिग समर्पण। ...एक कहानी है- किसी गाँव में एक ठाकुर रहता था। धनवान, ताकतवर एवं बड़े मकान का मालिक था। अपने आगे किसी को कुछ नहीं समझता था। संयोगवश उसे अमेरिका देश के न्यूयार्क शहर जाने का अवसर मिला। वहाँ जाते ही उसका अहंकार चकनाचूर हो गया ...इतने बड़े-बड़े मकान ! इतनी सारी चमाचम गाड़ियाँ ! लोगों के पास इतना धन !

...फिर एक टैक्सी वाले से किराये के मामले में उलझ गया- बोला कि मैं भारत के अमुक गाँव का ठाकुर हूँ... टैक्सीवाले ने उसकी धुनाई कर दी... पैसे पूरे वसूले और धक्का दे कर भगा दिया। वहाँ उसकी कोई हैसियत नहीं थी। गाँव आ कर वह बिल्कुल बदल गया...एक सामान्य आदमी की तरह रहने लगा। इसी भाँति प्रभु की प्रत्यक्ष अनुभूति कर लेने वाले मनुष्य का भी धन, पद, ताकत, हैसियत आदि का घमण्ड मिट जाता है। मैं छूट जाता है। वह चारों तरफ परम चेतना के दर्शन करता है। इसीलिए ज्ञानी भक्त श्रीकृष्ण को अधिक प्रिय हैं। अष्टावक्र, जनक... इनसे भी पहले ब्रह्मर्षि वशिष्ठ, विश्वामित्र, अगस्त्य, गौतम, अत्रि, भारद्वाज आदि ज्ञानी भक्त थे। आप सोच लें कि आप ज्ञानी हैं, आप सर्वत्र ब्रह्म को ही देखते हैं...किंतु केवल ऐसा सोच लेने से कुछ नहीं होगा। सोचने में मनुष्य को जोर नहीं लगाना पड़ता है लेकिन करने में या अर्जित करने में खून पसीना एक करना होता है। आप देखते हैं कि बड़े लोगों को विश्वविद्यालय अक्सर डॉक्टरेट की मानद डिग्री देते है लेकिन ऐसी डिग्री से उनमें उक्त फेकल्टी का ज्ञान नहीं आता है। ऐसे ही केवल मैं ब्रह्म हूँ, ऐसा सोच लेने मात्र से मनुष्य वैसा हो नहीं जाता है। लोहे के चने चबाने जैसा कठिन मार्ग है यह ! लेकिन यदि एक बार अनुभूति हो गई तो फिर सब कुछ हथेली पर रखे हुए आमले जैसा प्रत्यक्ष हो जाता है। ऐसे ज्ञानी के लिए आंतरिक प्रलय जैसी अवस्था आ जाती है। आंतरिक प्रलय का मतलब है कि बाहर तो संसार है, भोग विषय हैं, रिश्ते नाते भी हैं लेकिन भीतर मन में अब कुछ नहीं है...वह इन सब को देखता है, इनके साथ रहता है किंतु प्रभावित नहीं होता...इनमें लिप्त नहीं होता। फिर उसमें और श्रीकृष्ण में कोई भेद नहीं रहता है। तभी भगवान कहते हैं कि ज्ञानी और मैं' एक ही हैं।

(13). कर्म बंधन से मुक्ति कैसे !

भगवान कहते हैं कि मुझे कर्म नहीं बांधते, मैं उनमें लिप्त नहीं होता, कर्म के फल में मेरी कोई स्पृहा नहीं रहती है। पहले भी ऐसे महात्मा हुए हैं जो कर्म से निर्लिप्त रहते थे एवं कर्म-फल में उनकी तनिक भी स्पृहा नहीं होती थी। अब इसका मतलब समझते हैं। क्या हम ऐसी अवस्था प्राप्त नहीं कर सकते? कर सकते हैं। देखिए, जब तक किसी भी प्रकार की इच्छा शेष है तब तक बंधन है, तब तक लिप्तता है...इच्छा ही कर्म में लिप्त करती है। इसे सकाम कर्म कहते हैं...तो जब तक सकाम कर्म हैं तब तक निर्लिप्तता नहीं आती...सकाम कर्म ही बंधन के कारण हैं...यह बंधन ही बार-

बार पुनर्जन्म कराता है। तो इच्छा कैसे छूटे ? जब कर्म फल शेष नहीं रहे। मनुष्य के कर्म का सर्वोच्च परिणाम है परमात्मा की प्राप्ति। जब तक हम प्रभु से एकाकार नहीं हो जाते तब तक निर्लिप्तता असम्भव है क्योंकि कम से कम ईश्वर को प्राप्त करने की इच्छा तो बाकी रहेगी ही। आपके पास दुनिया की अपार दौलत आ गई , सुन्दर पुत्र-पुत्रि हो गए...उनके भी सारे काम हो गए...संत समागम भी खूब हो गया...अब कौन सी इच्छा शेष रही ? केवल यह कि प्रभु के दर्शन हो जाएं ! यह भी हो गया...अब ! अब कुछ नहीं....कोई इच्छा बाकी नहीं। प्रभु-दया के फलस्वरूप आप अब निर्लिप्त हो गए ।

भगवान मिल गए तो फिर और क्या चाहिए ! कुछ नहीं....अब जो भी कर्म होंगे वे निर्लिप्त भाव से ही होंगे। अब किसी फल की भी इच्छा नहीं...क्योंकि मनुष्य जीवन का अंतिम फल तो मिल गया ! आपने अपने जीवन की पूर्णता अर्जित करली...पूर्ण काम हो गए। आप भी श्रीकृष्ण जैसे हो गए...निर्लिप्त ओर अनासक्त !

तो बात यह कि जब तक हम पूर्णकाम वाली अवस्था तक नहीं पहुँचते...वीतराग नहीं हो जाते...योग की उच्चतम अवस्था में नहीं पहुँच जाते तब तक कर्म संस्कारों से मुक्ति मिलना सम्भव नहीं। कितना भी भजन कर लें, जाप कर लें, तीर्थयात्राएं कर लें, प्रायाणाम-धारणा-ध्यान कर लें, कामनाएं पीछा नहीं छोड़ेगी। इसके लिए परमात्म दर्शन वाली पूर्णता तक पहुँचना ही होगा। ब्रह्मर्षि वशिष्ठ से ले कर रामकृष्ण परमहंस तक सभी महात्माओं ने ऐसा ही किया था।

तो कामनाओं से पीछा छुड़ाने के लिए क्या करें ? केवल मन को अनुशाषित करें। हाँ, है तो बहुत कठिन ! यदि किसी संत की कृपा मिल जाए तो यही बहुत सरल हो जाता है। गौतम बुद्ध ने अंगलिमाल पर नजर डाली...और इतने से ही उसका मन बदल गया...साधु प्रवृत्ति का हो गया। यह उनके तेज यानी आत्मा के प्रकाश का असर था। महात्मा गण जिस किसी के 'आत्म भाव' में प्रवेश कर जाते हैं उसके विकार तत्काल कट जाते हैं। अजामिल को नारायण गुरु मिले...उसे हरिद्वार ले गए...वहाँ भजन करने के लिए बैठा दिया...ऐसे हुआ उसका कल्याण। रामबोला को स्वामी तुलसी मिल गए..और उस कामी युवक को उन्होंने गोस्वामी तुलसीदास बना दिया। ऐसे ही रत्नाकर (वाल्मीकि का जन्मजात नाम) को देवर्षि नारद मिले और उसे महर्षि वाल्मीकि बना दिया। सूरदास को श्रीवल्लभाचार्य मिले ...उनका उद्धार कर दिया। अतः महात्मा की कृपा से संचित संस्कार कट जाते हैं एवं पूर्णता

की राह पर गति बढ़ जाती है।

आपको दिल्ली से बैंगलूरु जाना है...ट्रेन से 36 घण्टे लगेंगे...कोई सेठ आपको वायुयान से ले गया...तो तीन घण्टे में ही पहुँच गए। तेंतीस घण्टे बच गए...संत की कृपा भी ऐसा ही करती है...तेंतीस जन्म की देरी बचा देती है।

(14). श्रेष्ठ पुरुष, श्रेष्ठ कर्म !

यह जरूरी है। श्रेष्ठ मनुष्य का मतलब है वे लोग जिन्हें आत्मस्वरूप सिद्ध हो चुका है। वे अब हमारी तरह देह भाव में नहीं , आत्म बोध में स्थित रह कर कर्म करते हैं...निर्लिप्त कर्म....लोक कल्याण के कर्म...क्योंकि उन्हें तो अब किसी फल की इच्छा है ही नहीं...कर्मों का अंतिम फल परमात्म दर्शन उन्हें मिल चुका है। ..ऐसे पुरुषों को श्रेष्ठ जन कहा गया है। आत्म साक्षात्कार के बाद जब तक ये जीवित रहते हैं कर्म तो इन्हें भी करने पड़ते हैं। किंतु ये सब श्रेष्ठ कर्म करते हैं...सामान्य जन इनका अनुकरण करते हैं इसलिए इनका आचरण उच्च कोटि का ही रहना चाहिए। एक थे विदेहराज जनक । पूरा नाम सीरध्वज जनक था। वे योगीराज कहे जाते थे। राजा होते हुए भी जो ऋषि की तरह रहे उसे राजर्षि कहते हैं...और जो योगी की जैसे जीवन बिताए वह राजा योगीराज कहलाता है। जनक ऐसे ही थे। राजसभा में वे मूल्यवान सिंहासन पर बैठते थे लेकिन महल के एक सामान्य कक्ष में चटाई पर सोते थे। सामान्य बर्तनों में एकदम सात्त्विक भोजन करते थे। यह है मुक्त पुरुष की 'रहनी'...रहने की शैली।

श्रीकृष्ण कहते हैं कि - मुझे त्रिलोक के सारे ऐश्वर्य प्राप्त हैं फिर भी मैं कर्म करता हूँ...और श्रेष्ठ कर्म करता हूँ। यदि मैं ही ऐसा न करूँ तो मैं समाज की प्रजा का दोषी हो जाऊँगा। वे अर्जुन को भी समझाते हैं कि तू क्षत्रिय है, राजकुल में उत्पन्न है, योगी जैसा संयमी है और मेरा (अवतार पुरुष का) सखा है...अतः धर्म युद्ध से विमुख होकर कायरता जैसा आचरण मत कर...तुझे यह शोभा नहीं देता। तेरा उदाहरण देते हुए आने वाले समय में यदि क्षत्रिय जन धर्म युद्ध से इसी तरह भागेंगे तो सत्य एवं न्याय की रक्षा कौन करेगा? इसलिए, उठ ! क्षत्रियोचित कर्म (युद्ध) कर।

कुछ साल पहले की बात है। वृंदावन में मधुसूदन गोस्वामी नाम के संत थे। कंजर जाति की एक महिला भी उन्हें बहुत मानती थी। किंतु अपने बेटे के साथ चोरी

जैसे बुरे काम में लगी हुई थी। एक बार बेटा पकड़ा गया। उस पर हत्या का आरोप भी था। आगरा में सत्र न्यायालय में मुकदमा चल रहा था। लगभग तय था कि उसे फाँसी की सजा होगी। उसकी माँ संत मधुसूदन जी की शरण में आई...चरणों में सिर रख कर प्रार्थना करी कि बेटे को बचा लो। उस न्यायालय का न्यायाधीश महात्मा ही का शिष्य था। महिला ने वादा किया कि अब माँ-बेटे चोरी डकैती कभी नहीं करेंगे। महात्मा जी बोले कि मैं मजिस्ट्रेट को तो तुम्हारे पुत्र के लिए सिफारिश नहीं करूंगा लेकिन एक उपाय बताता हूँ...यह करने से वह छूट जाएगा। उन्होंने उसे दो लाख जाप करने के लिए कही। परिणाम स्वरूप उसका पुत्र जेल से छूट गया। इस प्रसंग में गौर करने की बात यह है कि महात्मा जी ने बुरा काम करने वाले की सिफारिश नहीं की....उसकी मुक्ति का उपाय बता दिया। उस उपाय से सिद्ध कर दिया कि प्रभु के नाम में भी कितनी शक्ति होती है !

भगवान यह भी कहते हैं कि मुक्त पुरुषों का धर्म है कि वे भटके हुए या भ्रमित लोगों को कर्तव्य कर्म के लिए प्रेरित करें...उन्हें कल्याणकारी राह पर चलाएँ। ऋषि मुनियों द्वारा रचित शास्त्र भी ऐसा ही करते हैं। आज जो लोग उच्च पदों पर अवस्थित हैं उन्हें जन कल्याण में प्रशासानिक शक्ति का उपयोग करना चाहिए।

(15). मूर्ति प्राण प्रतिष्ठा

गीता में सगुण भक्ति का भी प्रावधान है। इसमें मूर्तिपूजा भी होती है। कुछ लोग तो मानस में भगवान के साकार रूप पर ध्यान केंद्रित करते हैं। ऐसे ही अन्य मनुष्य प्रभु की मूर्ति की पूजा करते हैं। इसलिए मंदिर में जब मूर्ति स्थापित की जाती है तब उसमें प्राण प्रतिष्ठा करावाने का प्रावधान है। समझना यह है कि प्राण प्रतिष्ठा क्या होती है ?

जैसे हम प्राण ऊर्जा के बिना कुछ नहीं कर सकते वैसे ही पत्थर की मूर्ति भी चेतन शक्ति के बगैर पूजनीय नहीं होती है। कभी कभी हम देखते या सुनते हैं कि अमुक महिला के मरा हुआ बच्चा पैदा हुआ...यह कैसे हुआ ! वस्तुत: गर्भस्थ शिशु में जीव नहीं आया...इसके कारण उसमें प्राण ऊर्जा का संचार नहीं हुआ... फलस्वरूप मरा हुआ बच्चा पैदा हुआ। ऐसे ही पत्थर की जड़ मूर्ति में चेतना प्रवाहित करनी पड़ती है। ...देखिए ! बच्चे में जीवन का प्रवाह तो कुदरत का कार्य है लेकिन

मूर्ति में चेतना का प्रवाह मंत्रों का कमाल है। कोई मंत्रवेत्ता (जानकार) ब्राह्मण प्राण प्रतिष्ठा अनुष्ठान के द्वारा ऐसा करता है। मंत्रों का उच्चारण हर किसी को नहीं आता...यह कामिल गुरु से सीखना होता है। मंत्र किस तरह और प्रति मिनट कितनी बार बोला जाए.....यही मंत्रोच्चारण का नियम है। अलग-अलग मंत्र की प्रति मिनट आवृत्तियाँ पृथक होती हैं। फिर किस मंत्र की कुल कितनी आवृत्तियाँ कार्य सिद्धि करती हैं....यह भी ज्ञात होना जरूरी है।

तो अनुष्ठान पूर्वक मंत्रोच्चारण से 'आचार्य' पत्थर की प्रतिमा में ब्रह्माण्ड व्यापी चेतना के प्रवाह का क्रम चालू कर देता है। इसके परिणाम स्वरूप चारों ओर व्याप्त रहने वाली चेतन तरंगें उस मूर्ति के माध्यम से मंदिर में फैलती रहती हैं। इसे यों समझो- तुम्हारे मोबाइल की चिप जब तक एक्टिवेट नहीं होती तब तक बेकार पड़ी रहती है...लेकिन एक्टीवेट होते ही विद्युत चुम्बकीय तरंगों के आकाश व्यापी जाल से जुड़ कर काम करने लगती है। ऐसे ही प्राण प्रतिष्ठित मूर्ति 'जागृत' हो जाती है एवं उसके पास जाने वाले लोगों को शांति दायक तरंगें महसूस होने लगती हैं। वहाँ किसी किसी को मूर्ति के आकार में चेतन तरंगों के अणु संघनित दिखने लगते हैं....ये प्रकाश मय होते हैं। भक्त इसी को साक्षात दर्शन मान कर पुलकित हो जाता है। यह ध्यान जरूर रखना पड़ता है कि मूर्ति ऐसी तरंगों के सुचालक पत्थर या धातु अथवा धातुओं से ही बनी हुई होनी चाहिए।

शास्त्र कहते हैं कि महात्मा गण अपने मन को साधना विशेष के माध्यम से सर्व व्यापी चेतन तरंगों के साथ जोड़ लेते हैं...ऐसे ही उक्त प्रतिमा भी भक्त को 'ऐसी' चेतन शक्ति से जोड़ देती है। ऐसे स्थानों पर निरंतर जाप-संकीर्तन होते रहने से ये तरंगें लम्बे समय तक कायम रहती हैं।

याद रखें कि कोई भी मूर्ति सर्वकाल के लिए जागृत नहीं की जा सकती हैं..उनका आध्यात्मिक पोषण जरूरी है। आप देखते ही हैं कि जल की पाइप लाइन गल जाती है...विद्युत के तार फ्यूज हो जाते हैं...इण्टरनेट भी कई बार बाधित हो जाता है...ऐसे ही पूजा स्थलों के ये आध्यात्मिक माध्यम भी फ्यूज हो जाते हैं । इसलिए वहाँ आरती-पूजा का नियमित विधान रखा जाता है। मूर्ति से ही चरणामृत की बात जुड़ी हुई है। ऐसी प्राण प्रतिष्ठित प्रतिमा चेतन ऊर्जा का भण्डार होती है। उस पर जब जल डाला जाता है तो वह ऊर्जावान हो जाता है। फिर उसमें तुलसी दल डालते हैं...इससे उक्त जल की तासीर और बढ़ जाती है। इसी को हम चरणामृत कह

देते हैं। यह गुणकारी होता है, चमत्कारी नहीं। हम लोग पानी या गुलाबजल, चंदन अष्ट धातु या काले पत्थर अथवा संगमरमर एवं तुलसी की आपस में रासायनिक प्रतिक्रिया नहीं जानते...ऐसा जल विलक्षण औषधि बन जाता है जिससे कई तरह के रोग ठीक हो जाते हैं अथवा उनसे बहुत आराम मिलता है। इसी को प्रभु कृपा मान लेने से हम में भक्ति भाव बढ जाता है। तुलसी का एक पौधा एक वर्ग किलोमीटर क्षेत्र की हवा शुद्ध करता है। सोने-चांदी की भस्म का औषधीय उपयोग तो विख्यात है...तांबे का जल पेट के लिए और काँसा का पानी आँखों के लिए लाभकारी होता है। श्यामा तुलसी कैंसर में फायदा करती है। इस तरह' भगवान की प्रतिमा को धोया हुआ जल औषधीय दृष्टि से प्रभावशाली होता है।

मूर्ति वाले प्रसंग पर थोड़ा और विचार करें- हमारा भू मण्डल (पुराण में वर्णित चौदह लोक) वास्तव में तो कम्पायमान प्रकाश, स्पंदन शील नाद एवं जैव द्रव्य (चेतन तत्व) का महासमुद्र है। पृथ्वी सहित नौ ग्रहों पर सूर्य का प्रकाश ही जाता है। सूर्य से यह प्रकाश एक गुंजन, नाद, के साथ निकलता है। नासा के वैज्ञानिकों ने उस गुंजार को 'ओ३म्' की गूंज जैसा माना। हम यदि महसूस कर सकें तो आकाश में नाद, हवा में नाद, पानी के बहाव में नाद, आधी रात के सन्नाटे में नाद, देह में संचरित रक्त में नाद और गहन ध्यानावस्था में गूंजने वाला अनहद नाद ! सर्वत्र नादब्रह्म की व्याप्ति ! नाद नहीं तो वाणी नहीं...वाणी नहीं तो मंत्र नहीं...मंत्र नहीं तो मूर्ति में प्राण प्रतिष्ठा नहीं। वस्तुतः मंत्रोच्चारण से निकलने वाली नाद ऊर्जा की टक्कर मूर्ति की जड़ता को 'स्थगित' कर देती है। धरती के साथ उसका गुरुत्व बल (महान गणितज्ञ आइंस्टीन ने इसे जड़ता कहा) टूट जाता है अर्थात् वह त्रिगुणात्मक प्रकृति के प्रभाव से मुक्त हो जाती है। उसमें नाद की चेतन ऊर्जा भर जाती है। अब वह जड़ नहीं, चेतन है। मनुष्य भी जब त्रिगुणात्मक प्रकृति के प्रभाव से मुक्त हो जाता है तब वह समाधि में स्थिर होता है ...चेतनमय आत्म स्वरूप में ठहर जाता है। इसी को ईश्वर के साथ तादातम्य कहते हैं।

जब कोई मनुष्य भाव भक्ति करते-करते भौतिक देह से ऊपर उठ जाता है एवं भावदेह में स्थिर हो जाता है तब मूर्ति गत ऊर्जा से तादात्म्य हो जाने के कारण उसे लगता है कि- मूर्ति में कंपन हो रहा है....वह उससे बात कर रही है...वह प्रसाद खा रही है...मूर्ति में से भगवान निकल कर उसमें समा गए हैं...आदि आदि। ये सब सगुण भक्ति के व्यक्तिगत सच हैं।

(16). साधक का ज्ञान और विज्ञान

लोग प्रायः जानकारी को ही ज्ञान कहने की भूल करते रहते हैं। भगवान कृष्ण की जीवनी पढ़ ली और बन गए ज्ञानी!...पढ़ी हुई बातें व सुनी हुई बातें मात्र जानकारी की श्रेणी में आती हैं...उसे ज्ञान नहीं कह सकते हैं। अनुभूत सत्य ही ज्ञान होता है। आपने श्रीकृष्ण के विषय में खूब सारी बातें सुन कर जान लिया कि वे कैसे थे...उनके रंग रूप, पहनावे, पुत्र-पुत्रियों के बारे में जान लिया। दूसरी तरफएक साधक को उनके दर्शन हुए.....जो कुछ आपने पढ़ कर जाना वह उसने दर्शन करके अनुभूत किया, उसे साक्षात देखा। यह ज्ञान है। अब आपको कृष्ण के विषय में पढ़ने की जरूरत नहीं। आपने पुस्तकों में पढ़ा कि भारत के प्रधानमंत्री पद की गरिमा व शक्तियां कैसी होती हैं! ...किंतु जब कोई प्रधानमंत्री बन जाता है तो उसे अपने आप ही यह सब ज्ञात हो जाता है। किताब में तो संत महात्माओं या प्रधानमंत्री पद की अनेक बातें लिखी हुई नहीं होती हैं...लेकिन जब स्वयं वही हो जाते हैं तब वे ज्ञात हो जाती हैं। इसीलिए जो ज्ञात हो गया उसे ज्ञान कहा गया है।

अब विज्ञान ! ईश्वर के केवल दर्शन हो जाना ही पर्याप्त नहीं है....उसके ऐश्वर्य की अनुभूति भी होनी चाहिए- वह सारी दुनिया में कैसे उपस्थित रहते हैं. भक्तों के हृदय में कैसे प्रवेश करते हैं....दुनिया का निर्माण कैसे करते हैं....वे सर्वव्यापी व सर्व ज्ञाता कैसे हो जाते हैं....आदि आदि। यह सब ज्ञात कर लेना ही विज्ञान है। आपने पानी पी लिया तो पानी का ज्ञान हो गया...और जब प्रयोगशाला में पानी बना भी लिया तो वह विज्ञान हो गया। ईश्वर के दर्शन ज्ञान है तथा उसके ऐश्वर्य का ज्ञान, विज्ञान है। योगी या सदगुरु में ज्ञान-विज्ञान, दोनों होते हैं। .....ईश्वर से ही सब निर्माण हुआ है, सारा ज्ञान आया है, सारी शक्तियां भी वहीं से निकली हैं और सारा ध्वंस भी उसी की काल शक्ति में होता है, इसलिए वहः ऐश्वर्यवान' कहा जाता है। ईश्वर ही योगी अथवा महात्मा में यह ऐश्वर्य 'प्रवाहित' कर देता है। फलस्वरूप वह भी वैसा हो जाता है।

(17). बंधन और मोक्ष का कारण मन !

एक छोटी सी उक्ति है-मन के हारे हार है, मन के जीते जीत। हार का मतलब बंधन ...जीत का अर्थ मोक्ष। मोक्ष एक व्यापक अवधारणा है जिसका आरम्भ है , वासनाओं से छुटकारा और अंत है, जन्म-मरण के चक्र से मुक्ति। दोनों बिंदुओं के

बीच का रास्ता भी काफी लम्बा है। इस में कर्ता भाव, भोक्ता भाव, समस्त विकारों आदि का सफाया; चित्त-मन-बुद्धि-अहंकार की शुद्धि आदि और अंत में स्वयं के 'मैं' से भी मुक्ति। यदि मन को जीत लें तो यह कठिन रास्ता भी तय हो सकता है। मन इतना बदमाश है कि बीच मार्ग में भी धोखा दे सकता है...आरम्भ में लगे कि मन काबू में है...फिर अचानक ही लुढ़का दे, जैसे विश्वामित्र को मेनका के बहाने विचलित कर दिया।

मन से हारने का अर्थ है अनुशासन के बिना जीवन बिताना...बेलगाम हो कर जीवित रहना। इसका दुष्परिणाम !....रोग, दुःख, बदनामी, कानूनी फंदे, मनोरोग आदि। मन की हार आपको मनुष्यता से नीचे गिरा देगी। गीता के अनुसार अधो योनियों में पुनर्जन्म होगा...बार बार जन्म-मृत्यु के कष्ट भोगते रहोगे...और इस तरह स्वयं अपने ही शत्रु बन जाओगे। मन को फैलाते ही दुनिया फैल जाती है किंतु साधन नहीं फैलते या उस अनुपात में आय नहीं बढ़ती...तब आप आर्थिक अपराध करने लगते हैं। जैसे-जैसे मन फैलता जाता है वह बांधता जाता है...कामनाओं से, महत्वाकांक्षाओं से। ....अधूरी इच्छाएं ही जीवात्मा को पुनर्जन्म की तरफ धकेलती है.. जैसे, किसी कक्षा में फेल हो गया विद्यार्थी पास होने के लिए पुनः परीक्षा देता है। जरा सोचिए- दो सौ रुपये रोज कमाने वाले और दो लाख रुपये प्रतिदिन की आय वाले आदमी की दुनिया में कितना अंतर होगा ! यह अंतर दोने के मन के फैलाव के कारण है। एक अरबपति पाँच हजार कामनाओं से बंधा हुआ है और एक गरीब के मन पर मात्र 30-40 इच्छाएं लिपटी हुई हैं। ऐसा ही बंधन जन्म मरण के चक्र में फँसाए रखता है।

इसलिए मन को फैलाओ मत। बंधन से छूटने का आरम्भ यहीं से होता है। फैलना भूल जाएगा तो खड़े रहना सीख जाएगा...खड़े-खड़े स्थिर भी हो जाएगा। अब पुरानी कामनाएं झरती जाएंगी...नई पैदा ही नहीं हो रही है....इसी तरह किसी जन्म में मन छूट जाएगा...उसी के साथ आप भी मुक्त हो जाओगे। इच्छा नहीं तो कर्म नहीं...कर्म नहीं तो संस्कार नहीं...संस्कार नहीं तो जन्म भी नहीं। कभी आना भी हुआ तो सद्गुरु के रूप में कल्याण करने के लिए आओगे और कबीर की तरह 'ज्यों की त्यों धरि दीनि चदरिया' कहते हुए निकल जाओगे।

गीता में छठे अध्याय के 34 वें श्लोक में अर्जुन कहता है कि यह मन बहुत चंचल, बुरी तरह से मथ देने वाला, कठिन एवं बलवान है...इसे नियंत्रित करना कैसे

सम्भव है ?....तब श्रीकृष्ण कहते हैं कि हाँ ...मन ऐसा ही है लेकिन अभ्यास और वैराग्य से इसको अनुशासित किया जा सकता है। बाहर की तरफ दौड़ने वाले मन को बार-बार भीतर लाते रहो तथा लुभाने वाले भोगपरक पदार्थों को धीरे-धीरे भूलते जाओ। लम्बे समय तक ऐसा प्रयास करते रहने से मन काबू में आ ही जाएगा। फिर 36 वें श्लोक में समझाते हैं कि तुम इस काम को जितना कठिन मानते हो, उतना मुश्किल यह नहीं है। प्रयत्न करते रहोगे तो मन वश में हो जाएगा।... पहले भी अनेक महात्माओं ने ऐसा किया है। इससे भी आगे की बात एक अन्य अध्याय में स्पष्ट करते है- इस शरीर से बलवान इंद्रियां हैं, इंद्रियों से अधिक ताकतवर मन, मन से ज्यादा शक्तिशाली बुद्धि और बुद्धि से आत्मा अधिक क्षमतावान होती है। अतः तुम आत्म शक्ति से काम करो...मन को आत्मऊर्जा से काबू में करो। पूरी गीता में मन को नियंत्रित और बुद्धि को स्थिर करने पर ही जोर दिया गया है।

छठे अध्याय के 14वें श्लोक में कहा गया है कि बाहरी वस्तुओं के सम्पर्क में आने से ही मन में भोग वृत्ति जगती है...इसलिए मन को उन- उन वस्तुओं से हटा कर प्रभु की मूरत पर या साँस पर अथवा ध्यान में लगाते रहें। फिर इसी बात को 26वें श्लोक में दोहराते हैं कि जिस-जिस माध्यम से मन बाहर की तरफ दौड़ता है उन्हीं माध्यमों से उसे प्रभु की ओर खींचिए-आँख के जरिए बाहर की भोग वस्तु को देख कर ललचाता है तो आँख को ईश्वर के चित्र अथवा मूर्ति पर टिका दीजिए। मन को जीतने के लिए ऐसा अभ्यास तो करना ही होगा।

यदि ऐसा आप से नहीं हो सकता है तो फिर एक काम करें- मन की पुकार पर उस से बच कर निकलना सीख लें...। मन में तो लाखों कामनाएं होती हैं... कितनी से पीछा छुड़ाएंगे? इसलिए मन की ही परवाह करना छोड़ दें।... जो मिल गया खा-पी लिया, पहन-ओढ़ लिया। बुद्धि या कहें विवेक के भरोसे कर्तव्य - पालन करते रहें। बाकी अपने भगवान के भरोसे रहें। यदि यह भी नहीं होता है तो स्वयं को श्रीकृष्ण या गुरु के सहारे छोड़ दो...अपना मन उन्हें दे दो। महात्मा अष्टावक्र ने विदेहराज जनक को कहा था कि राजन् ! अपना मन मुझे दे दो। जनक ने ऐसा ही किया और उन्हें ब्रह्मज्ञान हो गया।

(18). तो बात अपने आप को जानने की ही है !

संत कबीर के एक पद की कुछ पंक्तियां हैं-

पानी बिच मीन पियासी, मनै सुण सुण आवै हांसी।

घर में वस्तु नजर नहीं आवै, वन वन फिरे उदासी।

आतम ज्ञान बिना सब सूना, क्या मथुरा क्या कासी। ....

यहाँ 'घर में वस्तु' का मतलब है, हृदयस्थ आत्मा....आत्मा ही परमात्मा। उसे वहां देखने का प्रयास नहीं करते....मंदिर, मस्जिद व तीर्थ स्थानों में खोजते फिरते हैं। ऐसे लोगों पर कबीर को हँसी आती है। ....हम लोग रोज बोलते हैं कि आत्मा सो परमात्मा...लेकिन बोल कर भूल जाते हैं। अपने भीतर देखने की फुर्सत ही नहीं है...जानते ही नहीं हैं कि भीतर कैसे देखें ? फिर बाहर इतनी खूबसूरत दुनिया है, तो उसकी उपेक्षा करते हुए भीतर कोई क्यों देखेगा ? क्या भीतर देखने से बच्चों का पेट भरने के लिए आटा दाल मिल जाएंगे ?...नहीं, उसके लिए तो आजीविका कमानी होगी। लेकिन जीवन मात्र यहीं तक तो सीमित नहीं है ? चलो जिनके लिए है उनके लिए है...किंतु जो इससे आगे देखना चाहते हें वे क्या करें ? वे ऐसा करें-

00 शास्त्रों का अध्ययन करके इस बात को समझें। ऐसे ग्रंथों में वर्णित अवतारों व महात्माओं की कथाएं आपमें परम चिंतन की जिज्ञासा उत्पन्न करेंगी....उनके जैसा बनाने वाली विधियों से अवगत कराएंगी। यदि आप भागवत पुराण या गीता के प्रति वैसी ही भाव भक्ति रखते हैं जैसी किसी महात्मा के लिए हमारे मन में होती है तो इन शास्त्रों के गूढ अर्थ तुम्हारे मानस में प्रत्यक्ष हो जाएंगे...ये ही तुम्हें अध्यात्म ही राह पर चलाते हुए प्रभु के दर्शन करा देंगे।

00 रोज पांच दस मिनट के लिए बिल्कुल चुप बैठने का अभ्यास करें। ऐसा लगेगा कि भीतर विचारों की आंधी चल रही है...उसकी परवाह नहीं करें। यदि चुप रहने का नियमित अभ्यास करते रहेंगे तो अंततः भीतर से भी मौन हो जाओगे। अंदर से चुप होते ही आपको शून्य की अनुभूति होगी....यह बाहर के ब्रह्माण्डीय शून्य का ही सूक्ष्म रूप है। इसी में आपको परम चेतना का प्रकाश दिखेगा...उस प्रकाश में एक गुंजार सुनाई देगी। यह शाश्वत नाद है जिसे 'ओ३म्' की गुंजार कहा जाता है। जब इस नाद में लीन हो जाओगे तो बाहर से मुक्त हो जाओगे।

00 किसी सदगुरु की शरण में जा कर यह प्रक्रिया सीखें। वह तुम पर शक्तिपात

करेगा। इसके असर से तुम सीधे ही आज्ञाचक्र वर टिक जाओगे...वहाँ प्रकाश दिखने लगेगा। यह प्रकाश कभी दिखेगा ओर कभी लुप्त हो जाएगा। तुम्हें अभ्यास द्वारा इसे स्थायी करना है। यही प्रकाश चिदाकाश की तरह फैल कर तुम्हें वहाँ 'परम' के दर्शन कराएगा।

00 मोटे तौर पर स्वयं को समझाएं- मैं देह नहीं हूँ...जब मै कहता हूँ कि यह मेरा शरीर है, तब स्पष्ट लगता है कि यह 'मेरा' कोई और है...देह नहीं। अब सोचें कि यह मेरा कौन है ? ...'जीव'...यही बोलता है। जीव निकलते ही मृत्यु ! तो जीव कहता है कि मेरी देह ! अब विचार करें कि जीव में बोलने की यह शक्ति कहाँ से आई ? ...आत्मा से ! तो मैं अनश्वर आत्मा हूँ । इस पर जीव भाव का आरोपण ही इसे जन्म जन्मांतरों में भटका रहा है । तो आत्मा को जीव एवं देह भाव से मुक्त करना ही खुद को देखना है।

यह आत्मा किसी रूप में दिखती तो होगी ? ..हाँ , दिखती है...ज्योति बिंदु के रूप में। कब दिखती है ? गहरे ध्यान में या समाधि में। भीतर कहाँ दिखती है? दोनों भौंह के मध्य ललाट पर...यहाँ आज्ञा चक्र या हृदय स्थल है। यहीं एक त्रिकोण के मध्य दिखती है। फिर ? ..फिर इस ज्योति बिंदु पर ही अपना ध्यान टिका दो.. करते रहो तो ऐसा हो जाएगा। उसके बाद ? ...यह ज्योति बिंदु फैलेगा...फैल कर ब्रह्माण्ड जितना हो जाएगा...तुमको वहाँ सब कुछ दिखने लगेगा...सब सुनाई देने लगेगा...अपनी ही देह से अनासक्त हो कर तुम सर्व समर्थ हो जाओगे। यही तुम्हारे 'मैं' का सत्य रूप है।

(19). दो तरह की देह-शास्त्रों में दो तरह की देहों का उल्लेख मिलता है

भगवत देह और प्राकृत देह। इनको क्रमशः भाव देह एवं स्थूल देह भी कहते हैं। अब पहले भाव देह का अर्थ समझते हैं। जिस शरीर से भाव भक्ति की जाती है, उसे भाव देह कहते हैं। सामान्यतः तो हमारी देह मायिक कही जाती है क्यों कि इसमें अनेक विकार भरे हैं। अतः पहले इस मयिक देह को शुद्ध करना होता है। यह गुरु कृपा प्राप्त करके नाम भक्ति करने से हो जाता है। इसके बाद जिस भाव से भगवान की भक्ति की जाती है उससे भाव देह मिलती है। इस तरह भक्ति के आश्रय को भाव देह कहते हैं। तो पहले नाम देह और फिर भाव देह।

ऐसे मनुष्य के सांसारिक काम तो स्थूल शरीर से होते रहते हैं, किंतु भक्ति

तो भाव देह से ही होती है। उसे यह भाव देह स्पष्ट दिखती है। ऐसे ही वह अपने इष्ट की भाव देह को भी साफतौर पर देखता रहता है। भक्ति में डूबे हुए भक्त को दिखता है कि वह अपने भगवान को भोजन करा रहा है। यह सच्चाई है, कल्पना नहीं। यह भाव भक्ति जब गुणात्मकता के अनुसार परिपक्व हो जाती है, तब भक्त का अपने इष्ट भगवान से एकाकार हो जाता है। उसकी स्थूल देह को देख कर कोई भी यह अनुमान नहीं लगा सकता कि यह मनुष्य भगवद भाव को प्राप्त कर चुका है। यह सत्य साधना के सभी मार्गों पर लागू होता है। ज्ञान योग में आत्म देह से साधना करनी होती है। कर्म योग में यह कार्य सिद्ध-देह से होता है। ऐसे ही भक्ति योग में भाव देह से साधना की जाती है। अत: समझ लीजिए कि स्थूल देह को शुद्ध किए बिना अध्यात्म क्षेत्र में सफल होना असम्भव है।

प्राकृत देह पाँच तरह की होती है-क. काम वासना के वशीभूत किये गए संभोग से उत्पन संतान- ख. शास्त्र विधि से सम्पन्न सहवास के परिणाम स्वरूप उत्पन्न संतान। ये दोनों ही मैथुनी संतान कही जाती हैं। इसके बाद- ग. किसी साधक द्वारा स्त्री के मस्तक, कान, कण्ठ, नाभी आदि के स्पर्श से पैदा हुई संतान और-घ. किसी सिद्ध के सामने से स्त्री के गुजरने मात्र से होने वाली संतान तथा-ड़. स्त्री कहीं भी हो; योगी के संकल्प मात्र से ही उत्पन्न हो जाने वाली संतान। ये तीनों अमैथुनी संतान श्रेष्ठ मानी गई हैं। मैथुनी में शास्त्र विधि वाली संतान अच्छी मानी जाती है। अमैथुनी संतानें संकल्प ऊर्जा का परिणाम होती हैं। ये महात्मा अपनी संकल्प शक्ति से स्त्री के अण्डाणु में 'जीव चेतना' प्रविष्ट करा देते हैं। परिणाम स्वरूप स्त्री गर्भवती हो जाती है। आज के युग में यह विधि अपवाद स्वरूप मानी जाती है। खैर, इस प्रकरण से हम केवल यह समझाना चाहते हैं कि चेतन ऊर्जा से सब कुछ सम्भव है। सूर्य विज्ञान के अनुसार सूर्य किरणों से जीवन तत्व एकत्र करके अमैथुनी शिशु का सृजन किया जा सकता है। शुक्राणु-अण्डाणु के सूक्ष्म तत्व तथा पुनर्जन्म के लिए आतुर सूक्ष्म जीव; ये सब प्रकृति में मौजूद रहते हैं। सिद्ध योगी इन्हें कार्य रूप में परिणत करने की शक्ति से सम्पन्न होते हैं । वाल्मीकि, वेदव्यास एवं विश्वामित्र ऐसी क्षमता से युक्त महात्मा थे।

प्राचीन काल में ऋषियों के आश्रमों में ऐसी संकल्प विधि से ही प्रजा (श्रेष्ठ संतान) का विस्तार होता था। महर्षियों को इसीलिए 'प्रजापति" कहा जाता था।

सांप का जहर उतारने वाला पौधा - एक थे मुल्तानी राम जी। अजमेर में

नोसर घाटी के पास पान का ठेला लगाते थे। उधर कलंदर निजामुल हक साहब भी अजमेर आते रहते थे। अन्दरकोट में कहीं ठहरते थे। वे मुलतानीराम का पान खाने जाते थे। एक दिन बोले - यह पौधा देख रहे हो ! इस की दो पत्तियां खा लेने से सांप का जहर उतर जाता है। अब हुआ यह कि दूसरे ही दिन मुलतानीराम को सांप ने काट लिया। पान का ठेला लगाते वक्त ऐसा हुआ। उन्होंने तत्काल उस पौधे की दो पत्तियां चबा लीं। फिर घर जा कर सो गए। उन्हें कुछ नहीं हुआ। दूसरे दिन दादा हुजूर के पास गए। वे बोले - कहो भाई ! पौधे की पत्तियां खा लीं ! वे उनके पैरों पर झुक गए। मुरीदी के लिए निवेदन किया। ये ही मुल्तानीराम जी आगे जा कर परमहंस बने।

सूफी श्री कालीचरण -ये रामपुर में थे। बाबा बादाम शाह के गुरु भाई थे। बात उस वक्त की है जब आप 99 वर्ष के थे। हुजूर हाफिज साहब उन की सेवा में रहते थे। एक बार बाबा साहेब भी वहां गए हुए थे। अन्य मुरीद भी थे। आप ने कालीचरण जी से आग्रह किया कि बच्चों को कोई नसीहत दीजिए। वे थोड़ी देर तो चुप रहे। फिर जलाल में बोले कि चारों तरफहम ही हैं ; नसीहत किसे दें ! इन सब में हम ही हैं। (यानी कि वे परम सत्ता में वय हो चुके थे।) जलाल उतरने पर वापस खामोश हो गए। ...उनका देहांत हो जाने के बाद हाफिज साहेब ने उनका जल संस्कार किया - अर्थी को बेतवा नदी के प्रवाह पर रख दिया। काठी डूबी नहीं ; पानी पर तिरती रही और बहुत दूर जा कर नदी के भंवर में समा गई।

12. उवैसिया रूहानी सत्संग आश्रम

अजमेर। ब्यावर रोड तबीजी गांव। डूमाड़ा रोड यहीं है, उवैसिया रूहानी सत्संग आश्रम। गुरुदेव ने बनवाया। ढ़ाई तीन बीघा जमीन पर नयनाभिराम आश्रम है। इसकी धड़कन है ध्यान या सत्संग कक्ष। पीर साहब यहीं बैठते थे, रहते थे, साधना करते थे, रूहानी यात्राएं करते थे। आज यही सत्संग कक्ष आप का आस्ताना है। .. सत्संग कक्ष से लगा हुआ है बड़ा महफिलखाना। यहां महफिल होती है व अन्य सारे कार्यक्रम होते हैं। अब सत्संग कक्ष के सामने ही रामदत्त जी महाराज का आस्ताना भी है। परिसर में गुरुदेव की धर्मपत्नी श्रीमती सुशीला देवी का मंदिर है। ..परिसर में आधुनिक सुविधाओं वाला गेस्ट हाऊस है। उर्स के दौरान बाहर से आने वाले श्रद्धालु यहां ठहरते हैं। उनके लिए खाने, नाश्ते की व्यवस्था रहती है। एक तरफ बड़ा रसोई घर एवं डायनिंग हॉल है। परिसर इतना बड़ा है कि उर्स का भण्डारा यहीं सम्पन्न हो जाता है। एक पुस्तकालय हैं लगभग डेढ हजार पुस्तकें हैं- वेद, पुराण, उपनिषद, गीता, कुरान, महाभारत, रामायण व संत साहित्य उपलब्ध है। बरसों से इस की देखभाल सुनील शर्मा कर रहे हैं। यहां गुरुदेव का ज्ञान धड़कता है। ..परिसर में ही पार्किंग है। विशाल बगीचा है। पेड़ पौधे हैं। यह पूरा आश्रम रूहानी चेतना से आपूरित है। यहां के अध्यक्ष गुरुदत्त मिश्रा हैं। ये सारी व्यवस्थाओं का प्रबंधन देखते हैं। भण्डारों व अन्य समारोहों का इंतजाम करते हैं। निर्माण कार्यों पर निगाह रखते हैं। खर्च का हिसाब रखना इनके ही जिम्मे है। यहां आने वाले जायरीनों के रहने व खाने का प्रबंध भी ये गुरु भैया ही करते हैं। ... इनके छोटे भाई प्रभुदत्त जी आश्रम में प्रति द्वितीय शनिवार को संध्या समय सत्संग एवं भजन का आयोजन करते हैं। ऐसे ही माह के चौथे शनिवार की शाम ध्यान भजन का कार्यक्रम सम्पन्न करते हैं।

13. हजरत रामदत्त मिश्रा 'उवैसी'

आप गुरुदेव के मंझले पुत्र थे। हमारे पीर साहब के पर्दा फरमाने के बाद आप ही गद्दीनशीन हुए। आप की धर्म पत्नी श्रीमती सुधा रानी मिश्रा हैं। आप पांच वर्ष रहे। उस समय लगता था कि जैसे प्रेम से भरा हुआ कोई दूधिया बादल आश्रम में रिमझिम बरस रहा है। मुस्कान का कोई झरना फूलों की घाटी को साथ लिये हुए आश्रम में आ गया है। उस वक्त यहां की हवा में उनका आश्वासन सरसराता था – जो मांगोगे, वही मिलेगा। जिस ने जो चाहा, दिया। मुंह से जो कह दिया, पूरा किया। यही कारण है कि आज वे हर मुरीद की आँख का नूर हैं।

आप को आरम्भ से ही गुरुदेव ने मंत्र, तंत्र, रूहानियत का प्रशिक्षण दिया। त्राटक कराए, चिल्ले कराए, साधना कराई, नियम संयम का अभ्यास कराया। रूहानी अदब सिखाया। रूहानी यात्राओं के दौरान सूक्ष्म जगत की बारीकियां समझाईं। अपने सिलसिले के बुजुर्गों से परिचित कराया।

गुरुदेव ने उन्हें कई शक्तियां बख्श दी थीं। वे मन की बात जान लेते थे। सूक्ष्म शरीर से मुरीदों के घर विचरण कर लेते थे। प्रेत बाधा का सफल निवारण कर देते थे। उनका कहा हुआ सच हो जाता था।

सब के साथ हंसते, खेलते, पिकनिक मनाते, पटाखे छुड़ाते, होली का रंग खेलते और रूहानी हाथों से गले लगा लेते थे। वे हजरत होते हुए भी सब के राम भैया थे। न राग, न द्वेष, न विशेष; सब के उन्मेष।

बहुत अच्छा गाते थे। हारमोनियम व तबला बजाने में उस्ताद थे। उनके उठते हुए आलाप में साधकों की रूह उठ जाती थी। तबले की थाप पर मुरीद झूमते थे। उनकी नजर में जलाल था। उनके वजूद में रूहानियत साकार थी। वह हादी था। रहीम था। असीम था।

एक बार शिव रात्रि के दिन कमाल किया। सब से तो हँसी मजाक कर रहे थे और मुझे आध्यात्मिक जानकारी उपलब्ध करा रहे थे। ऐसे ही एक गुरु पूनम के कार्यक्रम के दौरान मुझे कह दिया कि गुरु शिष्य परम्परा से सब को अवगत कराओ। ...आप प्रति रविवार सुबह कार सेवा कराते थे, किंतु मुझे नहीं करने देते; कह दिया कि आप आस्ताने में बैठो। एक बार ऐसा ही रविवार था। सब मुरीद कार

सेवा में व्यस्त थे। मैं उन के पास बैठा था। मुझे बुलाया; ललाट पर हथेली रखी और बोले कि - मैं जो कुछ दे सकता हूं, आप को आज दे दिया। उस रात की रूहानी अनुभूति मेरे जीवन का इतिहास बन गई।

बाबा बादाम शाह साहब के उर्स की महफिल चल रही थी। आधी रात के वक्त मुझे बुलाया; अपनी गद्दी के पास बिठाया; रुपए दिये और कहा कि कव्वालों को देते रहो। अन्दर रूहानी प्रवाह शुरू हो गया। इसी तरह गुरुदेव के पहले उर्स की मिलाद शरीफ चल रही थी। मैं सब से पीछे बैठा था। आप ने गद्दी पर बैठे-बैठे ही आवाज दी कि मेरे पास आ कर बैठो। गद्दी पर रज्जो चाचा, राम जी और गुरु भैया बैठे हुए थे। भैया ने मुझे भी गद्दी पर बिठाया। इतना सम्मान केवल हजरत रामदत्त जी ही दे सकते हैं।

आखिरी बार इलाज के लिए दिल्ली गए तो हर पल मेरे साथ जुड़े रहे। अंतिम समय का सारा दृश्य मुझे मानस पटल पर दिखाते रहे। जाने से कुछ माह पहले आप ने अनेक सावधानियां समझाईं थीं। ...पर्दा फरमाने के बाद कई हिदायतें देते रहे, लोगों के काम करते रहे।..... आप के आस्ताने की नींव खोदी जा चुकी थी। नींव का पत्थर रखने की तैयारी चल रही थी। मैं गुरुदेव के आस्ताने से बाहर आया और तभी आप ने एक आदेश किया; यादगार आदेश; मुझ पर परम करम।

एक एक्सीडेण्ट हुआ। मेरे दाहिने घुटने का दर्द ठीक नहीं हो रहा था। इबादत के लिए बैठने में दिक्कत होती थी। एक दिन बाबा हुजूर के गया हुआ था। आप रज्जो चाचा वाले कक्ष में थे। मुझे बुला कर बोले कि मेरी जांघ पर अपना पैर रखो। फिर घुटने पर हाथ फेरा। दर्द चला गया। ..उन्होंने खुद के साथ भी मेरी एकरूपता के मंजर दिखाए हैं; कई बार, रूहानी निर्देशों के साथ। वह मेरी गोपनीय सम्पदा है।

एक बार हुजूर के आस्ताने में मेरे पास बैठ गए। समाधि में स्वयं के साथ प्रवेश कराया। वहां दिव्य प्रकाश था, और कुछ नहीं। बाहर आने पर सब के सामने पूछा कि क्या देखा ? बताओ। ...हुजूर हाफिज साहब का दिन था। प्रसादी के लिए स्वयं के साथ ले गए। पंगत में बैठ गए। तभी मेरा ध्यान चढ़ा दिया एवं कहा - जो कुछ दिख रहा है वह सब को बताओ। रूहानियत में हाफिज साहब के मर्तबे का नजारा था। आप हर्षोल्लास का हंगामा करते रहे और अपने रूहानी वजूद को

छिपाए रहे। सूफी थे; उजागर नहीं हुए। काम सब के किये लेकिन खुद तो पर्दे में ही रहे।

आप ने गुरुदेव का आस्ताना बनवाया। महफिलखाने का नवीनीकरण कराया। त्रैमासिक पत्रिका 'आध्यात्मिक प्रकाश' आरम्भ की। आप तो प्रकाशन कार्य के लिए आश्रम में ऑफसैट मशीन लगाना चाहते थे; किंतु वक्त ने समय नहीं दिया। ..... 24 अपैल, 2013 को आप ने पर्दा कर लिया। मुरीद अवाक रह गए। आश्रम ने चीत्कार किया। चहेतों के रोदन से हवा सुबकने लगी। आसमान में एक क्रन्दन गूंजा – भैया इतने जल्दी क्यों चले गए ! उन के हर भण्डारे पर यह क्रन्दन आज भी सुनाई देता है और आश्रम का वजूद सुबकने लगता है।

14. यह एक क्रांति का इतिहास है

रूहानी पुरुष हर प्रसाद मिश्रा यानी अजमेर में एक आध्यात्मिक क्रांति । एक मुसलमान कलंदर बाबा बादाम शाह ने एक ब्राह्मण को अपना उत्तराधिकारी बनाया; अपनी सारी रूहानी शक्ति उस ब्राह्मण फकीर को दे दी। अपनी नजर से उसे सूफियत के ऊँचे मुकाम तक पहुंचाया यह इस आध्यात्मिक नगर की आधुनिक मिसाल है।... उन्नीसवीं सदी में ऐसी ही क्रांति रायपुर (उत्तरप्रदेश) में हुई थी - सूफी फकीर हुजूर महाराज फजल अहमद खां ने कायस्थ जाति के युवक मुंशी रामचंद्र को अपना खलीफा घोषित किया। एक राष्ट्रीय स्तर के समारोह में खुली चुनौती दी कि मैं इस हिंदू युवक को अपनी गद्दी सौंपना चाहता हूं । आप इस से शास्त्रार्थ कीजिए। फिर अपनी इच्छा जाहिर कीजिए। सब ने एक मत से हुजूर महाराज के निर्णय को स्वीकार किया। उस मुसलमान फकीर के पास ब्रह्म विद्या थी जो उन्होंने रामचंद्र जी महाराज को दी। उधर रामपुर में भी ऐसा हुआ। हजरत सुभानशाह ने अग्रवाल जाति के लक्ष्मणदास को अपनी गद्दी दी। उन दिनों जो भी मुल्ला मौलवी वहां शास्त्रार्थ करने आते थे, उन्हें आप लक्ष्मणदास जी के पास भेज देते थे। इस तरह रामपुर के मुस्लिम समाज में भी बाबा लक्ष्मणदास स्वीकार हो गए।

वापस अजमेर की बात। बाबा हुजूर ने मिश्रा जी के बड़े भाई श्री पुष्कर नारायण, छोटे भाई श्री फतह चंद एवं श्री रजनीकांत मिश्रा को भी दीक्षा दे कर रूहानियत में बहुत आगे बढाया। श्री आर सी शर्मा भी उनके मुरीद हैं। इस तरह ब्राह्मणों को आप ने फकीरी के सूत्र दिये।

बाबा हुजूर ने सोमलपुर वाले स्थान पर शिव मंदिर स्थापित किया था। उस शिव विग्रह में आगे चल कर आकाशीय बिजली से दरार आ गई। तब विग्रह बदल दिया गया। आध्यात्मिक क्रांति की एक और बात यह कि हुजूर श्रीकृष्ण को बहुत मानते थे। कहते थे कि हिंदुओं में ऐसा पूरा अवतार न तो पहले हुआ और न आगे होगा। उनके समय कृष्ण जन्माष्टमी व महाशिव रात्रि मनाई जाती थी।

गुरुदेव ने इस रूहानी क्रांति को आगे बढ़ाया। उन्होंने सूफी साधना पद्धति को ब्राह्मण, अग्रवाल व जैन समाज तक पहुंचाया। अधिकतर मुरीदों को उनके इस्मै आजम के अनुसार सूफी मंत्र दिये। ये मुरीद आयते करीमा, दरुद शरीफ, अल्हम्दु और ' अल्लाह् हुस्मद' का पाठ करते हैं। ऐसे ही गुरु ओम तत्सत्, ओम

नमः शिवाय, हरि ओम तत्सत्, णमोकार मंत्र आदि का पाठ भी किया जाता है। यहां सूफी साधना, सहज योग, ध्यान योग, नाद योग एवं तंत्र साधना का समन्वय है।

मेरे पीर साहब ने मुझे वैष्णव मंत्र की साधना चर्च में, सूफी मंत्र का जाप मंदिर में और णमोकार मंत्र की साधना दरगाह में कराई । आप की प्रेरणा से मैंने हुजूर के आस्ताने में नाद योग का अभ्यास किया। आप सूफी थे लेकिन गीता के श्लोकों के अर्थ आप ने ही समझाए। मैंने आयते करीमा, दरुद शरीफ, कलमा, णमोकार मंत्र एवं वैष्णव मंत्र के जाप साथ-साथ भी किये - एक ही सिटिंग में क्रमशः। नवरात्रा की साधना के साथ चिल्ला भी किया- यह आध्यात्मिक क्रांति ही है।

जहां हिंदू स्त्रियां करवा चौथ का व्रत एक सूफी फकीर का मुंह देख कर पूरा कर लें, वह रुहानी क्रांति ही है। जब विवाह के कार्ड पर गणेश जी के साथ बाबा बादाम शाह का नाम भी लिखा जाए तो उसे आंतरिक क्रांति ही कहेंगे। जब घर वाली पूजा की ताक में राम कृष्ण के साथ मुसलमान फकीरों को भी विराजमान किया जाए तो सिद्ध हो जाता है कि गुरुदेव एक क्रांति पुरुष थे। यह उन्हीं का प्रभाव है कि ब्राह्मण, अग्रवाल, जैन व राजपूत घरों में उनके देवी-देवताओं के साथ अब सूफी फकीरों की भी पूजा होने लगी है। यह क्रांति है। हम दरगाह में जा कर होली दीवाली की राम राम करते हैं, यह क्रांति है। शादी के बाद वर वधू को अपने देवी देवताओं के स्थान पर ले जाने के बाद यहां दरगाह में भी लाते हैं, यह क्रांति है। हम अपनी समस्याओं के समाधान के लिए खानदानी देवी देवताओं के साथ फकीरों की मजार पर सिर झुकाने लगे हैं, यही क्रांति है।

एक बदलाव शुरू हो गया है - हम माता के चूंदड़ी चढ़ाते हैं तो मजार पर चादर भी पेश करना सीख गए हैं। देवताओं के भोग भी लगाते हैं और फातिहा में भी यकीन करने लगे हैं। अपने देवी देवताओं के तिथि वार की तरह गुरुवार को याद रखने लगे हैं। लेकिन क्या ऐसी तब्दीली के साथ हमारा आंतरिक जुड़ाव है ? अथवा कुलीय संस्कारों में ही परिवर्तन आ रहा है! रूहानी स्तर पर तो कोई भेद है ही नहीं किंतु सवाल तो दुनियावी स्तर पर है।

हमारे आश्रम में ब्राह्मण फकीर, गुरुदेव तथा उनके पुत्र हजरत रामदत्त जी को दफनाया गया है; पिता पुत्र की मजार है। उधर आश्रम में हिंदू त्यौहार व पर्व मनाये जाते हैं। यह सामाजिक सद्भाव की साक्षात मिसाल है।

इस तरह गुरुदेव ने एक तरफ रूहानी पुरुष वाली ऊंचाई का स्पर्श किया तो दूसरे स्तर पर सूफीयत को हमारे समाज के अनुकूल रंगत दी । भण्डारे में हिन्दू-मुसलमान एवं अन्य जाति के लोग एक ही पंगत में बैठ कर प्रसादी ग्रहण करते हैं; - यह सांस्कृतिक वैश्वीकरण की दिशा में चलाया गया रूहानी अभियान है।

गुरु ओ३म् तत्सत् !